अप्रैल, 2018

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रस्तावित संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक : श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

परामर्शदाता : सर्वश्री दयाल चन्द्र ग्रोवर, महमूद अली खां और विनोद कुमार आर्य

ISSN- 2457-0486

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

© 2018 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

1. प्रकाशन नियंत्रक, भारत सरकार, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054.
2. प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0486

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

अप्रैल, 2018 अंक - 4

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक
असलम खान

(2018) 1 दा. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

विक्रय कार्यालय : 1. प्रकाशन नियंत्रक, भारत सरकार, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054.
2. सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

समाज में शान्ति बनाए रखने के लिए, निःसंदेह, धर्म-गुरुओं का योगदान चला आ रहा है किन्तु यह पर्याप्त नहीं है । प्रत्येक नागरिक को चाहिए कि वह स्वयं को देश का एक ईमानदार सिपाही समझते हुए प्रत्येक देशवासी की यथा-संभव रक्षा करे । कार्यपालिका का कर्तव्य है कि वह विधि का उल्लंघन करने वालों को न्यायपालिका के समक्ष प्रस्तुत करे और दोषी पाए जाने पर दंड अधिरोपित किए जाने में न्यायालय के आदेश का पालन करे । हमारा समाज एक ओर विकास के लिए अग्रसर है तो दूसरी ओर कानून के साथ खिलवाड़ करने वाले दुराचारियों से भी जूझ रहा है । अपराधी अपराध करते समय ऐसी दानवता को पहुंच जाता है कि वह पाप और पुण्य के भेद को भी नहीं समझ पाता । समाज के नारी जैसे दुर्बल वर्ग को मान-मर्यादा को भी पैरों तले रौंदता है और यह देखकर तो मन को और अधिक ठेस पहुंचती है जब किसी मानसिक रूप से अशक्त नारी भी ऐसे पैशाचिक लक्षण वाले पुरुषों की वासना का शिकार हो जाती है । ऐसे व्यक्तियों के कृत्यों पर अंकुश लगाने और उन्हें दंडित करने में न्यायालयों की विशेष भूमिका है । ऐसे मामलों में, दुर्भाग्यवश, कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी मुश्किल से ही मिल पाता है और अभियुक्त इसी का अनुचित लाभ उठाकर कानून की पकड़ से बच निकलते हैं । इसलिए, न्यायालय को विधि के अनुपालन के साथ-साथ न्याय की जीत पर भी ध्यान देना होता है और प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के न होते हुए भी यदि अपराध अन्य साक्ष्य से साबित होता हो तो अभियुक्त को ऐसे मामले में मात्र अभियोक्त्री के कथन के आधार पर दोषसिद्ध किया जा सकता है । इस स्थिति को स्पष्ट करने के लिए **बुतुरू मुंडा** उर्फ **बिरसा और अन्य** बनाम **ओडिशा राज्य** (2018) 1 दा. नि. प. 449 वाला मामला एक सटीक उदाहरण है ।

हमारे देश में अधिकांशतः संयुक्त परिवार पाए जाते हैं जो साथ-साथ मिलकर रहते हैं किन्तु कभी-कभी पारिवारिक मन-मुटाव विकराल रूप ले लेता है और मनुष्य न चाहते हुए भी ऐसा अपराध कर बैठता है जिसे करने के लिए उसने कभी नहीं सोचा था । ऐसे मामलों में न्यायालयों को बहुत सूक्ष्मता से साक्ष्य का मूल्यांकन करना होता है कि वास्तव में अभियुक्त किस अपराध का दोषी है । जब अभियुक्त आवेग की तीव्रता में पूर्व चिन्तन के बिना किसी व्यक्ति की मृत्यु कारित करने का अपराध कर बैठता है तो वह हत्या का नहीं अपितु हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के

अपराध का दोषी होता है । इस संबंध में **राम रतन सूर्यवंशी** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** (2018) 1 दा. नि. प. 473 वाला मामला एक अच्छा उदाहरण है ।

इस अंक में सामाजिक महत्व के कई मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है । यह अंक विधि विद्यार्थियों, वकीलों, न्यायाधीशों, विधि अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले लोगों के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी है ।

इस अंक में केन्द्रीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 2009 को भी प्रकाशित किया जा रहा है जिसका भी आप परिशीलन करें और अपने अमूल्य सुझावों से अवगत कराएं ।

असलम खान
संपादक

निर्णय-सूची

पृष्ठ संख्या

अनिरुद्ध बहल **बनाम** मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 527)

आशुतोष **बनाम** मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 527)

नारायण सिंह चौहान **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 570)

बुतुरू मुंडा **उर्फ** बिरसा और अन्य **बनाम** ओडिशा राज्य 449

भोज राज **उर्फ** मुखी सिंधी **बनाम** राजस्थान राज्य 515

रमेश कुमार मधोक (डा.) **बनाम** राजस्थान राज्य 501

राजदीप सरदेसाई **बनाम** मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 527)

राम रतन सूर्यवंशी **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य 473

श्रवण कुमार **बनाम** राजस्थान राज्य 487

सतेन्द्र सिंह नेगी **बनाम** उत्तराखण्ड राज्य 467

सी.एन.एन.-आई.बी.एन. 7 (मैसर्स) **बनाम** मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य 527

हिकमत बहादुर **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य 570

संसद् के अधिनियम

केन्द्रीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 2009 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 1 – 32

पृष्ठ संख्या

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 190, 192 और 204 – अपराध का संज्ञान – अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी – चिकित्सा उपेक्षा – अभियुक्त डाक्टर के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाह कार्डियोलाजी प्रमुख के रूप में करते हुए रोगी पीड़िता का उपचार किया जाना अभियुक्त डाक्टर के कार्यों का केवल शासकीय कर्तव्य के भाग रूप में अर्थान्वयन किया जा सकता है – ऐसे अभियुक्त डाक्टर के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने से पूर्व राज्य से अभियोजन चलाने की मंजूरी लेना अपेक्षित है ।

रमेश कुमार मधोक (डा.) बनाम **राजस्थान राज्य** 501

– धारा 202 – आदेशिका के जारी किए जाने का मुल्तवी किया जाना – जहां मजिस्ट्रेट द्वारा समन पूर्व प्रक्रम पर परिवादी और उसके साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए हैं, वहां यह स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा जांच की कोटि में आता है और उसके लिए पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण के लिए मामला भेजना कतई आवश्यक नहीं है, अतः विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा संहिता की धारा 202 के अधीन अनुध्यात प्रक्रिया का सम्यक् पालन किया गया है, इसलिए एकमात्र इस आधार पर परिवाद को अभिखंडित नहीं किया जा सकता ।

सी.एन.एन.-आई.बी.एन. 7 (मैसर्स) बनाम **मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य** 527

– धारा 357, 357क और 357ख – सामूहिक बलात्संग की आहत महिला को प्रतिकर दिया जाना – आहत का मानसिक रूप से अशक्त होना – राज्य सरकार द्वारा आहत को संदेय प्रतिकर उसको दी जाने वाली जुर्माने की रकम में जोड़ा जाएगा ।

बुतुरू मुंडा उर्फ **बिरसा और अन्य** बनाम **ओडिशा राज्य** 449

पृष्ठ संख्या

– धारा 482 – उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति – यदि परिवाद में उपवर्णित अभिकथन ऐसे अपराध का गठन नहीं करते जिसके लिए मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया गया है तो मजिस्ट्रेट धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए, उच्च न्यायालय, इस आदेश को अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है ।

सी.एन.एन.-आई.बी.एन. 7 (मैसर्स) बनाम **मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य** 527

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302 [भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 और 32] – हत्या – मृत्युकालिक कथन – विश्वसनीयता – मृतक पर मिट्टी का तेल उंडेल कर आग लगाए जाने का अभिकथन – स्वस्थता प्रमाणपत्र प्राप्त किए जाने के पश्चात् मजिस्ट्रेट द्वारा मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जाना – चिकित्सीय साक्ष्य से आग में जलने से हुई मृत्यु की पुष्टि होना – चिकित्सक ने यह स्वीकार किया है कि मजिस्ट्रेट द्वारा मृतक का कथन तब अभिलिखित किया गया था जब स्वस्थता प्रमाणपत्र जारी कर दिया गया था, चिकित्सा बोर्ड द्वारा स्पष्ट किया गया है कि मृतक को पहुंची दाह क्षतियां गंभीर प्रकृति की हैं जिनके कारण मृत्यु हुई है तथा मृतक और अभियुक्त के बीच धन संबंधी संव्यवहार को लेकर झगड़ा भी हुआ था, अतः इन परिस्थितियों में विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए दोषसिद्धि के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

भोज राज उर्फ **मुखी सिंधी** बनाम **राजस्थान राज्य** 515

– धारा 302 [सपठित भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 व भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3] – पारिस्थितिक साक्ष्य – यह अभिकथित किया जाना कि

पृष्ठ संख्या

अभियुक्त द्वारा बंदूक की गोली से क्षति कारित करके मृतक की हत्या की गई – साक्षियों के साक्ष्य से अभियुक्त द्वारा मृतक की हत्या किया जाना साबित न हुआ हो तथा हत्या को साबित करने के लिए पारिस्थितिक साक्ष्य की शृंखला पूरी नहीं होती है तो अभियुक्त दोषमुक्त होने का हकदार है ।

हिकमत बहादुर बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 570

– धारा 302 [सपठित आयुध अधिनियम की धारा 2क] – स्वर्णिम सिद्धांत – आपराधिक मामले – जहां मामले में दो मत संभव हैं और एक मत अभियुक्त की दोषिता को इंगित करता है तथा दूसरा मत अभियुक्त की निर्दोषिता दर्शाता है, वहां पर अभियुक्त के अनुकूल मत को अंगीकार किया जाना चाहिए ।

हिकमत बहादुर बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 570

– धारा 302 और 304, भाग II – हत्या और हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध – अन्तर – गंभीर और अचानक प्रकोपन – अभियुक्तों द्वारा आवेग की तीव्रता में कृत्य किया जाना – पूर्व-चिन्तन का अभाव – झगड़ा मृतक और अपीलार्थियों के बीच आवेग की तीव्रता में एक तुच्छ मुद्दे को लेकर अचानक हुआ है और मृतक पर डंडे से केवल एक ही वार किया गया है, ऐसी स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थियों द्वारा कोई सम्यक् लाभ उठाया गया है या क्रूरतापूर्ण कार्य किया गया है, अतः अपीलार्थी हत्या के नहीं अपितु हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के दोषी हैं ।

राम रतन सूर्यवंशी बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 473

– धारा 302, 458 और 392 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 और 24] – हत्या, लूट और

पृष्ठ संख्या

गृह अतिचार का अभिकथन – साक्ष्य का मूल्यांकन – घटना के समय घटनास्थल पर अभियुक्त की मौजूदगी को लेकर असंगत साक्ष्य – साक्ष्य की शृंखला का अपूर्ण होना – प्रत्यक्षदर्शी साक्षी ने इस बात से इनकार किया है कि उसने अपीलार्थी को घटना की रात में मृतका के मकान के बाहर देखा था और इसके अतिरिक्त अपीलार्थी का सूचना पाकर तुरन्त घर वापस आना अप्राकृतिक नहीं कहा जा सकता और न ही उस पर संदेह किया जा सकता है जिससे उसके विरुद्ध साक्ष्य की शृंखला अपूर्ण दिखाई देती है, अतः अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषमुक्ति में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

श्रवण कुमार बनाम **राजस्थान राज्य** 487

– धारा 304क और धारा 302 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 190 और 204] – अपराध का संज्ञान – अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी – मामले में यह अभिकथन किया जाना कि चिकित्सा उपेक्षा के कारण रोगी की मृत्यु हुई – यदि अस्पताल के विभागाध्यक्ष की राय में अभियुक्त डाक्टर द्वारा रोगी का उपचार करने में कोई उपेक्षा नहीं बरती गई और उपचार से रोगी के कोई प्रतिक्रिया देखने में नहीं मिलती है, परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो जाती है तो अभियुक्त डाक्टर के बारे में रोगी के उपचार में उपेक्षा बरतना नहीं कहा जा सकता है ।

रमेश कुमार मधोक (डा.) बनाम **राजस्थान राज्य** 501

– धारा 304क – जहां मजिस्ट्रेट द्वारा सही परिप्रेक्ष्य में चिकित्सा असावधानी के मामले की परीक्षा करने में विफलता बरती गई और प्रथमदृष्ट्या चिकित्सा उपेक्षा का मामला प्रकट नहीं हुआ है वहां पर राज्य सरकार द्वारा अभियुक्त डाक्टर पर अभियोजन को चलाने की मंजूरी न देने के बावजूद भी मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त डाक्टर के विरुद्ध

पृष्ठ संख्या

अपराध का संज्ञान लेने का आदेश अपास्त किया जाता है ।

रमेश कुमार मधोक (डा.) बनाम **राजस्थान राज्य** 501

– धारा 323 – स्वेच्छया उपहति – आहत द्वारा प्रतिरोध किए जाने के दौरान उपहति कारित होना – चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि – आहत का साक्ष्य संगत पाया जाना – बलात्संग किए जाने के दौरान आहत द्वारा किए गए प्रतिरोध के कारण अपीलार्थियों ने उसे क्षतियां पहुंचाई हैं जिनकी पुष्टि चिकित्सीय साक्ष्य से होती है, इसीलिए अपीलार्थी धारा 323 के अधीन अपराध के दोषी हैं ।

बुतुरू मुंडा उर्फ **बिरसा और अन्य** बनाम **ओडिशा राज्य** 449

– धारा 376 (2)(1) और धारा 376घ [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 119] – मानसिक रूप से अशक्त महिला के साथ सामूहिक बलात्संग – आहत के गुप्तांगों को छोड़कर अन्य कई अंगों पर क्षति कारित होना – आहत की बहिन के साक्ष्य और चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि – अपीलार्थी मैथुन करने के लिए शारीरिक रूप से सक्षम पाए गए हैं, आहत की गर्दन और दोनों हाथों में क्षतियां पाई गई हैं और आहत पूर्ण रूप से वयस्क महिला है जिसकी प्रविष्टि की दृष्टि से योनिक क्षमता दो उंगलियों के बराबर है, इसलिए गुप्तांगों पर क्षति के न पाए जाने से बलात्संग की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता और साथ ही आहत के साक्ष्य की संपुष्टि उसकी चचेरी बहिन के साक्ष्य और चिकित्सीय साक्ष्य से भी होती है, इसलिए अपीलार्थियों की दोषसिद्धि कायम रखे जाने योग्य है ।

बुतुरू मुंडा उर्फ **बिरसा और अन्य** बनाम **ओडिशा राज्य** 449

पृष्ठ संख्या

– धारा 376 और 53 – बलात्संग – दंड में समुचित कमी – अभियुक्त द्वारा एक वर्ष तक निरन्तर बलात्संग किया जाना – आहत द्वारा अपने परिवार को अपराध के बारे में न बताया जाना – आहत का अभियुक्त के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन करना – उज्ज्वल भविष्य की आशा से आहत द्वारा प्रतिरोध न किया जाना – आहत के साथ आरंभ में उसकी इच्छा के विरुद्ध बलात्संग किया गया किन्तु बाद में आहत ने विरोध करना बंद कर दिया और अवसर मिलने के बावजूद अभियुक्त से बचकर भागने का कोई प्रयास नहीं किया जिससे उसकी सम्मति स्पष्ट होती है, अतः अभियुक्त को कम दंड देना न्यायोचित होगा ।

सतेन्द्र सिंह नेगी बनाम **उत्तराखण्ड राज्य** 467

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 65ख – द्वितीयक साक्ष्य के साथ प्रमाणपत्र का दिया जाना – जहां सी.डी.आर. धारा 65क के अधीन ग्राह्य नहीं है और परिवाद में मानहानिकारक सामग्री के प्रकाशन में प्रत्येक याची द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है और संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित कथन तथा परिवाद में भी ऐसा उल्लेख नहीं है, वहां मात्र प्रसारण कंपनी का प्रभारी होने के आधार पर आदेशिका जारी किया जाना वैधतः न्यायसंगत नहीं है और न ही विधि की दृष्टि से संधार्य है ।

सी.एन.एन.-आई.बी.एन. 7 (मैसर्स) बनाम **मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य** 527

बुतुरू मुंडा उर्फ बिरसा और अन्य

बनाम

ओडिशा राज्य

तारीख 21 नवंबर, 2017

न्यायमूर्ति (डा.) डी. पी. चौधरी

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376 (2)(1) और धारा 376घ [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 119] – मानसिक रूप से अशक्त महिला के साथ सामूहिक बलात्संग – आहत के गुप्तांगों को छोड़कर अन्य कई अंगों पर क्षति कारित होना – आहत की बहिन के साक्ष्य और चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि – अपीलार्थी मैथुन करने के लिए शारीरिक रूप से सक्षम पाए गए हैं, आहत की गर्दन और दोनों हाथों में क्षतियां पाई गई हैं और आहत पूर्ण रूप से वयस्क महिला है जिसकी प्रविष्टि की दृष्टि से योनिक क्षमता दो उंगलियों के बराबर है, इसलिए गुप्तांगों पर क्षति के न पाए जाने से बलात्संग की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता और साथ ही आहत के साक्ष्य की संपुष्टि उसकी चचेरी बहिन के साक्ष्य और चिकित्सीय साक्ष्य से भी होती है, इसलिए अपीलार्थियों की दोषसिद्धि कायम रखे जाने योग्य है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 323 – स्वेच्छया उपहति – आहत द्वारा प्रतिरोध किए जाने के दौरान उपहति कारित होना – चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि – आहत का साक्ष्य संगत पाया जाना – बलात्संग किए जाने के दौरान आहत द्वारा किए गए प्रतिरोध के कारण अपीलार्थियों ने उसे क्षतियां पहुंचाई हैं जिनकी पुष्टि चिकित्सीय साक्ष्य से होती है, इसीलिए अपीलार्थी धारा 323 के अधीन अपराध के दोषी हैं ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 357, 357क और 357ख – सामूहिक बलात्संग की आहत महिला को प्रतिकर दिया जाना – आहत का मानसिक रूप से अशक्त होना – राज्य सरकार द्वारा आहत को संदेय प्रतिकर उसको दी जाने वाली जुर्माने की रकम में जोड़ा जाएगा ।

अभियोजन पक्षकथन से संबंधित तथ्य इस प्रकार हैं कि आहत महिला जो कि वयस्क है, तारीख 15 जनवरी, 2014 को अपने नातेदार के साथ मेला देखने गई थी । अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि जब आहत मकर पर्व पर मेले के मैदान में नृत्य कर रही थी तब एक अपराधी ने उसे उस स्थान पर बुलाया जहां पर वर्तमान अभियुक्त पहले से मौजूद थे । यह भी अभिकथन किया गया है कि आहत आंशिक रूप से मानसिक मूक महिला है । सभी अपीलार्थियों ने, जिनमें एक किशोर भी है, अपने सामान्य आशय को अग्रसर करने में आहत महिला को उठाकर जंगल की ओर ले गए जहां उन्होंने उसके साथ सामूहिक बलात्संग किया । इतना ही नहीं, उन्होंने आहत महिला पर हमला भी किया । बलात्संग के पश्चात्, सभी अभियुक्त घटनास्थल से भाग गए । इसके पश्चात्, आहत महिला अपनी बहिन के घर वापस आई और अपने नातेदारों को इस घटना के बारे में बताया । इसके पश्चात् उसके नातेदारों ने आहत महिला के माता-पिता को सूचित किया । तारीख 18 जनवरी, 2014 को, शिकायतकर्ता ने लिखित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । अभियोजन पक्ष का यह भी पक्षकथन है कि अन्वेषण आरंभ होने के पश्चात्, पुलिस ने आहत महिला सहित साक्षियों की परीक्षा की और अभियुक्तों के साथ उस महिला को भी चिकित्सा परीक्षा के लिए भेज दिया । पुलिस ने आहत महिला और अभियुक्तों के पहने हुए कपड़े अभिगृहीत किए । इस प्रकार बरामद किए गए सामान को रासायनिक परीक्षण के लिए भेज दिया गया । अन्वेषण पूरा होने के पश्चात्, पुलिस ने आरोप पत्र प्रस्तुत किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् वर्तमान अपीलार्थियों को आहत महिला के साथ बलात्संग करने और उस पर जानबूझकर उपहति कारित करने का दोषी पाया और उन्हें कारावास भोगने के लिए दोषसिद्ध किया । इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थियों ने उड़ीसा उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभि. सा. 11 के साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि उसने अपीलार्थियों की परीक्षा कराई और यह निष्कर्ष निकाला कि वे मैथुन करने हेतु शारीरिक रूप से सक्षम है । इस साक्षी ने प्रदर्श 5, 6 और 7 साबित किए हैं । अपराध कारित करने में अपीलार्थियों का शारीरिक रूप से सक्षम होना अभियोजन पक्षकथन की संपुष्टि करता है । अभि. सा. 3 के कथन से, जो लगभग 30 वर्ष की आहत महिला है, यह प्रतीत होता है कि वह मूक महिला है और एक आदिवासी मुंडा समुदाय की है । इसलिए, विचारण

न्यायालय ने आहत के ही ग्राम के रहने वाले अनुवादक से सहायता ली है । ऐसा प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा परिकल्पित प्रक्रिया का अनुसरण अर्धमूक साक्षियों की परीक्षा करने में किया है । अभि. सा. 3 के अनुसार, जब वह मकर पर्व देखने गई थी तब उसके ग्राम कुन्जापानी के एक लड़के ने आहत को बुलाया और उसे एक अलग स्थान पर ले गया जहां पहले से वर्तमान अपीलार्थी मौजूद थे । वे बलपूर्वक उसे जंगल में भीतर की ओर ले गए । आहत ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि इन अपीलार्थियों ने उसे बलपूर्वक जमीन पर लिटाया, उस पर हमला किया और उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया । बलात्संग के पश्चात् वे घटनास्थल से चले गए और बलात्संग के पश्चात् वह ठीक प्रकार चलने की स्थिति में नहीं थी । इसके पश्चात् वह अपनी बहिन के घर आई और घटना के बारे में बताया । अपनी प्रतिपरीक्षा के पैरा 3 में इस साक्षी ने घटना के ब्यौरे दिए हैं । इस साक्षी के अनुसार, अपीलार्थी बुतुरू मुंडा ने सबसे पहले उसके साथ बलात्संग किया और उसके तुरन्त पश्चात् अन्य दो अभियुक्तों ने एक-एक करके उसके साथ बलात्संग किया । यह कथन किया गया है कि अभियोक्त्री के दोनों हाथों और गर्दन में क्षतियां कारित हुई थीं यद्यपि उसने अपीलार्थियों की पकड़ से भागने का प्रयास किया था किन्तु वह ऐसा कर न सकी और उसका प्रयास असफल हो गया । प्रतिपरीक्षा में प्रतिरक्षा पक्ष ने अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य से कोई भी महत्वपूर्ण लोप स्पष्ट नहीं किया है ताकि उसके परिसाक्ष्य को त्यक्त किया जाता । दूसरी ओर, प्रतिरक्षा पक्ष प्रतिपरीक्षा के दौरान किसी भी प्रकार से अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य को विचलित नहीं कर सका है । अतः, अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य में किसी भी प्रकार की कोई भी शिथिलता या खामी नहीं है । इस प्रकार, अभि. सा. 3 का कथन स्पष्ट और संगत है जिससे यह दर्शित होता है कि बलात्संग का अपराध साबित करने के लिए अभियोक्त्री पूर्णतया विश्वसनीय और सच्ची साक्षी है । अभि. सा. 2 अभियोक्त्री की चचेरी बहिन है और घटना के दौरान वह अभियोक्त्री के घर पर ठहरी हुई थी । अभि. सा. 2 के अनुसार मकर के पर्व पर आहत अपने पति (अभि. सा. 1) के साथ मेला देखने गई थी । घटना के अगले दिन आहत (अभि. सा. 3) वापस आई और उसने अभि. सा. 2 को बताया कि अपीलार्थियों ने उसके हाथों पर हमला करने के पश्चात् उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया है । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह स्वीकार किया है कि घटना के पश्चात् आहत अपने पैतृक गृह गई हुई थी और सायंकाल अभि. सा. 2 को घटना के बारे में बताया । चूंकि आहत

महिला मूक और मानसिक रूप से अशक्त है, इसलिए अभि. सा. 2 को देरी से सूचना दिए जाने से अभियोजन पक्षकथन पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है किन्तु वास्तविकता यह है कि घटना के संबंध में अभि. सा. 2 के साक्ष्य की संपुष्टि अभि. सा. 3 के कथन से होती है । आहत महिला की माता अर्थात् अभि. सा. 6 के कथन से यह प्रकट होता है कि घटना के दिन अभि. सा. 1, अभि. सा. 3 को मकर मेला दिखाने ले गया था । अभि. सा. 6 को इत्तिलाकर्ता को यह सूचना मिली कि अपीलार्थियों ने उसकी पुत्री (अभि. सा. 3) के साथ बलात्संग किया है । इसके पश्चात् उसने और अभि. सा. 1 ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । स्वीकृततः, अभि. सा. 1 अभि. सा. 6 का दामाद है । वास्तविकता यह है कि इस बात में थोड़ा संदेह प्रतीत होता है कि अभि. सा. 3 ने अभि. सा. 6 को घटना के बारे में क्यों नहीं बताया । इस संबंध में, अभि. सा. 6 की प्रतिपरीक्षा में कोई बात नहीं पूछी गई है । इसके अतिरिक्त, चूंकि यह एक आदिवासी समाज है, इसलिए, इसके प्रत्येक व्यक्ति से सामान्य रूप से मुश्किल से ही यह प्रत्याशा की जा सकती है कि उसे घटना के तथ्य और परिस्थितियों की जानकारी हो । इसके अतिरिक्त, किसी घटना के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिक्रिया एक जैसी नहीं हो सकती अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति भिन्न प्रकार से प्रतिक्रिया करता है । दूसरी ओर, अभि. सा. 6 के कथन से अभियोजन पक्षकथन की इस संबंध में पुष्टि होती है कि आहत महिला इत्तिलाकर्ता के साथ मकर मेला देखने गई थी । चूंकि प्रदर्श 4 से स्पष्ट रूप से बाह्य क्षतियों के संबंध में पता चलता है, इसलिए, बलात्संग के संबंध में इस बात से आहत (अभि. सा. 3) के साक्ष्य की संपुष्टि पर्याप्त रूप से होती है । चिकित्सक के कथन का सत्यापन प्रदर्श 8 के साथ करने पर यह प्रतीत होता है कि अभियोक्त्री एक पूरी तरह वयस्क महिला है जिसकी प्रविष्टि की दृष्टि से योनिक क्षमता दो उंगलियों के बराबर है, इसलिए उसके गुप्तांगों पर किसी भी क्षति के न पाए जाने से बलात्संग की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता जिससे निःसंदेह अभि. सा. 3 की संपुष्टि होती है और इस संबंध में मोदीज मेडिकल ज्यूरिस्प्रूडेंस, बीसवां संस्करण, पृष्ठ 337 का अवलंब लिया गया है जिसमें यह उल्लिखित है कि योनिच्छद के विदीर्ण हुए बिना भी बलात्संग किए जाने की संभावना हो सकती है, यदि योनि द्वार इतना विकसित है कि उसमें दो उंगलियां सुगमतापूर्वक प्रविष्ट की जा सकती हैं । इसके अतिरिक्त, उसकी दाईं जंघा और गाल तथा शरीर के अन्य अंगों पर पाई गई क्षतियों पर विचार उसके गुप्तागों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए । इसलिए, आहत महिला के गुप्तांगों

पर किसी भी क्षति के न पाए जाने से बलात्संग की संभावना को पूर्णरूप से नकारा नहीं जा सकता जबकि आहत के शरीर पर पाई गई बाह्य क्षतियों से यह पता चलता है कि उसके साथ बलपूर्वक मैथुन किया गया है । निःसंदेह, चिकित्सक के साक्ष्य से यह भी पता चलता है कि आहत महिला ठीक प्रकार उत्तर देने में सक्षम नहीं थी जिस पर चिकित्सक ने उसे आंशिक रूप से मानसिक रोगी पाया । चूंकि आहत महिला के शरीर पर बाह्य क्षतियां पहुंची थीं और वह असहनीय सामूहिक बलात्संग का शिकार हुई थी, जैसा कि उसने कथन किया है, उसका चिकित्सक के समक्ष मौन बने रहना अभियोजन पक्षकथन को नकार नहीं सकता किन्तु इस पर विचार करना न्याय में सहाय्य होगा कि आहत महिला को न केवल क्षतियां पहुंची थीं अपितु ऐसे जघन्य अपराध के पश्चात् उसे मानसिक आघात भी पहुंचा है । बहरहाल, चिकित्सक के साक्ष्य से आहत के कथन की संपुष्टि पूरी तरह से होती है कि अपीलार्थियों द्वारा उसके साथ बलात्संग किया गया है । इस प्रकार, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश की एतद्द्वारा पुष्टि की जाती है क्योंकि इस न्यायालय को विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । (पैरा 14, 15, 17, 18, 22 और 26)

विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष निकाला है कि अपीलार्थियों ने आहत के साथ बलात्संग कारित किया है और हम इस निष्कर्ष से किसी भी प्रकार असहमत नहीं हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 376(2)(1)/376घ/323 के अधीन दोषसिद्ध किया है । चूंकि यह घटना तारीख 15 जनवरी, 2014 की है जो कि 2013 में दंड संहिता की धारा 376 में संशोधन किए जाने के बाद की है, इसलिए, उन अपराधों पर, जिनके अधीन दोषसिद्धि अभिलिखित की गई है, चर्चा की जानी चाहिए । दंड संहिता की धारा 376(2)(1) के अधीन यह उपबंध किया गया है कि जो कोई मानसिक या शारीरिक रूप से पीड़ित महिला के साथ बलात्संग कारित करता है, वह 10 वर्ष से अनधिक कारावास से जिसकी अवधि आजीवन कारावास तक हो सकेगी और जुर्माने से भी दंडनीय होगा । इसी प्रकार, धारा 376घ के अधीन सामूहिक बलात्संग निर्दिष्ट किया गया है और प्रत्येक अपराधी कठोर कारावास से दंडनीय होगा जिसकी अवधि 20 वर्ष से कम नहीं होगी और आजीवन कारावास तक हो सकेगी किन्तु आजीवन कारावास का अर्थ उस व्यक्ति के स्वाभाविक शेष जीवन की

अवधि है और वह व्यक्ति जुर्माने से भी दंडनीय होगा । चूंकि प्रत्येक अपीलार्थी ने आहत महिला के साथ बलात्संग कारित किया है जो कि अर्ध-मूक है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से उसके आंशिक असामान्य होने का पता चलता है, इसीलिए, दंड संहिता की धारा 376(2)(1) के अधीन दोषसिद्धि से इनकार नहीं किया जा सकता । इसी प्रकार, अपीलार्थियों ने एक-एक करके अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया है, इसीलिए, दंड संहिता की धारा 376घ के अधीन कारित किए गए सामूहिक बलात्संग से इनकार नहीं किया जा सकता । इस प्रकार, अभियोजन पक्ष द्वारा दोनों अपराध भलीभांति साबित किए गए हैं । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 11 के साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि अभि. सा. 3 के शरीर पर क्षतियां पहुंची हैं और उसने यह भी कथन किया है कि बलात्संग किए जाने के दौरान उसके द्वारा किए गए प्रतिरोध के कारण अपीलार्थियों ने उसे क्षतियां पहुंचाई हैं । इसीलिए, दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध भी पूर्णतया गठित होता है । इस प्रकार, विधि की उपरोक्त धाराओं के अधीन प्रत्येक अपीलार्थी के विरुद्ध अभिलिखित दोषसिद्धि की पूरी तरह पुष्टि होती है । (पैरा 24)

विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय से यह प्रकट होता है कि अपीलार्थियों से वसूली गई जुर्माने की रकम आहत को दी जाएगी । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 357ख तारीख 3 फरवरी, 2013 को पाठ्यपुस्तक में निगमित किया गया था जिसके अधीन यह उपबंध किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357क के अधीन राज्य सरकार द्वारा संदेय प्रतिकर, दंड संहिता की धारा 376घ के अधीन कारित किए गए अपराध के लिए आहत को दी जाने वाली जुर्माने की रकम में जोड़ा जाएगा । इसलिए, यह न्यायालय राज्य सरकार को यह निदेश देता है कि जुर्माने की रकम के अतिरिक्त, दंड संहिता की धारा 376घ के अधीन कारित अपराध के कारण हुई हानि और क्षतियों के लिए आहत को एक लाख रुपए के प्रतिकर का संदाय किया जाए । (पैरा 27)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2012] (2012) 5 एस. सी. सी. 789 =
2012 क्रिमिनल ला जर्नल 2098 (एस. सी.) :
राजस्थान राज्य बनाम **दर्शन सिंह** उर्फ **दर्शन लाल** ; 12

[1990] (1990) एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 210 =
ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 685 :
महाराष्ट्र राज्य बनाम **चन्द्रप्रकाश केवलचंद जैन** । 11

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2016 की जेल दांडिक अपील सं. 41.

2014 के सेशन विचारण मामला सं. 188/39 में विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, बोनई द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री हिमांशु भूषण दास

प्रत्यर्थी की ओर से श्री सौगात दास (अपर स्थायी काउंसेल)

न्यायमूर्ति (डा.) डी. पी. चौधरी – अपीलार्थियों ने 2014 के सेशन विचारण मामला सं. 188/39 में भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 376(2)(1)/376घ/323 के अधीन अपराध के लिए विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, बोनई द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को चुनौती दी है ।

तथ्य:

2. अभियोजन पक्षकथन से संबंधित तथ्य इस प्रकार हैं कि आहत महिला जो कि वयस्क है, तारीख 15 जनवरी, 2014 को अपने नातेदार के साथ मेला देखने गई थी । अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि जब आहत मकर पर्व पर मेले के मैदान में नृत्य कर रही थी तब एक अपराधी ने उसे उस स्थान पर बुलाया जहां पर वर्तमान अभियुक्त पहले से मौजूद थे । यह भी अभिकथन किया गया है कि आहत आंशिक रूप से मानसिक मूक महिला है । सभी अपीलार्थियों ने, जिनमें एक किशोर भी है, अपने सामान्य आशय को अग्रसर करने में आहत महिला को उठाकर जंगल की ओर ले गए जहां उन्होंने उसके साथ सामूहिक बलात्संग किया । इतना ही नहीं, उन्होंने आहत महिला पर हमला भी किया । बलात्संग के पश्चात्, सभी अभियुक्त घटनास्थल से भाग गए । इसके पश्चात्, आहत महिला अपनी बहिन के घर वापस आई और अपने नातेदारों को इस घटना के बारे में बताया । इसके पश्चात् उसके नातेदारों ने आहत महिला के माता-पिता को सूचित किया । तारीख 18 जनवरी, 2014 को, शिकायतकर्ता ने लिखित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । अभियोजन पक्ष का यह भी

पक्षकथन है कि अन्वेषण आरंभ होने के पश्चात्, पुलिस ने आहत महिला सहित साक्षियों की परीक्षा की और अभियुक्तों के साथ उस महिला को भी चिकित्सा परीक्षा के लिए भेज दिया । पुलिस ने आहत महिला और अभियुक्तों के पहने हुए कपड़े अभिगृहीत किए । इस प्रकार बरामद किए गए सामान को रासायनिक परीक्षण के लिए भेज दिया गया । अन्वेषण पूरा होने के पश्चात्, पुलिस ने आरोप पत्र प्रस्तुत किया ।

3. जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभिलिखित कथन और साक्षियों की प्रतिपरीक्षा से दर्शित होता है, अपीलार्थियों ने अपने अभिवाक् में केवल आरोपों से इनकार किया है और यह भी अभिवाक् किया है कि उन्हें इस मामले में मिथ्या फंसाया गया है ।

4. अभियोजन पक्ष ने अपना पक्षकथन साबित करने के लिए कुल मिलाकर 12 साक्षियों की परीक्षा कराई है । अभि. सा. 3 आहत महिला है, अभि. सा. 1 इत्तिलाकर्ता है, अभि. सा. 11 चिकित्सक है, अभि. सा. 12 अन्वेषण अधिकारी है और शेष साक्षी ग्रामवासी हैं ।

5. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् वर्तमान अपीलार्थियों को आहत महिला के साथ बलात्संग करने और उस पर जानबूझकर उपहति कारित करने का दोषी पाया और उन्हें कारावास भोगने के लिए दोषसिद्ध किया ।

दलीलें –

6. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने मामले पर समुचित रूप से विचार न करके विधि की दृष्टि से त्रुटि की है । उनके अनुसार प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में हुए विलंब को स्पष्ट नहीं किया गया है जिसका यह कारण है कि यह घटना अभिकथित रूप से तारीख 15 जनवरी, 2014 को घटित हुई थी जबकि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तारीख 18 जनवरी, 2014 को दर्ज कराई गई है । उन्होंने यह भी दलील दी है कि आहत महिला के साथ हाल ही में किए गए बलात्संग के लक्षण जानने हेतु चिकित्सीय साक्ष्य स्पष्ट नहीं हैं ।

7. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि इस घटना का कोई भी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है और इत्तिलाकर्ता का कथन स्पष्ट साक्ष्य पर आधारित नहीं है क्योंकि वह ग्राह्य नहीं है । इसलिए, विद्वान् काउंसेल ने दोषसिद्धि और दंडादेश को अभिखंडित करने का निवेदन किया ।

8. राज्य की ओर से विद्वान् अपर स्थायी काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभि. सा. 3, जो कि आहत महिला है, के कथन का अवलंब इस घटना को साबित करने के लिए एकमात्र रूप से लिया जा सकता है क्योंकि उसके इस कथन को अभियोजन पक्ष द्वारा किसी भी प्रकार से चुनौती नहीं दी गई है ।

9. राज्य की ओर से विद्वान् अपर स्थायी काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि चूंकि आहत आंशिक रूप से मानसिक रोगी है जो मूक भी है, इसलिए निर्वाचक की सहायता से दिया गया कथन यह साबित करने के लिए स्पष्ट है कि आहत महिला के शरीर पर बाह्य क्षतियां कारित हुई हैं और उसके जननांगों पर पहुंची क्षति से उसके साथ बलात्संग किए जाने का निष्कर्ष निकलता है ।

10. विद्वान् अपर स्थायी काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि बलात्संग के मामले में आहत महिला के कथन का अवलंब दोषसिद्धि अभिलिखित किए जाने के लिए एकमात्र रूप से लिया जा सकता है और छोटे-मोटे विरोधाभासों को अनदेखा किया जा सकता है । इसलिए, उन्होंने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश का समर्थन किया है ।

चर्चा –

11. **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **चन्द्रप्रकाश केवलचंद जैन**[1] वाले मामले के पैरा 16 में उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीश द्वारा निम्न प्रकार मत व्यक्त किया गया है :–

> 16. लैंगिक अपराध की अभियोक्त्री सह-अभियुक्त के समतुल्य नहीं हो सकती । वास्तव में वह अपराध का शिकार होती है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम में कहीं भी यह उपबंध नहीं किया गया है कि उसके साक्ष्य को तब तक स्वीकार नहीं किया जा सकता जब तक उसकी संपुष्टि महत्वपूर्ण विशिष्टियों के साथ न हो जाए । निःसंदेह अभियोक्त्री साक्ष्य अधिनियम की धारा 118 के अधीन सक्षम साक्षी है और उसके साक्ष्य को उतना महत्व दिया जाना चाहिए जितना महत्व शारीरिक हिंसा के मामले में किसी आहत को दिया जाता है । ऐसी सावधानी और सतर्कता अभियोक्त्री के साक्ष्य का मूल्यांकन करने में

[1] (1990) एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 210 = ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 658.

बरतनी चाहिए जैसी सावधानी किसी आहत शिकायतकर्ता या साक्षी के मामले में बरती जाती है । आवश्यक यह है कि न्यायालय को इस तथ्य पर गहराई पर विचार करना चाहिए कि वह ऐसे व्यक्ति के साक्ष्य पर विचार कर रहा है जो अभियोक्त्री द्वारा लगाए गए आरोप के परिणाम के प्रति हितबद्ध है । यदि न्यायालय यह ध्यान में रखता है और उसका समाधान हो जाता है कि वह अभियोक्त्री के साक्ष्य के आधार पर कार्यवाही कर सकता है, तब साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के दृष्टांत ख के अनुरूप विधि का ऐसा कोई नियम नहीं है न ही कोई परिपाटी है जिसके अधीन यह अपेक्षा की जा सके कि साक्ष्य स्वीकार किए जाने के लिए संपुष्टि आवश्यक है । यदि किसी कारण से न्यायालय अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य का अवलंब लेने में संकोच से काम लेता है, तब न्यायालय ऐसे साक्ष्य पर विचार कर सकता है जिससे सह-अपराधी के मामले में संपुष्टि किए बिना भी अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य का अवलंब लिया जा सके । अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य का अवलंब लिए जाने के लिए साक्ष्य की प्रकृति प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करती है । किन्तु यदि अभियोक्त्री वयस्क है और वह सोचने-समझने के लिए सक्षम है, तब न्यायालय उसके साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि करने का हकदार है परन्तु यह तब जब कि अभियोक्त्री का साक्ष्य स्थिर और विश्वसनीय हो । मामले के अभिलेख पर यदि परिस्थितियों की सम्पूर्णता से यह पता चलता है कि अभियोक्त्री का उस व्यक्ति को अपराध में मिथ्या आलिप्त करने का कोई ठोस हेतु नहीं था जिसे आरोपित किया गया है, तब न्यायालय को आमतौर पर उसके साक्ष्य को स्वीकार करने में संकोच से काम नहीं लेना चाहिए ...।

ऊपर कथित विनिश्चय को दृष्टिगत करते हुए विधि की दृष्टि से यह सुस्थापित है कि अभियोक्त्री के साक्ष्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता और उसके मात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि कायम रखी जा सकती है परन्तु यह तब जबकि उसका परिसाक्ष्य स्पष्ट, तर्कसम्मत और विश्वासोत्पादक हो ।

12. **राजस्थान राज्य** बनाम **दर्शन सिंह** उर्फ **दर्शन लाल**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय के पैरा 25, 26 और 29 में निम्न प्रकार

[1] (2012) 5 एस. सी. सी. 789 = 2012 क्रिमिनल ला जर्नल 2098 (एस. सी.).

मत व्यक्त किया है :–

"25. एम. पी. शर्मा **बनाम** सतीश चन्द्र (ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 300) वाले मामले के पृष्ठ 304 पर पैरा 10 में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है –

> "10. ... कोई व्यक्ति मात्र मौखिक साक्ष्य का साक्षी नहीं हो सकता अपितु वह कोई दस्तावेज प्रस्तुत करने या बुद्धिमत्ता से संबंधित हाव-भाव प्रस्तुत करने का भी साक्षी हो सकता है जैसा कि मूक-वधिर साक्षी या अन्यथा (साक्ष्य अधिनियम की धारा 119 देखें) के मामले में होता है ।"

26. साक्ष्य अधिनियम की धारा 119 के उपबंधों को अधिनियमित करने के उद्देश्य से यह उपदर्शित होता है कि पहले कभी मूक-वधिर व्यक्तियों को विधि की दृष्टि से बुद्धिहीन समझा जाता था । तथापि, तत्पश्चात् ऐसे दृष्टिकोण को बदला गया जिसका यह कारण है कि नवीन विज्ञान से यह पता चलता है कि ऐसी जन्मजात विरूपताओं से प्रभावित व्यक्ति आमतौर पर अधिक बुद्धिमान होते हैं और आशा से परे कार्य कर जाते हैं । जब किसी मूक-वधिर व्यक्ति की न्यायालय में परीक्षा कराई जाती है, तब न्यायालय को उसकी परीक्षा कराए जाने के पूर्व कड़ी सावधानी और सतर्कता से यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उसमें पर्याप्त बुद्धिमत्ता है या नहीं और यह कि वह शपथ के भाव को समझता है या नहीं । इस प्रकार, समाधान होने पर, साक्षी को समुचित तरीकों से शपथ दिलायी जा सकती है और वह भी अनुवादक की सहायता से । तथापि, यदि कोई व्यक्ति पढ़ और लिख सकता हो, तब यही तरीका अपनाना अधिक उचित होगा बजाय इसके कि सांकेतिक भाषा का प्रयोग किया जाए । विधि के अधीन यह अपेक्षा की गई है कि संकेतों को अभिलिखित किया जाना चाहिए न कि संकेतों के निर्वचन को ।

29. कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मूक-वधिर व्यक्ति एक सक्षम साक्षी है । यदि न्यायालय की राय में उसे शपथ दिलायी जा सकती है, तब अवश्य दिलायी जानी चाहिए । ऐसा साक्षी, यदि पढ़ने-लिखने योग्य हो, यह वांछनीय होगा कि उसका कथन प्रश्नोत्तर रूप में अभिलिखित किया जाए । यदि वह साक्षी पढ़ने-लिखने योग्य नहीं तब उसका कथन अनुवादक की सहायता से

अभिलिखित किया जाना चाहिए, यदि आवश्यक हो । यदि अनुवादक का प्रबंध किया गया है तब वह व्यक्ति साक्षी के ही क्षेत्र का होना चाहिए किन्तु वह चल रहे मामले के साथ किसी भी प्रकार हितबद्ध न हो और उस अनुवादक को भी शपथ दिलायी जानी चाहिए ।

उपरोक्त विनिश्चय को दृष्टिगत करते हुए यह स्पष्ट हो गया है कि मूक-वधिर महिला के साक्ष्य का अवलंब सक्षम साक्षी के रूप में लिया जा सकता है । किन्तु मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए उसके साक्ष्य पर विचार अनुवादक की सहायता से किया जाना चाहिए ।"

13. साथ ही अभियोक्त्री के साक्ष्य का निर्धारण लैंगिक हमलों के मामले में साक्ष्य के मूल्यांकन के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए । यह भी उल्लेख करना अप्रासंगिक नहीं होगा कि अपील न्यायालय द्वारा साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किए जाते समय न्यायालय को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा समय-समय पर प्रतिपादित विधि के सिद्धांतों का अनुसरण करना चाहिए । निःसंदेह, साक्षी के साक्ष्य का अवलंब पूर्ण रूप से लिया जा सकता है और उसका साक्ष्य पूर्ण रूप से अविश्वसनीय भी हो सकता है और वही साक्ष्य आंशिक रूप से विश्वसनीय और आंशिक रूप से अविश्वसनीय भी हो सकता है, इसलिए न्यायालय को साक्ष्य में महत्वपूर्ण बातों को चुन लेना चाहिए ।

14. अभि. सा. 11 के साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि उसने अपीलार्थियों की परीक्षा कराई और यह निष्कर्ष निकाला कि वे मैथुन करने हेतु शारीरिक रूप से सक्षम हैं । इस साक्षी ने प्रदर्श 5, 6 और 7 साबित किए हैं । अपराध कारित करने में अपीलार्थियों का शारीरिक रूप से सक्षम होना अभियोजन पक्षकथन की संपुष्टि करता है ।

15. अभि. सा. 3 के कथन से, जो लगभग 30 वर्ष की आहत महिला है, यह प्रतीत होता है कि वह मूक महिला है और एक आदिवासी मुंडा समुदाय की है । इसलिए, विचारण न्यायालय ने आहत के ही ग्राम के रहने वाले अनुवादक से सहायता ली है । ऐसा प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा परिकल्पित प्रक्रिया का अनुसरण अर्धमूक साक्षियों की परीक्षा करने में किया है । अभि. सा. 3 के अनुसार, जब वह मकर पर्व देखने गई थी तब उसके ग्राम कुन्जापानी के एक लड़के ने आहत को बुलाया और उसे एक अलग स्थान पर ले गया

जहां पहले से वर्तमान अपीलार्थी मौजूद थे । वे बलपूर्वक उसे जंगल में भीतर की ओर ले गए । आहत ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि इन अपीलार्थियों ने उसे बलपूर्वक जमीन पर लिटाया, उस पर हमला किया और उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया । बलात्संग के पश्चात् वे घटनास्थल से चले गए और बलात्संग के पश्चात् वह ठीक प्रकार चलने की स्थिति में नहीं थी । इसके पश्चात् वह अपनी बहिन के घर आई और घटना के बारे में बताया । अपनी प्रतिपरीक्षा के पैरा 3 में इस साक्षी ने घटना के ब्यौरे दिए हैं । इस साक्षी के अनुसार, अपीलार्थी बुतुरू मुंडा ने सबसे पहले उसके साथ बलात्संग किया और उसके तुरन्त पश्चात् अन्य दो अभियुक्तों ने एक-एक करके उसके साथ बलात्संग किया । यह कथन किया गया है कि अभियोक्त्री के दोनों हाथों और गर्दन में क्षतियां कारित हुई थीं यद्यपि उसने अपीलार्थियों की पकड़ से भागने का प्रयास किया था किन्तु वह ऐसा कर न सकी और उसका प्रयास असफल हो गया । प्रतिपरीक्षा में प्रतिरक्षा पक्ष ने अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य से कोई भी महत्वपूर्ण लोप स्पष्ट नहीं किया है ताकि उसके परिसाक्ष्य को त्यक्त किया जाता । दूसरी ओर, प्रतिरक्षा पक्ष प्रतिपरीक्षा के दौरान किसी भी प्रकार से अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य को विचलित नहीं कर सका है । अतः, अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य में किसी भी प्रकार की कोई भी शिथिलता या खामी नहीं है । इस प्रकार, अभि. सा. 3 का कथन स्पष्ट और संगत है जिससे यह दर्शित होता है कि बलात्संग का अपराध साबित करने के लिए अभियोक्त्री पूर्णतया विश्वसनीय और सच्ची साक्षी है ।

16. अभि. सा. 1 इस मामले का इत्तिलाकर्ता है और उसके कथन से यह प्रतीत होता है कि उसे इस घटना के बारे में उसकी पत्नी से पता चला था और उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श 1) दर्ज कराई । इस साक्षी के अनुसार अर्जुन मुण्डरी नाम के एक व्यक्ति ने उसके बताए अनुसार प्रथम इत्तिला रिपोर्ट लिखी थी । अभि. सा. 1 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि आहत महिला मानसिक रूप से अशक्त है । यह प्रतीत होता है कि इस साक्षी ने घटना नहीं देखी है । इसलिए, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने से संबंधित साक्ष्य के सिवाय उसका साक्ष्य अभियोजन पक्षकथन को अन्य किसी भी प्रकार से प्रबलित नहीं करता है ।

17. अभि. सा. 2 अभियोक्त्री की चचेरी बहिन है और घटना के दौरान वह अभियोक्त्री के घर पर ठहरी हुई थी । अभि. सा. 2 के अनुसार मकर के पर्व पर आहत अपने पति (अभि. सा. 1) के साथ मेला देखने गई

थी । घटना के अगले दिन आहत (अभि. सा. 3) वापस आई और उसने अभि. सा. 2 को बताया कि अपीलार्थियों ने उसके हाथों पर हमला करने के पश्चात् उसके साथ बलपूर्वक बलात्संग किया है । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह स्वीकार किया है कि घटना के पश्चात् आहत अपने पैतृक गृह गई हुई थी और सायंकाल अभि. सा. 2 को घटना के बारे में बताया । चूंकि आहत महिला मूक और मानसिक रूप से अशक्त है, इसलिए अभि. सा. 2 को देरी से सूचना दिए जाने से अभियोजन पक्षकथन पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है किन्तु वास्तविकता यह है कि घटना के संबंध में अभि. सा. 2 के साक्ष्य की संपुष्टि अभि. सा. 3 के कथन से होती है ।

18. आहत महिला की माता अर्थात् अभि. सा. 6 के कथन से यह प्रकट होता है कि घटना के दिन अभि. सा. 1 अभि. सा. 3 को मकर मेला दिखाने ले गया था । अभि. सा. 6 को इत्तिलाकर्ता को यह सूचना मिली कि अपीलार्थियों ने उसकी पुत्री (अभि. सा. 3) के साथ बलात्संग किया है । इसके पश्चात् उसने और अभि. सा. 1 ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । स्वीकृततः, अभि. सा. 1 अभि. सा. 6 का दामाद है । वास्तविकता यह है कि इस बात में थोड़ा संदेह प्रतीत होता है कि अभि. सा. 3 ने अभि. सा. 6 को घटना के बारे में क्यों नहीं बताया । इस संबंध में, अभि. सा. 6 की प्रतिपरीक्षा में कोई बात नहीं पूछी गई है । इसके अतिरिक्त, चूंकि यह एक आदिवासी समाज है, इसलिए, इसके प्रत्येक व्यक्ति से सामान्य रूप से मुश्किल से ही यह प्रत्याशा की जा सकती है कि उसे घटना के तथ्य और परिस्थितियों की जानकारी हो । इसके अतिरिक्त, किसी घटना के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिक्रिया एक जैसी नहीं हो सकती अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति भिन्न प्रकार से प्रतिक्रिया करता है । दूसरी ओर, अभि. सा. 6 के कथन से अभियोजन पक्षकथन की इस संबंध में पुष्टि होती है कि आहत महिला इत्तिलाकर्ता के साथ मकर मेला देखने गई थी ।

19. अभि. सा. 11 महत्वपूर्ण साक्षी है क्योंकि वह चिकित्सक है जिसने आहत महिला की चिकित्सा परीक्षा की है । ऐसा प्रतीत होता है कि इस चिकित्सक ने घटना के अगले दिन 11 बजे पूर्वाह्न में आहत महिला की चिकित्सा परीक्षा की थी और उसने आहत महिला के शरीर पर निम्न क्षतियां पाईं :–

"1. दाएं अग्रबाहु पर सूजन है और संवेदनशील है ।

2. बाईं जंघा पर दुखन है ।

3. ललाट के बाईं ओर और गाल पर सूजन है ।

4. गुप्तांगों पर कोई भी क्षति नहीं है ।"

20. यह कथन किया गया है कि अभि. सा. 11 ने तारीख 18 जनवरी, 2014 को 3.45 बजे अपराह्न में आहत महिला की पुनः चिकित्सा परीक्षा की थी जिसके पूर्व अन्वेषण अधिकारी ने उसके गुप्तांग का मुआयना कराए जाने का निवेदन किया था । चिकित्सक ने अपनी रिपोर्ट प्रदर्श 8 साबित की है और अपने कथन के पैरा 6 में अभियोक्त्री के गुप्तांग की परीक्षा किए जाने के संबंध में उल्लेख किया है जो निम्न प्रकार है :–

"6. आहत महिला के गुप्तांग का मुआयना किए जाने पर मुझे कोई भी चिह्न, स्राव, रक्तस्राव या उसके निकट क्षति दिखाई नहीं दी है । अभियोक्त्री की योनि में दो उंगलियां प्रविष्ट की जा सकती हैं । योनि मार्ग और गर्भाशय ग्रीवा सामान्य हैं । मैंने अभियोक्त्री का गर्भ परीक्षण किया है जो कि नकारात्मक है ।"

21. इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह स्वीकार किया है कि उसने अभियोक्त्री के शरीर पर या उसके गुप्तांगों के निकट कोई भी बाह्य या आन्तरिक क्षति नहीं देखी थी । यह प्रतीत होता है कि चिकित्सक ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान स्वयं को दुविधा में डाला है क्योंकि उसने पहले मुख्य परीक्षा में आहत महिला के शरीर पर बाह्य क्षतियां पाए जाने को स्पष्ट किया है किन्तु अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान उसने इस तथ्य से इनकार किया है । इतना ही नहीं इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान स्वीकृत रूप से उसके समक्ष ऐसी कोई परिस्थिति नहीं रखी गई है जिससे यह साबित होता हो कि आहत महिला के साथ हाल ही में मैथुन क्रिया की गई थी । जब स्पष्ट बाह्य क्षतियां मौजूद होती हैं तब चिकित्सक से यह प्रत्याशा नहीं की जाती है कि वह अपीलार्थियों को यह कहते हुए निर्दोष अभिनिर्धारित करे कि आहत के साथ हाल ही में मैथुन क्रिया नहीं की गई है । प्रदर्श 4 से यह दर्शित होता है कि अन्वेषण अधिकारी ने अभियोक्त्री के हस्ताक्षर गुप्तांगों की जांच कराई जाने के लिए नहीं भेजे थे यद्यपि यह मामला बलात्संग के अपराध के लिए दर्ज कराया गया था । पुनः अन्वेषण अधिकारी ने आहत को इस जांच के लिए अपराह्न में भेजा था । इससे अन्वेषण की शुद्धता पर संदेह होता है ।

22. चूंकि प्रदर्श 4 से स्पष्ट रूप से बाह्य क्षतियों के संबंध में पता

चलता है, इसलिए, बलात्संग के संबंध में इस बात से आहत (अभि. सा. 3) के साक्ष्य की संपुष्टि पर्याप्त रूप से होती है । चिकित्सक के कथन का सत्यापन प्रदर्श 8 के साथ करने पर यह प्रतीत होता है कि अभियोक्त्री एक पूरी तरह वयस्क महिला है जिसकी प्रविष्टि की दृष्टि से योनिक क्षमता दो उंगलियों के बराबर है, इसलिए उसके गुप्तांगों पर किसी भी क्षति के न पाए जाने से बलात्संग की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता जिससे निःसंदेह अभि. सा. 3 की संपुष्टि होती है और इस संबंध में मोदीज मेडिकल ज्यूरिस्प्रूडेंस, बीसवां संस्करण, पृष्ठ 337 का अवलंब लिया गया है जिसमें यह उल्लिखित है कि योनिच्छद के विदीर्ण हुए बिना भी बलात्संग किए जाने की संभावना हो सकती है, यदि योनि द्वार इतना विकसित है कि उसमें दो उंगलियां सुगमतापूर्वक प्रविष्ट की जा सकती हैं । इसके अतिरिक्त, उसकी दाईं जंघा और गाल तथा शरीर के अन्य अंगों पर पाई गई क्षतियों पर विचार उसके गुप्तागों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए । इसलिए, आहत महिला के गुप्तांगों पर किसी भी क्षति के न पाए जाने से बलात्संग की संभावना को पूर्णरूप से नकारा नहीं जा सकता जबकि आहत के शरीर पर पाई गई बाह्य क्षतियों से यह पता चलता है कि उसके साथ बलपूर्वक मैथुन किया गया है । निःसंदेह, चिकित्सक के साक्ष्य से यह भी पता चलता है कि आहत महिला ठीक प्रकार उत्तर देने में सक्षम नहीं थी जिस पर चिकित्सक ने उसे आंशिक रूप से मानसिक रोगी पाया । चूंकि आहत महिला के शरीर पर बाह्य क्षतियां पहुंची थीं और वह असहनीय सामूहिक बलात्संग का शिकार हुई थी, जैसा कि उसने कथन किया है, उसका चिकित्सक के समक्ष मौन बने रहना अभियोजन पक्षकथन को नकार नहीं सकता किन्तु इस पर विचार करना न्याय में सहाय्य होगा कि आहत महिला को न केवल क्षतियां पहुंची थीं अपितु ऐसे जघन्य अपराध के पश्चात् उसे मानसिक आघात भी पहुंचा है । बहरहाल, चिकित्सक के साक्ष्य से आहत के कथन की संपुष्टि पूरी तरह से होती है कि अपीलार्थियों द्वारा उसके साथ बलात्संग किया गया है ।

23. यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण अधिकारी ने आहत और अपीलार्थियों के पहने हुए कपड़े अभिगृहीत किए हैं । अन्वेषण अधिकारी ने आहत का योनिक लेप और अपीलार्थियों के वीर्य के नमूने और अन्य सामग्री भी अभिगृहीत की हैं । उसने रासायनिक परीक्षण के लिए इस सामग्री को भेजा है किन्तु वह रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट साबित करने में असफल रहा है । इस मामले में रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट साबित न करने

जैसे अन्वेषण अधिकारी के उपेक्षापूर्ण व्यवहार से अन्वेषण अभिकरण के लोप का पता चलता है । तथापि, ऊपर चर्चा किया गया साक्ष्य, अपीलार्थियों द्वारा आहत (अभि. सा. 3) के साथ किए गए बलात्संग को साबित करने के लिए पर्याप्त है ।

24. विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष निकाला है कि अपीलार्थियों ने आहत के साथ बलात्संग कारित किया है और हम इस निष्कर्ष से किसी भी प्रकार असहमत नहीं हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 376(2)(1)/376घ/323 के अधीन दोषसिद्ध किया है । चूंकि यह घटना तारीख 15 जनवरी, 2014 की है जो कि 2013 में दंड संहिता की धारा 376 में संशोधन किए जाने के बाद की है, इसलिए, उन अपराधों पर, जिनके अधीन दोषसिद्धि अभिलिखित की गई है, चर्चा की जानी चाहिए । दंड संहिता की धारा 376(2)(1) के अधीन यह उपबंध किया गया है कि जो कोई मानसिक या शारीरिक रूप से पीड़ित महिला के साथ बलात्संग कारित करता है, वह 10 वर्ष से अनधिक कारावास से जिसकी अवधि आजीवन कारावास तक हो सकेगी और जुर्माने से भी दंडनीय होगा । इसी प्रकार, धारा 376घ के अधीन सामूहिक बलात्संग निर्दिष्ट किया गया है और प्रत्येक अपराधी कठोर कारावास से दंडनीय होगा जिसकी अवधि 20 वर्ष से कम नहीं होगी और आजीवन कारावास तक हो सकेगी किन्तु आजीवन कारावास का अर्थ उस व्यक्ति के स्वाभाविक शेष जीवन की अवधि है और वह व्यक्ति जुर्माने से भी दंडनीय होगा । चूंकि प्रत्येक अपीलार्थी ने आहत महिला के साथ बलात्संग कारित किया है जो कि अर्ध-मूक है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से उसके आंशिक असामान्य होने का पता चलता है, इसीलिए, दंड संहिता की धारा 376(2)(1) के अधीन दोषसिद्धि से इनकार नहीं किया जा सकता । इसी प्रकार, अपीलार्थियों ने एक-एक करके अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया है, इसीलिए, दंड संहिता की धारा 376घ के अधीन कारित किए गए सामूहिक बलात्संग से इनकार नहीं किया जा सकता । इस प्रकार, अभियोजन पक्ष द्वारा दोनों अपराध भलीभांति साबित किए गए हैं । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 11 के साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि अभि. सा. 3 के शरीर पर क्षतियां पहुंची हैं और उसने यह भी कथन किया है कि बलात्संग किए जाने के दौरान उसके द्वारा किए गए प्रतिरोध के कारण अपीलार्थियों ने उसे क्षतियां पहुंचाई हैं । इसीलिए, दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध भी

पूर्णतया गठित होता है । इस प्रकार, विधि की उपरोक्त धाराओं के अधीन प्रत्येक अपीलार्थी के विरुद्ध अभिलिखित दोषसिद्धि की पूरी तरह पुष्टि होती है ।

25. चूंकि न्यायालय को आमतौर पर विहित की गई न्यूनतम सीमा से कम दंड अधिनिर्णीत नहीं करना चाहिए और विचारण न्यायालय ने पहले ही प्रत्येक अपीलार्थी के विरुद्ध न्यूनतम दंडादेश पारित कर दिया है, इसलिए, यह न्यायालय इसमें हस्तक्षेप करना नहीं चाहता है ।

26. इस प्रकार, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश की एतद्द्वारा पुष्टि की जाती है क्योंकि इस न्यायालय को विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है ।

27. विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय से यह प्रकट होता है कि अपीलार्थियों से वसूल की गई जुर्माने की रकम आहत को दी जाएगी । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 357ख तारीख 3 फरवरी, 2013 को पाठ्यपुस्तक में निगमित किया गया था जिसके अधीन यह उपबंध किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357क के अधीन राज्य सरकार द्वारा संदेय प्रतिकर, दंड संहिता की धारा 376घ के अधीन कारित किए गए अपराध के लिए आहत को दी जाने वाली जुर्माने की रकम में जोड़ा जाएगा । इसलिए, यह न्यायालय राज्य सरकार को यह निदेश देता है कि जुर्माने की रकम के अतिरिक्त, दंड संहिता की धारा 376घ के अधीन कारित अपराध के कारण हुई हानि और क्षतियों के लिए आहत को एक लाख रुपए के प्रतिकर का संदाय किया जाए ।

28. परिणामतः, जेल दांडिक अपील खारिज की जाती है ।

29. निचले न्यायालय का अभिलेख तत्काल वापस भेजा जाए ।

30. इस निर्णय की एक प्रति राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण को आवश्यक कार्यवाही हेतु भेजा जाए ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

सतेन्द्र सिंह नेगी

बनाम

उत्तराखण्ड राज्य

तारीख 11 अक्तूबर, 2017

न्यायमूर्ति सर्वेश कुमार गुप्ता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)– धारा 376 और 53 – बलात्संग – दंड में समुचित कमी – अभियुक्त द्वारा एक वर्ष तक निरन्तर बलात्संग किया जाना – आहत द्वारा अपने परिवार को अपराध के बारे में न बताया जाना – आहत का अभियुक्त के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन करना – उज्ज्वल भविष्य की आशा से आहत द्वारा प्रतिरोध न किया जाना – आहत के साथ आरंभ में उसकी इच्छा के विरुद्ध बलात्संग किया गया किन्तु बाद में आहत ने विरोध करना बंद कर दिया और अवसर मिलने के बावजूद अभियुक्त से बचकर भागने का कोई प्रयास नहीं किया जिससे उसकी सम्मति स्पष्ट होती है, अतः अभियुक्त को कम दंड देना न्यायोचित होगा ।

इस अपराध के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 के अधीन तारीख 5 दिसंबर, 2011 (अर्थात् अपने माता-पिता की अभिरक्षा में रहने के दो दिन पश्चात्) अभिलिखित किए गए कुमारी शिवानी जोशी, आयु लगभग 20-21 वर्ष, के कथन तथा अभि. सा. 2 के रूप में दिए गए उसके साक्ष्य से प्रकट होता है कि कुमारी शिवानी जोशी का संबंध समाज के आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग से है वह अभियुक्त सतेन्द्र सिंह नेगी के कार्यालय में निजी सचिव-सह-कम्प्यूटर ऑपरेटर के रूप में तारीख 13 दिसंबर, 2010 के दौरान 4,000/- रुपए प्रतिमास के वेतन पर कार्य कर रही थी । वह हरिपुर कलां, रायवाला में अर्थात् अपने घर के निकट ही कार्य कर रही थी जहां नेगी सिक्योरिटी एजेंसी चलाता था । इस नियोजन के दौरान लगभग एक वर्ष बीत जाने पर नेगी ने अपनी प्रभावी स्थिति का लाभ उठाते हुए इस लड़की के साथ दुर्व्यवहार किया और ऐसी स्थिति पैदा की कि वह नेगी के निवास-स्थान पर स्वयं को उपलब्ध करा सके । शिवानी जोशी को अभियुक्त के बिस्तर तक ले जाया गया और उसके साथ बलात्संग किया गया । उसे धमकियां दी गईं कि वह इस घटना के

बारे में किसी को न बताए जिससे शिवानी लगभग एक वर्ष तक अभियुक्त के निदेशों का पालन करती रही । परिणामतः, अभियोजन वृत्तांत से यह स्पष्ट होता है कि वह तारीख 5 अक्तूबर, 2011 को नेगी के साथ उसकी मोपेड से ऋषिकेश से भाग गई और वहां से उसे दिल्ली लाया गया । तारीख 5 अक्तूबर, 2011 को इस प्रकार भगाए जाने के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श क-4 दर्ज कराई गई । इसके पश्चात् तारीख 3 नवंबर, 2011 को शिवानी के पिता श्री रामकिशन जोशी द्वारा एक अन्य प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श क-5 दर्ज कराई गई जिसमें अभियुक्त के अलावा अन्य व्यक्तियों की सह-अपराधिता व्यक्त की गई । तारीख 3 दिसंबर, 2011 को हरिद्वार नगर से पुलिस अभियुक्त और शिवानी को गिरफ्तार कर सकी । अभियुक्त को जेल भेज दिया गया और तभी से वह वहीं निरुद्ध है । अन्वेषण के पश्चात् उपरोक्त अपराध के संबंध में आरोप पत्र प्रदर्श क-16 प्रस्तुत किया गया और तद्नुसार, अपीलार्थी को आरोपित किया गया । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने ऊपर कथित रूप में अपना निष्कर्ष अभिलिखित किया कि अपीलार्थी दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध का ही दोषी है और शेष अपराधों से उसे दोषमुक्त कर दिया । आहत लड़की अर्थात् शिवानी की चिकित्सा परीक्षा तारीख 3 दिसंबर, 2011 को कराई गई जिसमें यह पाया गया कि उसकी योनिच्छद विदीर्ण है, वह मैथुन की अभ्यस्थ है, उसकी आयु लगभग 21 वर्ष पाई गई और उसके यौनिक लेप में शुक्राणु नहीं पाए गए । अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 366/376/342/506 के अधीन अपराध के लिए आरोपित किया गया है और विचारण पूरा होने पर विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया है कि दंड संहिता की धारा 376 के सिवाय कोई भी अपराध अभियुक्त के विरुद्ध नहीं बनता है । इसलिए, विद्वान् न्यायाधीश ने इस अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए 7 वर्ष के कठोर कारावास तथा 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय किए जाने के लिए दंडादिष्ट किया । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर अभियुक्त को अतिरिक्त 3 मास का कारावास भोगने का भी निदेश दिया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, ऋषिकेश के तारीख 24 मई, 2013 के दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश को इस जेल अपील के माध्यम से चुनौती दी गई है । उच्च न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने विद्वान् न्यायमित्र तथा विद्वान् अपर महाधिवक्ता

को सुना है और यह महसूस किया है कि सबसे महत्वपूर्ण साक्षी स्वयं सुश्री शिवानी जोशी **उर्फ** डोली है । इस साक्षी की आयु उस समय कम से कम 21 वर्ष थी जब उसने नेगी के कार्यालय में सेवा ग्रहण की थी । यह सत्य है कि नेगी ने उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का दुरुपयोग अपने प्रभावपूर्ण पद के अधीन किया था जो शिवानी जोशी को नियोजित किए जाने के कार्य से स्पष्ट हो जाता है किन्तु पूरे वर्ष कार्यालय में कार्य समाप्त करने के पश्चात् वह अपने घर वापस आया करती थी और उसमें अपनी माता को इस संबंध में बताने का साहस नहीं था यहां तक कि वह अपने पिता, भाई, बहिन या परिवार के अन्य सदस्य या किसी पुरुष मित्र को भी वह नहीं बता सकी । इस संबंध में, शिवानी जोशी की मुख्य परीक्षा का पृष्ठ 4 सुसंगत है जहां यह निर्दिष्ट किया गया है कि उसकी एक विपिन नेगी और अजय रावत नाम के पुरुषों से मित्रता थी । इसलिए, मैं यह महसूस करता हूं कि शुरू-शुरू में बलपूर्वक संभोग किया गया था जो अभियोक्त्री की इच्छा या सम्मति के बिना किया गया था किन्तु तत्पश्चात् यह कृत्य उसके कार्यालयिक आदेशों का भाग बन गया जिसमें अभियोक्त्री की सम्मति होती थी और वह मोपेड से एक लम्बी यात्रा करते हुए ऋषिकेश से दिल्ली चली गई और इसके पश्चात् दिल्ली से हरिद्वार आ गई और तारीख 3 दिसंबर, 2011 अर्थात् अपना स्वास्थ्य ठीक होने तक वहां रही जब अभियोक्त्री तारीख 5 अक्तूबर, 2011 को निकलकर भागी थी और लम्बी यात्रा की थी तब उसके पास अपनी सहायता के लिए आवाज उठाने के कई अवसर थे किन्तु वह मौन रही । इसलिए, यह समझा जा सकता है कि अभियोक्त्री का अभियुक्त के साथ फरार होना उसकी सम्मति और इच्छा के विरुद्ध नहीं था – संभवतः अभियोक्त्री को अपने भविष्य की सुरक्षा की आशा थी । इस अपील में कोई बल नहीं है । एतद्द्वारा यह खारिज की जाती है किन्तु साथ ही उपरोक्त परिस्थितियों को न्यायालय ने ऐसे समुचित कारणों के रूप में माना है जिनके अंतर्गत दंड संहिता की धारा 376 के अधीन 7 वर्ष से कम दंड अधिनिर्णीत किया जा सकता है । न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया और दंडादेश की अवधि को 5 वर्ष के कारावास और 5,000/- रुपए जुर्माने में उपान्तरित किया, जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर दोषसिद्ध को 10 मास का अतिरिक्त कारावास अधिनिर्णीत किया जिसे वह पहले ही भोग चुका था । जेल प्राधिकारियों को निदेश दिया गया कि वे अपीलार्थी द्वारा भोगे गए कारावास की अवधि की गणना करे और इस न्यायालय के निदेशों का पालन करे । (पैरा 8 और 10)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की दांडिक जेल अपील सं. 13.

विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, ऋषिकेश के तारीख 24 मई, 2013 के दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सुश्री अंजली नोलियाल (न्यायमित्र)
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री टी. सी. अग्रवाल (अपर सरकारी अधिवक्ता), सुश्री संगीता भारद्वाज (ब्रीफ होल्डर)

न्यायमूर्ति सर्वेश कुमार गुप्ता – विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, ऋषिकेश के तारीख 24 मई, 2013 के दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश को इस जेल अपील के माध्यम से चुनौती दी गई है ।

2. अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 366/376/342/506 के अधीन अपराध के लिए आरोपित किया गया है और विचारण पूरा होने पर विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया है कि दंड संहिता की धारा 376 के सिवाय कोई भी अपराध अभियुक्त के विरुद्ध नहीं बनता है । इसलिए, विद्वान् न्यायाधीश ने इस अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए 7 वर्ष के कठोर कारावास तथा 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय किए जाने के लिए दंडादिष्ट किया । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर अभियुक्त को अतिरिक्त 3 मास का कारावास भोगने का भी निदेश दिया ।

3. इस अपराध के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 के अधीन तारीख 5 दिसंबर, 2011 (अर्थात् अपने माता-पिता की अभिरक्षा में रहने के दो दिन पश्चात्) अभिलिखित किए गए कुमारी शिवानी जोशी, आयु लगभग 20-21 वर्ष, के कथन तथा अभि. सा. 2 के रूप में दिए गए उसके साक्ष्य से प्रकट होता है कि कुमारी शिवानी जोशी का संबंध समाज के आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग से है वह अभियुक्त सतेन्द्र सिंह नेगी के कार्यालय में निजी सचिव-सह-कम्प्यूटर ऑपरेटर के रूप में तारीख 13 दिसंबर, 2010 के दौरान 4,000/- रुपए प्रतिमास के वेतन पर कार्य कर रही थी । वह हरिपुर कलां, रायवाला में अर्थात् अपने घर के निकट ही कार्य कर रही थी जहां नेगी सिक्योरिटी एजेंसी चलाता था । इस नियोजन के दौरान लगभग एक वर्ष बीत जाने पर नेगी ने अपनी प्रभावी स्थिति का लाभ उठाते हुए इस लड़की के साथ दुर्व्यवहार किया और ऐसी स्थिति पैदा

की कि वह नेगी के निवास-स्थान पर स्वयं को उपलब्ध करा सके । शिवानी जोशी को अभियुक्त के बिस्तर तक ले जाया गया और उसके साथ बलात्संग किया गया । उसे धमकियां दी गईं कि वह इस घटना के बारे में किसी को न बताए जिससे शिवानी लगभग एक वर्ष तक अभियुक्त के निदेशों का पालन करती रही । परिणामतः, अभियोजन वृत्तांत से यह स्पष्ट होता है कि वह तारीख 5 अक्तूबर, 2011 को नेगी के साथ उसकी मोपेड से ऋषिकेश से भाग गई और वहां से उसे दिल्ली लाया गया ।

4. तारीख 5 अक्तूबर, 2011 को इस प्रकार भगाए जाने के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श क-4 दर्ज कराई गई । इसके पश्चात् तारीख 3 नवंबर, 2011 को शिवानी के पिता श्री रामकिशन जोशी द्वारा एक अन्य प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श क-5 दर्ज कराई गई जिसमें अभियुक्त के अलावा अन्य व्यक्तियों की सह-अपराधिता व्यक्त की गई ।

5. यह उल्लेखनीय है कि दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्टों में दोषसिद्ध अभियुक्त (अपीलार्थी) को अपराध में किसी भी प्रकार से आलिप्त किए जाने या उसके संबंध में संदिग्धता का उल्लेख नहीं किया गया है ।

6. तारीख 3 दिसंबर, 2011 को हरिद्वार नगर से पुलिस अभियुक्त और शिवानी को गिरफ्तार कर सकी । अभियुक्त को जेल भेज दिया गया और तभी से वह वहीं निरुद्ध है । अन्वेषण के पश्चात् उपरोक्त अपराध के संबंध में आरोप पत्र प्रदर्श क-16 प्रस्तुत किया गया और तद्नुसार, अपीलार्थी को आरोपित किया गया । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने ऊपर कथित रूप में अपना निष्कर्ष अभिलिखित किया कि अपीलार्थी दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध का ही दोषी है और शेष अपराधों से उसे दोषमुक्त कर दिया ।

7. आहत लड़की अर्थात् शिवानी की चिकित्सा परीक्षा तारीख 3 दिसंबर, 2011 को कराई गई जिसमें यह पाया गया कि उसकी योनिच्छद विदीर्ण है, वह मैथुन की अभ्यस्थ है, उसकी आयु लगभग 21 वर्ष पाई गई और उसके यौनिक लेप में शुक्राणु नहीं पाए गए ।

8. मैंने विद्वान् न्यायमित्र तथा विद्वान् अपर महाधिवक्ता को सुना है और यह महसूस किया है कि सबसे महत्वपूर्ण साक्षी स्वयं सुश्री शिवानी जोशी **उर्फ** डोली है । इस साक्षी की आयु उस समय कम से कम 21 वर्ष थी जब उसने नेगी के कार्यालय में सेवा ग्रहण की थी । यह सत्य है कि नेगी ने उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का दुरुपयोग अपने प्रभावपूर्ण पद के अधीन

किया था जो शिवानी जोशी को नियोजित किए जाने के कार्य से स्पष्ट हो जाता है किन्तु पूरे वर्ष कार्यालय में कार्य समाप्त करने के पश्चात् वह अपने घर वापस आया करती थी और उसमें अपनी माता को इस संबंध में बताने का साहस नहीं था यहां तक कि वह अपने पिता, भाई, बहिन या परिवार के अन्य सदस्य या किसी पुरुष मित्र को भी वह नहीं बता सकी । इस संबंध में, शिवानी जोशी की मुख्य परीक्षा का पृष्ठ 4 सुसंगत है जहां यह निर्दिष्ट किया गया है कि उसकी एक विपिन नेगी और अजय रावत नाम के पुरुषों से मित्रता थी । इसलिए, मैं यह महसूस करता हूं कि शुरू-शुरू में बलपूर्वक संभोग किया गया था जो अभियोक्त्री की इच्छा या सम्मति के बिना किया गया था किन्तु तत्पश्चात् यह कृत्य उसके कार्यालयिक आदेशों का भाग बन गया जिसमें अभियोक्त्री की सम्मति होती थी और वह मोपेड से एक लम्बी यात्रा करते हुए ऋषिकेश से दिल्ली चली गई और इसके पश्चात् दिल्ली से हरिद्वार आ गई और तारीख 3 दिसंबर, 2011 अर्थात् अपना स्वास्थ्य ठीक होने तक वहां रही जब अभियोक्त्री तारीख 5 अक्तूबर, 2011 को निकलकर भागी थी और लम्बी यात्रा की थी तब उसके पास अपनी सहायता के लिए आवाज उठाने के कई अवसर थे किन्तु वह मौन रही । इसलिए, यह समझा जा सकता है कि अभियोक्त्री का अभियुक्त के साथ फरार होना उसकी सम्मति और इच्छा के विरुद्ध नहीं था – संभवतः अभियोक्त्री को अपने भविष्य की सुरक्षा की आशा थी ।

9. मैंने इन परिस्थितियों को, दंड संहिता की धारा 376 के उपबंधों में तारीख 3 फरवरी, 2013 से प्रभावी संशोधनों के पूर्व उसके अधीन अनुध्यात 7 वर्ष के न्यूनतम दंड से कम दंड अधिनिर्णीत करने के लिए समुचित और विशेष कारण के रूप में विचार किया है ।

10. मैं यह महसूस करता हूं कि इस अपील में कोई बल नहीं है । एतद्द्वारा यह खारिज की जाती है किन्तु साथ ही उपरोक्त परिस्थितियों को मैंने ऐसे समुचित कारणों के रूप में माना है जिनके अंतर्गत दंड संहिता की धारा 376 के अधीन 7 वर्ष से कम दंड अधिनिर्णीत किया जा सकता है । मैं अपीलार्थी को दोषसिद्ध करता हूं और दंडादेश की अवधि को 5 वर्ष के कारावास और 5,000/- रुपए जुर्माने में उपान्तरित करता हूं । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर दोषसिद्ध को 10 मास का अतिरिक्त कारावास अधिनिर्णीत किया जाता है जिसे वह पहले ही भोग चुका है । जेल प्राधिकारियों को निदेश दिया जाता है कि वे अपीलार्थी द्वारा भोगे गए कारावास की अवधि की गणना करे और इस न्यायालय के निदेशों का पालन करे ।

11. इस निर्णय और आदेश की प्रति निचले न्यायालय के अभिलेख के साथ अनुपालन सुनिश्चित किए जाने के लिए विचारण न्यायालय को भेजी जाए ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

(2018) 1 दा. नि. प. 473 छत्तीसगढ़

राम रतन सूर्यवंशी

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

तारीख 5 जून, 2017

न्यायमूर्ति मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव और न्यायमूर्ति संजय अग्रवाल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और 304, भाग II – हत्या और हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध – अन्तर – गंभीर और अचानक प्रकोपन – अभियुक्तों द्वारा आवेग की तीव्रता में कृत्य किया जाना – पूर्व-चिन्तन का अभाव – झगड़ा मृतक और अपीलार्थियों के बीच आवेग की तीव्रता में एक तुच्छ मुद्दे को लेकर अचानक हुआ है और मृतक पर डंडे से केवल एक ही वार किया गया है, ऐसी स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थियों द्वारा कोई सम्यक् लाभ उठाया गया है या क्रूरतापूर्ण कार्य किया गया है, अतः अपीलार्थी हत्या के नहीं अपितु हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के दोषी हैं ।

अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, घटना के दिन लगभग 5 बजे अपराह्न में मृतक की पत्नी गणेशाबाई (अभि. सा. 1) के साथ मृतक द्वारा दुर्व्यवहार किया जा रहा था और उसे गालियां भी दी जा रही थी और उसी समय अचानक मृतक का बड़ा भाई राम रतन सूर्यवंशी (2011 की दांडिक अपील सं. 712 में का अपीलार्थी) और उसकी पत्नी लक्ष्मिन बाई (2011 की दांडिक अपील सं. 720 में की अपीलार्थी) घटनास्थल पर पहुंचे और मृतक पर हमला किया । यह कथन किया गया है कि घूसों और डंडों से हमला किए जाने के कारण मृतक लक्ष्मी प्रसाद को उसके वक्ष और सिर में क्षतियां पहुंचीं जो घातक साबित हुई और उनके परिणामस्वरूप उसकी

मृत्यु हो गई । मृतक की पत्नी गणेशाबाई (अभि. सा. 1) द्वारा शिकायत किए जाने पर तारीख 27 दिसंबर, 2010 को लगभग 7.15 बजे अपराह्न में अपीलार्थियों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, 324 और 294 के अधीन दंडनीय अभिकथित अपराध कारित करने के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई । औपचारिक अन्वेषण और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन साक्षियों के कथन अभिलिखित किए जाने, शवपरीक्षण रिपोर्ट प्राप्त करने और घटनास्थल से रक्तरंजित मिट्टी तथा मृतक और अपीलार्थियों के कपड़े बरामद करने के पश्चात् न्यायालयिक प्रयोगशाला परीक्षण के लिए भेजा गया और दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, 324 और 294 के अधीन अभिकथित अपराध कारित करने के लिए अपीलार्थियों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया । मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द किए जाने के पश्चात् अपीलार्थियों को अपराध कारित करने के लिए आरोपित किया गया और उन्होंने अपने दोषी होने से इनकार किया जिसके पश्चात् अभिकथित अपराध के लिए उनका विचारण किया गया । अभियोजन पक्ष ने अपना पक्षकथन साबित करने के लिए अन्वेषण अधिकारी, शवपरीक्षण करने वाले चिकित्सक तथा घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों सहित कुल मिलाकर 14 साक्षियों की परीक्षा कराई । अपीलार्थियों के समक्ष अपराधजन्य साक्ष्य से संबंधित सामग्री प्रस्तुत करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उनकी परीक्षा कराई गई । अपीलार्थियों ने किसी भी अपराध के कारित किए जाने से इनकार किया । किसी भी प्रतिरक्षा साक्षी की परीक्षा नहीं कराई गई । अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य, विशेषकर गणेशाबाई (अभि. सा. 1), मंगतराम (अभि. सा. 2) और शिव प्रसाद (अभि. सा. 5) जैसे प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य का अवलंब लेने और मानव वध प्रकृति की मृत्यु तथा कारित हुई क्षतियों पर विचार करने पर विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों को पूर्वोक्त रूप में दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश की शुद्धता और विधिमान्यता को चुनौती देते हुए, अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलें फाइल कीं । अपीलें भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर प्रस्तुत पूर्वोक्त साक्ष्य का संचयी रूप से परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी और मृतक के बीच जो झगड़ा हुआ था वह उस समय अचानक घटित हुआ था जब मृतक की

पत्नी गणेशाबाई को उसका पति फटकार रहा था और अपीलार्थी राम रतन और लक्ष्मिन बाई का ध्यान शोर की ओर गया जो अगले ही मकान में रहते हैं । साक्ष्य से यह भी साबित होता है कि उनके बाहर आने के पश्चात् उन्होंने झगड़े का कारण पूछा, इसके पश्चात् कहा-सुनी हुई जिसके उपरान्त मृतक और अपीलार्थी लक्ष्मिन बाई के बीच गाली-गलौज होने लगी और इसके बाद एक-दूसरे पर हाथों और मुक्कों से हमला करने लगे । यह कथन किया गया है कि साक्ष्य में यह उल्लेख किया गया है कि यह कथन किया गया है कि इस झगड़े के दौरान लक्ष्मिन बाई अपने घर से डंडा लेकर आई और मृतक के सिर पर हमला किया । परिस्थितियों से कुल मिलाकर यह दर्शित होता है कि यह झगड़ा मृतक और उसकी भाभी के बीच आवेग की त्रीवता में एक तुच्छ मुद्दे को लेकर अचानक हुआ था कि मृतक अपनी पत्नी के साथ दुर्व्यवहार करता है और उसके साथ झगड़ा करता है । आरंभ में अपीलार्थियों के पास हथियार नहीं थे । हथियार का प्रयोग केवल तब किया गया जब राम रतन और मृतक लक्ष्मी प्रसाद एक-दूसरे के साथ गुथ-मुथ हो गए थे और मुक्कों से वार कर रहे थे तब अचानक लक्ष्मिन बाई अपने घर से डंडा लेकर आई जिससे लक्ष्मी प्रसाद पर हमला किया गया । इस झगड़े में लक्ष्मी प्रसाद के सिर पर हमला किया गया जो घातक साबित हुआ । कई क्षतियों की प्रकृति से यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थियों ने कोई सम्यक् लाभ उठाया है या कोई क्रूरतापूर्ण कार्य किया है । अतः, इन परिस्थितियों में हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि यह ऐसा मामला है जिसमें अपीलार्थियों द्वारा किया गया मामला अचानक और गंभीर प्रकोपन तथा बिना किसी पूर्व-चिन्तन के आवेग की तीव्रता में किए गए कृत्य संबंधी स्पष्टीकरण खंड के अन्तर्गत पूरी तरह आता है । इस प्रकार, साबित किए गए तथ्यों से केवल हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अपराध के लिए दोषसिद्धि न्यायोचित ठहराई जा सकती है । (पैरा 15)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 का दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 712.

2011 के सेशन विचारण मामला सं. 34 में प्रथम अपर सेशन न्यायाधीश, बिलासपुर के तारीख 23 जुलाई, 2011 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री सी. आर. साहू और गोविन्द राम मीरी

प्रत्यर्थी की ओर से श्री अनिल एस. पाण्डेय

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव ने दिया ।

न्या. श्रीवास्तव – ये अपीलें 2011 के सेशन विचारण मामला सं. 34 में प्रथम अपर सेशन न्यायाधीश, बिलासपुर के तारीख 23 जुलाई, 2011 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध प्रस्तुत की गई हैं जिसके द्वारा अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 302 के अधीन अपराध का दोषी अभिनिर्धारित किया गया है और आजीवन कारावास भोगने तथा 500/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त तीन मास का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया है ।

2. अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, घटना के दिन लगभग 5 बजे अपराह्न में मृतक की पत्नी गणेशाबाई (अभि. सा. 1) के साथ मृतक द्वारा दुर्व्यवहार किया जा रहा था और उसे गालियां भी दी जा रही थीं और उसी समय अचानक मृतक का बड़ा भाई राम रतन सूर्यवंशी (2011 की दांडिक अपील सं. 712 में का अपीलार्थी) और उसकी पत्नी लक्ष्मिनबाई (2011 की दांडिक अपील सं. 720 में की अपीलार्थी) घटनास्थल पर पहुंचे और मृतक पर हमला किया । यह कथन किया गया है कि घूसों और डंडों से हमला किए जाने के कारण मृतक लक्ष्मी प्रसाद को उसके वक्ष और सिर में क्षतियां पहुंची जो घातक साबित हुई और उनके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई ।

3. मृतक की पत्नी गणेशाबाई (अभि. सा. 1) द्वारा शिकायत किए जाने पर तारीख 27 दिसंबर, 2010 को लगभग 7.15 बजे अपराह्न में अपीलार्थियों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, 324 और 294 के अधीन दंडनीय अभिकथित अपराध कारित करने के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई । औपचारिक अन्वेषण और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन साक्षियों के कथन अभिलिखित किए जाने, शवपरीक्षण रिपोर्ट प्राप्त करने और घटनास्थल से रक्तरंजित मिट्टी तथा मृतक और अपीलार्थियों के कपड़े बरामद करने के पश्चात् न्यायालयिक प्रयोगशाला परीक्षण के लिए भेजा गया और दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, 324 और 294 के अधीन अभिकथित अपराध कारित करने के लिए अपीलार्थियों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया । मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द किए जाने के पश्चात् अपीलार्थियों को अपराध कारित करने के लिए आरोपित किया गया और

उन्होंने अपने दोषी होने से इनकार किया जिसके पश्चात् अभिकथित अपराध के लिए उनका विचारण किया गया ।

अभियोजन पक्ष ने अपना पक्षकथन साबित करने के लिए अन्वेषण अधिकारी, शवपरीक्षण करने वाले चिकित्सक तथा घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों सहित कुल मिलाकर 14 साक्षियों की परीक्षा कराई । अपीलार्थियों के समक्ष अपराधजन्य साक्ष्य से संबंधित सामग्री प्रस्तुत करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उनकी परीक्षा कराई गई । अपीलार्थियों ने किसी भी अपराध के कारित किए जाने से इनकार किया । किसी भी प्रतिरक्षा साक्षी की परीक्षा नहीं कराई गई ।

अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य, विशेषकर गणेशाबाई (अभि. सा. 1), मंगतराम (अभि. सा. 2) और शिव प्रसाद (अभि. सा. 5) जैसे प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य का अवलंब लेने और मानव वध प्रकृति की मृत्यु तथा कारित हुई क्षतियों पर विचार करने पर विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों को पूर्वोक्त रूप में दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया ।

4. दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश की शुद्धता और विधिमान्यता को चुनौती देते हुए, अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क दिया कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का साक्ष्य विश्वास किए जाने योग्य नहीं है क्योंकि या तो उन्होंने अपने कथनों में सुधार किए हैं या उन्हें सिखाया-पढ़ाया गया है । जहां तक मृतक की पत्नी गणेशाबाई (अभि. सा. 1) का संबंध है, यह दलील दी गई है कि उसका आचरण अत्यंत अस्वाभाविक है कि अभिकथित हमले से अपने पति को बचाने के बजाय वह घटनास्थल से चली गई । यह दलील दी गई है कि इस साक्षी के अनुसार भी यह कहा गया है कि झगड़ा आरंभ होते ही वह घटनास्थल से चली गई थी और उसने न्यायालय में दिए गए अपने कथन में बढ़ा-चढ़ाकर यह उल्लेख किया है कि उसने सम्पूर्ण घटना देखी थी । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि इस साक्षी के अनुसार उस मोहल्ले में बहुत से लोग रहते हैं किन्तु अभियोजन पक्ष ने उनमें से साक्षी नहीं बनाया है जिससे अभियोजन का पूर्ण पक्षकथन संदिग्ध हो जाता है । इसके अतिरिक्त यह भी दलील दी गई है कि यद्यपि गणेशाबाई (अभि. सा. 1) ने यह कथन किया है कि यह घटना ग्रामवासियों और बच्चों द्वारा देखी गई है, फिर भी उन बच्चों की परीक्षा नहीं कराई गई

है और पड़ोसियों को भी साक्षी नहीं बनाया गया है, इन व्यक्तियों को साक्षी न बनाए जाने से अभियोजन पक्ष के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकलता है । यह भी दलील दी गई है कि अन्वेषण करने वाले पुलिस अधिकारी द्वारा तैयार किए गए स्थल-नक्शे और पटवारी द्वारा तैयार किए गए नक्शे में घटनास्थल को भिन्न-भिन्न स्थान पर दर्शाया गया है जो कि गणेशाबाई (अभि. सा. 1) द्वारा बताए गए घटनास्थल से मेल नहीं खाता है । गणेशाबाई के अनुसार यह घटना मकान के बरामदे में घटित हुई थी जबकि घटनास्थल के इन नक्शों से स्पष्ट होता है कि घटना मकान के सामने तंग रास्ते (गली) में घटित हुई थी और मृतक का शव गली में पड़ा पाया गया था जिसके संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । यह भी दलील दी गई है कि स्थल-नक्शा पुलिस मैनुअल के निर्देश सं. 747 के अनुसरण में तैयार नही किया गया है और उससे उन साक्षियों के नाम भी उपदर्शित नहीं होते हैं जिनको नक्शा तैयार करने के लिए अन्वेषण अभिकरण द्वारा घटनास्थल पर बुलाया गया था ।

5. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के अनुसार अभियोजन पक्ष नैसर्गिक साक्षियों की परीक्षा कराने में असफल रहा है जो कि निकट पड़ोसी थी और इस बात से यह दर्शित होता है कि अभियोजन पक्ष ने न्यायालय के समक्ष सत्य प्रस्तुत नहीं किया है । जहां तक अन्य दो साक्षियों अर्थात् मंगतराम (अभि. सा. 2) और कुमार सानू (अभि. सा. 9) का संबंध है यह दलील दी गई है कि वे बनावटी साक्षी हैं, वे घटना के समय घटनास्थल पर मौजूद नहीं थे और अपीलार्थियों और मृतक के मकानों के बीच की दूरी को ध्यान में रखते हुए यह अत्यंत असंभाव्य है कि उन्होंने मृतक को देखा हो । जो व्यक्ति निकट पड़ोसी थे, अभियोजन पक्ष द्वारा उन्हें साक्षी नहीं बनाया गया है । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल की यह भी दलील है कि तथाकथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का साक्ष्य विश्वास करने योग्य नहीं है क्योंकि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य का खण्डन मृतक के शरीर पर पाई गई क्षतियों की प्रकृति से होता है । विद्वान् काउंसेल की यह दलील है कि अभि. सा. 1 के अनुसार अपीलार्थी मृतक का गला घोंटना चाहते थे और इसके पश्चात् उन्होंने उसके गुप्तांगों पर लाठी से वार किया किन्तु शवपरीक्षण रिपोर्ट से मृतक के शरीर पर ऐसी कोई क्षति दर्शित नहीं होती है जिससे यह साबित होता हो कि वास्तव में अभि. सा. 1 ने घटना नहीं देखी थी और यही कारण है कि उसने यह कथन किया है कि लड़ाई आरंभ होने के तत्काल पश्चात् वह सरपंच को बुलाने चली गई थी । ज्ञापन

के आधार पर लाठी का अभिगृहीत किया जाना अत्यंत संदिग्ध और असंभावी है और किसी भी स्थिति में इससे कोई परिणाम नहीं निकल सकता क्योंकि कहीं भी मानव रक्त नहीं पाया गया है और अभियोजन पक्ष द्वारा मृतक के रक्त की जांच भी नहीं कराई गई है ।

6. अन्त में यह दलील दी गई है कि यदि अभियोजन के सम्पूर्ण वृत्तांत को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया जाए, तब भी अपीलार्थियों की ओर से कोई भी पूर्व-चिन्तन नहीं किया गया था । मृतक, अपीलार्थी राम रतन का सगा भाई था और इसका कोई कारण नहीं है कि वह अपने ही भाई की हत्या क्यों करेगा । अचानक क्षणभर में ऐसा हुआ कि मृतक की पत्नी (अभि. सा. 1) ने यह शिकायत की कि उसको उसके पति द्वारा गाली दी जा रही है, धमकाया जा रहा है और हमला किया जा रहा है और इस पर अपीलार्थी अपने मकान से बाहर आए और उन्होंने मृतक को केवल सबक सिखाने के लिए उस पर हमला कर दिया हो किन्तु उनका आशय हत्या करने का नहीं था । आरंभ में कोई भी घातक आयुध वहां नहीं लाया गया और अभि. सा. 1 के अनुसार भी लाठी (डंडा) घर से बाद में लाया गया था । अपीलार्थियों ने पहले ही साढ़े छह वर्ष से अधिक अवधि का दंडादेश भोग लिया है और इन परिस्थितियों में अपीलार्थियों की दोषसिद्धि दंड संहिता की धारा 304, भाग II में परिवर्तित की जा सकती है ।

7. इसके प्रतिकूल, राज्य के विद्वान् काउंसेल ने दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश का समर्थन करते हुए यह दलील दी है कि प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा ईंगित किए गए विरोधाभास और लोपों से अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 9 जैसे तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का प्रत्यक्ष परिसाक्ष्य का त्यक्त नहीं किया जा सकता जिन्होंने पूरी तरह अभियोजन पक्षकथन का समर्थन किया है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि मृतक की पत्नी (अभि. सा. 1) की प्रतिपरीक्षा से ऐसी कोई सामग्री प्राप्त नहीं होती है जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि उसने अपीलार्थी को मिथ्या फंसाया है जबकि वे उसके अपने नातेदार हैं और ऐसी भी कोई सामग्री प्राप्त नहीं होती है कि मृतक की पत्नी ने ऐसे वास्तविक अपराधी को छोड़ दिया हो जिसने उसके पति की हत्या की है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि मृतक की पत्नी के प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य की संपुष्टि अभियोजन पक्ष के अन्य दो स्वतंत्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य से होती है जो मृतक के पड़ोसी हैं, इस आधार पर अभियोजन पक्षकथन पूर्णतया साबित होता है । अपीलार्थियों ने न केवल हाथों से अपितु लाठियों से भी मृतक के माथे और

सिर पर निरन्तर वार किए हैं जिससे स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि हत्या करने का आशय था और ऐसे आशय और जानकारी के साथ मृतक के नाजुक अंगों पर वार किए गए जो घातक साबित हुए, अतः, इस दोषसिद्धि में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

8. लक्ष्मी प्रसाद का मानव वध सारभूत रूप से विवादित नहीं है । प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अर्थात् अभि. सा. 1 द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उल्लिखित कथन से स्पष्ट रूप से यह साबित होता है कि घटनास्थल पर झगड़ा हुआ था जिसमें मृतक लक्ष्मी प्रसाद पर दोनों अपीलार्थियों द्वारा पहले हमला किया गया था । यह केवल प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में ही नहीं कहा गया है अपितु इसका उल्लेख मर्ग सूचना में भी किया गया है । अभि. सा. 1 द्वारा घटना के संबंध में दिए गए प्रत्यक्ष साक्ष्य से यह साबित होता है कि अपीलार्थियों ने मृतक पर हमला किया था । इस साक्षी के अनुसार, पहले हाथ और घूसों से मृतक पर हमला किया गया था, उसे नीचे गिराया गया और उसका गला घोंटने का प्रयास किया गया और इसके पश्चात् अपीलार्थी लक्ष्मिनबाई अपने घर से डंडा लेकर आई और इसके पश्चात् यह कथन किया गया है कि इस डंडे से कई वार किए गए जिसमें से एक वार मृतक के सिर पर भी किया गया । यही साक्ष्य अन्य दो साक्षियों अर्थात् मंगत राम (अभि. सा. 2) और कुमार सानू (अभि. सा. 9) द्वारा दिया गया है ।

9. डा. राजेन्द्र सिंह मारावी (अभि. सा. 8) द्वारा शवपरीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श पी.13) सम्यक् रूप से साबित की गई है । चिकित्सक ने शवपरीक्षण के दौरान यह निष्कर्ष निकाला है कि सिर में सूजन है; ठुड्डी के नीचे 2 सेमी. × 2 सेमी. × 2 सेमी. माप का विदीर्ण घाव है, आंखें संकुचित हैं; दायां कान फटा हुआ है; दाईं भौंह उसके निकट की अस्थि दबी हुई है; नाक और जबड़े की अस्थियों में अस्थिभंग है; दाईं पार्श्विक अस्थि में अस्थिभंग है । वक्ष के दोनों ओर सूजन है और उससे जुड़ी मांसपेशियां विदीर्ण हैं तथा मृत्युजकाठिन्य पाया गया है । चिकित्सक ने यह भी राय व्यक्त की है कि मृत्यु का कारण फेफड़ों के सुचारु रूप से कार्य न करने के परिणामस्वरूप अचानक हृदय की गति रुक जाना है । चिकित्सक ने यह कथन किया है कि क्षति की प्रकृति घोर पाई गई है । चिकित्सक के इस साक्ष्य के आधार पर, उसकी प्रतिपरीक्षा से अन्यथा अर्थ निकालने के लिए कोई भी तथ्य सामने नहीं आया है । अतः, अभियोजन पक्ष द्वारा साबित किए गए मौखिक और चिकित्सीय साक्ष्य से किसी प्रकार का यह

संदेह नहीं होता है कि लक्ष्मी प्रसाद की मृत्यु मानव वध से हुई है ।

10. अभियोजन पक्ष द्वारा कई साक्षियों की परीक्षा कराई गई है जिनमें से कम से कम तीन साक्षी ऐसे हैं जिनमें मृतक की पत्नी भी है, अभियोजन पक्षकथन का पूर्णतया समर्थन किया है और इन साक्षियों को घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में परीक्षा कराई गई है । श्रीमती गणेशाबाई (अभि. सा. 1) ने स्पष्ट रूप से अपने साक्ष्य में यह उल्लेख किया है कि यद्यपि शुरू-शुरू में (पति-पत्नी के बीच) सौहार्द संबंध थे किन्तु बाद में अलग-अलग होने पर संबंध तनावपूर्ण हो गए । घटना के संबंध में, गणेशाबाई ने यह कथन किया है कि जब उसका पति लगभग 4 बजे अपराह्न में वापस आया, वह बच्चों के साथ ग्राम की ओर चला गया । साक्षियों के अनुसार, जब उसका पति कृषि उत्पादन की दुर्दशा के बारे में बता रहा था तब उसके देवर-देवरानी (अपीलार्थी राम रतन और लक्ष्मिनबाई) घटनास्थल पर यह समझकर पहुंचे कि उनके बीच झगड़ा चल रहा है और इस प्रक्रम पर देवरानी ने उसके पति को बुरा-भला कहा । इस प्रक्रम पर राम रतन ने झगड़े का कारण पूछा और इसके पश्चात् दोनों ओर से गाली-गलौज होने लगी जिसके परिणामस्वरूप झगड़ा हो गया और उस झगड़े में उसके पति को जमीन पर गिरा दिया । उसका गला दबाकर श्वासावरोध करने का प्रयास किया गया और झगड़े के इसी दौरान उसकी देवरानी लक्ष्मिनबाई एक डंडा लाई और उसके पश्चात् उसके पति के गुप्तांग पर हमला किया । इसके पश्चात् उसके पति के नाक, सिर, मुंह और उसके आस-पास क्षति पहुंचाई जो गंभीर प्रकृति की साबित हुई और उसके शरीर से रक्त बहने लगा, इसके पश्चात् गणेशाबाई ग्राम के सरपंच को बुलाने चली गई । इस साक्षी के अनुसार, इस घटना को उसके बच्चों अर्थात् सपना और समीर तथा अन्य पड़ोसियों ने भी देखा था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में, इस साक्षी ने यह कथन किया है कि इस घटना को पड़ोसियों और बच्चों ने देखा है । इस साक्षी की विस्तार से प्रतिपरीक्षा कराई गई है । उसने यह स्वीकार किया है कि मृतक और अपीलार्थी राम रतन सगे भाई हैं । इस साक्षी के अनुसार, विभाजन पहले ही हो चुका था । गणेशाबाई ने इस सुझाव को स्वीकार किया है कि विभाजन के पश्चात् संबंध तनावपूर्ण हो गए थे । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि यह घटना सायंकाल लगभग 5 बजे घटित हुई थी । इस साक्षी के अनुसार, साक्षी केवल घटना देख रहे थे किन्तु किसी भी साक्षी ने गणेशाबाई के पति को बचाने का प्रयास नहीं

किया और उसने भी ऐसा कोई प्रयास नहीं किया और जैसे ही झगड़ा आरंभ हुआ था, वह सरपंच को बुलाने चली गई थी । इस सुझाव से इनकार किया गया है कि मृतक गालियां देते हुआ कुल्हाड़ी लेकर सामने आया था और उसने दरवाजे पर कुल्हाड़ी मारी थी तथा उसके पति के साथ दो दिन पूर्व झगड़ा किया था । अभिलेख पर अन्य कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह दर्शित होता हो कि वर्तमान घटना ऐसी घटना के परिणामस्वरूप घटित हुई है जो इस घटना के तत्काल पूर्व घटित हुई थी ।

अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की यह दलील कि इस साक्षी का यह आचरण कि उसने पति को बचाने का प्रयास नहीं किया था बल्कि सरपंच को बुलाने चली गई, इतना अस्वाभाविक है कि उसका सम्पूर्ण कथन अविश्वसनीय हो जाता है और उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता । भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की किसी विशेष तथ्यात्मक स्थिति में भिन्न-भिन्न प्रतिक्रिया होती है । इस साक्षी के अनुसार, उसके पति को उसका सगा भाई और भाभी हमला कर रहे थे । यदि इन परिस्थितियों में वह सरपंच को विवाद निपटाने के लिए बुलाने गई थी, तब यह नहीं कहा जा सकता है कि उसका आचरण अप्राकृतिक है । यह कोई ऐसा झगड़ा नहीं था जो दो अज्ञात व्यक्तियों के बीच हो रहा था अपितु दो भाइयों के बीच घरेलू लड़ाई थी और इस साक्षी के अनुसार भी अपीलार्थियों के पास आरंभ में हथियार नहीं थे । अतः, इस साक्षी के लिए घटनास्थल से चले जाना और सरपंच को बुलाना स्वयं में उसके पहले साक्ष्य को अविश्वसनीय नहीं ठहराता है । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की अन्य दलील यह है कि यह स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि इस साक्षी ने वास्तव में घटना के दौरान हमला होते हुए नहीं देखा है जिसका यह कारण है कि वह मृतक की पत्नी थी और घटनास्थल पर उसका मौजूद होना अस्वाभाविक या असंभावी नहीं हो सकता । इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से घटना घटित होने की रीति के संबंध में कथन किया है । मात्र इस कारण से कि उसने यह कथन किया है कि घटना के शुरू होने के पश्चात् ही वह सरपंच को बुलाने चली गई थी, यह नहीं कहा जा सकता है कि उसने घटना नहीं देखी है या उसकी मुख्य परीक्षा के दौरान उसके द्वारा किया गया कथन कोई अगोपित कृत्य है । इस साक्षी ने वही नैसर्गिक साक्ष्य दिया है जो उसने सरपंच को बुलाए जाने के लिए घटनास्थल को छोड़ने के पूर्व देखा था ।

द्वितीयतः, अभि.सा. 1 के साक्ष्य कि पुष्टि कम से कम अभियोजन पक्ष

के दो साक्षियों अर्थात् मंगतराम (अभि. सा. 2) और कुमार सानू (अभि. सा. 9) के साक्ष्य से होती है ।

अभि. सा. 2 ने अपनी प्रतिपरीक्षा को दौरान यह कथन किया है कि वह मृतक का नातेदार है । इस साक्षी के अनुसार, वह मृतक के मकान से चार या पांच मकान दूर रहता है । अतः, वह पड़ोसी और नातेदार होने के कारण इस घटना का नैसर्गिक साक्षी प्रतीत होता है । इस साक्षी ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया है कि जब वह लगभग 5.00-5.30 बजे अपराह्न में वापस आ रहा था, तब उसने देखा कि लक्ष्मी प्रसाद पर अपीलार्थी राम रतन और लक्ष्मिनबाई द्वारा हमला किया जा रहा है । इस साक्षी की प्रतिपरीक्षा से ऐसी कोई सामग्री उद्धृत नहीं होती है जिससे उसके परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय ठहराया जा सके।

ऐसा ही साक्ष्य कुमार सानू (अभि. सा. 9) ने दिया है जिससे यह दर्शित होता है कि जब वे अपने मकान के बाहर आया उसने राम रतन और लक्ष्मिनबाई को लक्ष्मी प्रसाद पर डंडे से हमला करते हुए देखा और लक्ष्मी प्रसाद को नीचे गिरते हुए भी देखा । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह कथन किया है कि उसका घर राम रतन के घर से लगभग 40 फुट की दूरी पर है जिसका यह अर्थ हुआ कि यह साक्षी भी मृतक और अपीलार्थी राम रतन के मकान के निकट रहने वाला पड़ोसी है । इस साक्षी के कथन से ऐसी कोई सामग्री सामने नहीं आई है जिसके आधार पर उसके इस परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय ठहराया जा सके कि उसने यह घटना नहीं देखी थी ।

11. अभि. सा. 1, अभि.सा. 2 और अभि. सा. 9 के प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य से अभियोजन पक्ष द्वारा संदेह के परे यह साबित कर दिया गया है कि मृतक के घर के सामने झगड़े की घटना घटित हुई थी और इस घटना में अपीलार्थियों ने घूसों और डंडों से मृतक पर हमला किया था और कारित हुई क्षतियां घातक साबित हुई हैं जिनके परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है ।

12. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने न्यायालय के समक्ष यह भी दलील दी है कि बच्चों और अन्य ग्रामवासियों तथा निकट पड़ोसियों की अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा नहीं कराई गई है जिसके आधार पर अभियोजन पक्ष के प्रति प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । हम इस दलील से सहमत नहीं हैं क्योंकि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में तथा न्यायालय में

दिए गए कथन में अभि. सा. 1 ने स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया है कि इस घटना को ग्रामवासियों ने देखा है । मृतक की पत्नी ने ग्राम के किसी भी पड़ोसी विशेष का नाम नहीं बताया है ताकि यह कहा जा सकता कि अभियोजन पक्ष ने उस साक्षी की परीक्षा नहीं कराई और ऐसे साक्ष्य को प्रस्तुत करने में असफल रहा । वास्तव में, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 9 मृतक के पड़ोसी हैं और इसीलिए उनके परिसाक्ष्य से अभियोजन पक्षकथन, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट कहे गए तथ्यों तथा अभि. सा. 1 द्वारा न्यायालय में दिए गए कथन का समर्थन होता है कि ग्रामवासियों ने यह घटना देखी थी । दो बच्चों की परीक्षा न कराए जाने से, मामले की परिस्थितियों के आधार पर, प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता । जब एक बार मृतक की पत्नी और अन्य दो साक्षियों जो कि पड़ोसी हैं, का साक्ष्य विश्वसनीय पाया गया है, तब हम मात्र इस आधार पर उनके परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय ठहराने के आनत नहीं हैं कि मृतक के अप्राप्तवय बच्चों की परीक्षा नहीं कराई गई थी । यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 9 का साक्ष्य इतना विरोधाभासी हो कि घटना के बाद साक्षियों के साक्ष्य से संपुष्टि कराए बिना दोषसिद्धि करना उचित न होता ।

13. ऐसा अभिनिर्धारित किए जाने के पश्चात् विचार के लिए अगला प्रश्न यह है कि क्या दंड संहिता की धारा 302 के अधीन की गई दोषसिद्धि उचित है या यह ऐसा मामला है जिसमें दोषसिद्धि घटना की पृष्ठभूमि, पक्षकारों के बीच नातेदारी और आवेग की त्रीवता जिसके कारण घटना घटित हुई, को दृष्टिगत करते हुए दंड संहिता की धारा 304, भाग II में परिवर्तित कर दी जाए ।

14. अभियोजन पक्ष द्वारा ही ठोस साक्ष्य अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया है कि अपीलार्थी राम रतन मृतक लक्ष्मी प्रसाद का सगा भाई है और अपीलार्थी लक्ष्मिनबाई राम रतन की की पत्नी है । अभि. सा. 1 अभियोजन पक्ष का सबसे महत्वपूर्ण साक्षी है जो कि मृतक लक्ष्मी प्रसाद की पत्नी है । उसके साक्ष्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि अचानक झगड़ा होने की घटना उस समय घटित हुई जब इस साक्षी के साथ अभि. सा. 1 के पति द्वारा दुर्व्यवहार किया जा रहा था जिसके परिणामस्वरूप कहा-सुनी हुई और एक ओर अपीलार्थी और दूसरी ओर मृतक लक्ष्मी प्रसाद के बीच घटनास्थल पर ही गाली-गलौच हुई ।

प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अर्थात् अभि. सा. 2 ने यह साक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी मृतक पर हाथों और मुक्कों से हमला कर रहे थे । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के पैरा 4 में यह कथन किया है कि मृतक लक्ष्मी प्रसाद और अपीलार्थी राम रतन एक दूसरे के साथ गुथ-मुथ हो गए थे । इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से यह भी कथन किया है कि उनके हाथों में कोई भी हथियार नहीं थे और वे एक दूसरे पर मुक्कों से वार कर रहे थे । कुमार सानू (अभि. सा. 9) ने भी यह कथन किया है कि अपीलार्थी राम रतन और उसकी पत्नी लक्ष्मिन बाई द्वारा हमला किया जा रहा था । इन साक्षियों ने यह भी कथन किया है कि विभाजन के पश्चात् प्रायः दोनों भाइयों में झगड़ा हुआ करता था ।

15. अभिलेख पर प्रस्तुत पूर्वोक्त साक्ष्य का संचयी रूप से परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी और मृतक के बीच जो झगड़ा हुआ था वह उस समय अचानक घटित हुआ था जब मृतक की पत्नी गणेशाबाई को उसका पति फटकार रहा था और अपीलार्थी राम रतन और लक्ष्मिन बाई का ध्यान शोर की ओर गया जो अगले ही मकान में रहते हैं । साक्ष्य से यह भी साबित होता है कि उनके बाहर आने के पश्चात् उन्होंने झगड़े का कारण पूछा, इसके पश्चात् कहा-सुनी हुई जिसके उपरान्त मृतक और अपीलार्थी लक्ष्मिन बाई के बीच गाली-गलौज होने लगी और इसके बाद एक-दूसरे पर हाथों और मुक्कों से हमला करने लगे । यह कथन किया गया है कि साक्ष्य में यह उल्लेख किया गया है कि यह कथन किया गया है कि इस झगड़े के दौरान लक्ष्मिनबाई अपने घर से डंडा लेकर आई और मृतक के सिर पर हमला किया । परिस्थितियों से कुल मिलाकर यह दर्शित होता है कि यह झगड़ा मृतक और उसकी भाभी के बीच आवेग की त्रीवता में एक तुच्छ मुद्दे को लेकर अचानक हुआ था कि मृतक अपनी पत्नी के साथ दुर्व्यवहार करता है और उसके साथ झगड़ा करता है । आरंभ में अपीलार्थियों के पास हथियार नहीं थे । हथियार का प्रयोग केवल तब किया गया जब राम रतन और मृतक लक्ष्मी प्रसाद एक-दूसरे के साथ गुथ-मुथ हो गए थे और मुक्कों से वार कर रहे थे तब अचानक लक्ष्मिन बाई अपने घर से डंडा लेकर आई जिससे लक्ष्मी प्रसाद पर हमला किया गया । इस झगड़े में लक्ष्मी प्रसाद के सिर पर हमला किया गया जो घातक साबित हुआ । कई क्षतियों की प्रकृति से यह नहीं कहा जा सकता है कि

अपीलार्थियों ने कोई सम्यक् लाभ उठाया है या कोई क्रूरतापूर्ण कार्य किया है । अतः, इन परिस्थितियों में हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि यह ऐसा मामला है जिसमें अपीलार्थियों द्वारा किया गया मामला अचानक और गंभीर प्रकोपन तथा बिना किसी पूर्व-चिन्तन के आवेग की तीव्रता में किए गए कृत्य संबंधी स्पष्टीकरण खंड के अन्तर्गत पूरी तरह आता है । इस प्रकार, साबित किए गए तथ्यों से केवल हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अपराध के लिए दोषसिद्धि न्यायोचित ठहराई जा सकती है । परिणामतः, हम दंड संहिता की धारा 302 में की गई अपीलार्थी की दोषसिद्धि, धारा 304, भाग II में परिवर्तित करने के लिए आनत हैं क्योंकि अपीलार्थी हत्या के नहीं अपितु हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अपराध के दोषी हैं ।

16. परिस्थितियों की सम्पूर्णता को दृष्टिगत करते हुए, दंड संहिता की धारा 304, भाग II के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि केवल उस अवधि के कारावास के लिए की जाती है जो उसने पहले से भोग रखा है जिसकी अवधि साढ़े छह वर्ष से अधिक है । परिणामतः, अपीलें भागतः मंजूर की जाती हैं और अपीलार्थियों को, यदि वे अन्य किसी मामले में वांछित नहीं हैं, तत्काल छोड़ा जाए ।

अपीलें भागतः मंजूर की गईं ।

अस.

श्रवण कुमार

बनाम

राजस्थान राज्य

तारीख 10 जुलाई, 2017

न्यायमूर्ति मोहम्मद रफीक और न्यायमूर्ति कैलाश चन्द्र शर्मा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 458 और 392 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 और 24] – हत्या, लूट और गृह अतिचार का अभिकथन – साक्ष्य का मूल्यांकन – घटना के समय घटनास्थल पर अभियुक्त की मौजूदगी को लेकर असंगत साक्ष्य – साक्ष्य की शृंखला का अपूर्ण होना – प्रत्यक्षदर्शी साक्षी ने इस बात से इनकार किया है कि उसने अपीलार्थी को घटना की रात में मृतका के मकान के बाहर देखा था और इसके अतिरिक्त अपीलार्थी का सूचना पाकर तुरन्त घर वापस आना अप्राकृतिक नहीं कहा जा सकता और न ही उस पर संदेह किया जा सकता है जिससे उसके विरुद्ध साक्ष्य की शृंखला अपूर्ण दिखाई देती है, अतः अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषमुक्ति में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

वर्तमान अपील में संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 18 फरवरी, 2011 को शिकायतकर्ता चिम्मन सिंह ने कुछ अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध पुलिस थाना कोटकासिम में अभिकथित रूप से उसी दिन घटित घटना के संबंध में रिपोर्ट दर्ज कराई । उक्त रिपोर्ट में शिकायतकर्ता द्वारा यह अभिकथन किया गया था कि तारीख 17 फरवरी, 2011 को वह अपने पुत्र देवेन्द्र और पुत्रवधु के साथ शहर से बाहर गया था और घर पर उसकी पत्नी सावित्री देवी अकेली मौजूद थी । तारीख 18 फरवरी, 2011 को एक ग्रामवासी अर्थात् राजू ने उसे टेलीफोन पर बताया कि किसी व्यक्ति ने उसकी पत्नी सावित्री देवी की हत्या कर दी है । इस सूचना के प्राप्त होने पर वह अपने ग्राम पहुंचा और ग्रामवासियों की मौजूदगी में उसने देखा कि उसकी पत्नी सावित्री देवी चारपाई पर मृत पड़ी हुई है । उसने यह अभिकथन किया है कि कुछ अज्ञात व्यक्तियों ने उसकी पत्नी की हत्या की है और उसके संदूक और अलमारी में रखे हुए आभूषणों की चोरी भी की है । ऊपर उल्लिखित रिपोर्ट के आधार पर, पुलिस ने दंड संहिता की धारा

450 और 380 के अधीन अपराध के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 31/2000 दर्ज की और मामले में अन्वेषण किया । अन्वेषण पूरा होने के पश्चात्, पुलिस ने विद्वान् अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, किशनगढ़ बास, अलवर के समक्ष अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया और उक्त न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मामले का संज्ञान लिया । अपराध एकमात्र रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय होने के कारण, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने मामले को विचारण के लिए विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, किशनगढ़ बास, जिला अलवर को भेज दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने दलीलें सुनने के पश्चात् अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 458, 302 और 392 के अधीन आरोप विरचित किए । अभियुक्त-अपीलार्थी ने आरोप से इनकार किया और विचारण की मांग की । विचारण के दौरान, अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 17 साक्षियों की परीक्षा कराई और 25 दस्तावेज प्रदर्शित किए । विद्वान् विचारण न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थी की परीक्षा की जिसमें उसने सभी आरोपों से इनकार किया और यह कथन किया कि उसे पुलिस द्वारा मिथ्या फंसाया गया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को सुनने के पश्चात् तारीख 5 अगस्त, 2013 के आक्षेपित निर्णय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 458, 302 और 392 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और ऊपर कथित रूप में दंडादिष्ट किया । इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोजन पक्ष ने तारा देवी (अभि. सा. 8) को यह साबित करने के लिए प्रस्तुत किया है कि अभियुक्त मृतका के मकान के सामने देखा गया था जब महिलाएं पूर्ववर्ती रात्रि में दाताराम के घर से वापस आ रही थीं जहां वे महिलाएं संगीत कार्यक्रम देखने गई हुई थीं । जब तारा देवी से इस तथ्य के बारे में मालूम किया, तब उसने इस बात से इनकार किया कि उसने अभियुक्त-अपीलार्थी को घटना की रात में मृतका के मकान के बाहर देखा था । बल्कि इस साक्षी ने यह कथन किया है कि उसने चिम्मन के मकान के निकट किसी भी व्यक्ति को नहीं देखा था और यह भी कथन किया है कि उसने पुलिस को ऐसा कोई भी कथन (प्रदर्श पी. 13) नहीं दिया था । इस प्रकार इस साक्षी को पक्षद्रोही घोषित किया गया है । राजेन्द्र (अभि. सा. 9) अभियुक्त-अपीलार्थी का सह-साक्षी ने यह कथन किया है कि श्रवण की पत्नी ने इस घटना के डेढ़ मास पूर्व एक

बालक को जन्म दिया था और यह कि श्रवण कुमार कुंआ पूजन के लिए अपने घर जाना चाहता था । इस साक्षी ने यह कथन किया है कि श्रवण दूध लेने के लिए मृतका के घर आया करता था । तारीख 18 फरवरी, 2011 को प्रातःकाल अभियुक्त के अपने ग्राम के लिए रवाना होने के पश्चात् अभि. सा. 9 को यह पता चला कि किसी व्यक्ति ने सावित्री देवी की हत्या कर दी है । उसने श्रवण को फोन किया और वापस आने को कहा वरना लोग श्रवण कुमार को हत्यारा समझेगें । श्रवण तुरन्त वापस आया । अपनी प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 9 ने यह कथन किया है कि श्रवण प्रातःकाल ही रवाना हो गया था और उसे सावित्री की हत्या के बारे में लगभग 7.30 बजे पूर्वाह्न में जानकारी मिली थी और इसके पश्चात् उसने श्रवण कुमार को फोन किया था । श्रवण कुमार के इस आचरण को अप्राकृतिक नहीं कहा जा सकता है और उस पर संदेह नहीं किया जा सकता । मनुष्य का सामान्य आचरण ऐसा होता है कि यदि उसने हत्या की है तब वह अपने सह-कक्षी राजेन्द्र द्वारा दिए गए सुझाव को स्वीकार करते हुए वापस न आता । वीर सिंह (अभि. सा. 10) के कथन का अवलंब लेते हुए अभियोजन पक्ष द्वारा यह साबित करना कि अभियुक्त ने अभि. सा. 10 की मौजूदगी में न्यायेतर संस्वीकृति कथन दिया था, पूर्णतया गलत है । इस साक्षी ने स्वीकृत रूप से पुलिस को दिए गए अपने कथन में इस प्रकार की कोई भी बात नहीं कही थी । इस साक्षी ने न्यायालय में पहली बार यह कहा है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने पुलिस द्वारा पूछताछ किए जाने के दौरान सावित्री की हत्या करने का दोष स्वीकार किया था और इसके पश्चात् अपने ग्राम कोटकासिम तारीख 18 फरवरी, 2011 को 6 बजे पूर्वाह्न में रवाना हो गया था और इसके पश्चात् राजेन्द्र ने उसे वापस बुलाया । जहां तक इस तथ्य का संबंध है कि वह राजेन्द्र के कहने पर वापस आ गया था, इसकी संपुष्टि स्वयं राजेन्द्र के साक्ष्य से होती है और इसमें कुछ भी अप्राकृतिक नहीं है किन्तु न्यायेतर संस्वीकृति कथन को विधिमान्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता जिसके दो कारण हैं, पहला यह कि वीर सिंह (अभि. सा. 10) ने तारीख 21 फरवरी, 2011 को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन पुलिस को दिए गए अपने कथन (प्रदर्श डी. 4) में ऐसी कोई बात नहीं कही है और दूसरा यह कारण है कि पुलिस कार्मिकों की मौजूदगी में दिया गया ऐसा अभिकथित संस्वीकृति कथन साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 25 और 26 के अनुसार साक्ष्य की दृष्टि से ग्राह्य नहीं होगा । वास्तव में, जल कौर

ने यह कथन किया है कि जब उसने इन्द्रा (अभि. सा. 6) के साथ मृतका को चारपाई पर पड़े हुए पहली बार देखा तब उसके कान में एक बाली नहीं थी और उसके गले का हार टूटा हुआ था । यदि अभियुक्त ने वास्तव में मृतका की हत्या धन और आभूषणों को पाने के लालच में की थी, तब वह किसी भी स्थिति में गले के टूटे हुए हार को वहां पर नहीं छोड़ता । अतः, इसी कारण अभियुक्त के कमरे से कान की बाली और एल. आई. सी. की चांदी के शील्ड की अभियुक्त के कहने पर प्रदर्श पी. 11 के अनुसार दर्शाई गई बरामदगी पर विश्वास करने के लिए आनत नहीं है । यदि अभियुक्त ने, जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा दावा किया गया है, कुंआ पूजन हेतु इन वस्तुओं को पाने के लिए हत्या की होती तब वह इन्हें अपने कमरे में हत्या के अपराध में पुलिस द्वारा फंसाए जाने के लिए सबूत के रूप में नहीं छोड़ता । इसके पश्चात् चिम्मन सिंह (अभि. सा. 1) ने स्वयं थाने के भारसाधक अधिकारी के समक्ष पत्र प्रदर्श पी. 8 प्रस्तुत किया जिसमें यह सूचना दी गई कि ऊपर उल्लिखित अभिकथित रूप से लूटे गए सभी आभूषण घर में ही पाए गए हैं । इसके अतिरिक्त, प्रदर्श पी. 10 के अनुसार की गई कैंची की बरामदगी, जिसे अभियुक्त-अपीलार्थी से संबद्ध किया गया है, पुलिस द्वारा अन्वेषण में की गई हेरा-फेरी का परिणाम प्रतीत होती है क्योंकि यह कैंची मृतका के घर से बरामद की गई थी और यही बात चिम्मन सिंह (अभि. सा. 1) ने स्वयं कही है और इस साक्ष्य से मुश्किल से ही अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध कोई तथ्य साबित होता है । अतः, उपरोक्त विश्लेषण को दृष्टिगत करते हुए यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप युक्तियुक्त संदेह के परे साबित कर दिए गए हैं । अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध परिस्थितियों की शृंखला में बहुत सी कड़ियां नहीं हैं क्योंकि केवल परिस्थितियां ही विश्वसनीय साक्ष्य से साबित नहीं की गई हैं अपितु ये सभी परिस्थितियां एक साथ मिलकर साक्ष्य की पूर्ण शृंखला भी नहीं बनाती हैं ताकि अन्य किसी व्यक्ति पर नहीं बल्कि अभियुक्त-अपीलार्थी पर ही बिना किसी त्रुटि के संदेह किया जाता और साक्ष्य की इस अपूर्ण शृंखला से ऐसी किसी भी परिकल्पना से इनकार नहीं किया जा सकता जो उसके निर्दोष होने के साथ मेल खाती है । इन परिस्थितियों में, आक्षेपित निर्णय कायम नहीं रखा जा सकता । (पैरा 15, 16, 17, 19 और 20)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2013 की दांडिक अपील सं. 725.

2011 के सेशन मामला सं. 16 में अपर सेशन न्यायाधीश, किशनगढ़ बास, जिला अलवर द्वारा तारीख 5 अगस्त, 2013 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री गुरविंदर सिंह

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री सोनिया शांडिल्य

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मोहम्मद रफीक ने दिया ।

न्या. रफीक – यह अपील अभियुक्त-अपीलार्थी श्रवण कुमार की ओर से 2011 के सेशन मामला सं. 16 में अपर सेशन न्यायाधीश, किशनगढ़ बास, जिला अलवर द्वारा तारीख 5 अगस्त, 2013 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है । अभियुक्त-अपीलार्थी को उपरोक्त निर्णय द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कारावास तथा 20,000/- रुपए जुर्माने से जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर एक वर्ष के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया गया है । अभियुक्त-अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 458 के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया है और 7 वर्ष के कठोर कारावास और 20,000/- हजार रुपए के जुर्माने से जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर एक वर्ष के अतिरिक्त के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया गया है । उसे दंड संहिता की धारा 392 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया है और पांच वर्ष के कठोर कारावास तथा 20,000/- हजार रुपए के जुर्माने से जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर एक वर्ष के अतिरिक्त के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया गया है । सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलाए जाने का आदेश किया गया है ।

2. वर्तमान अपील में संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 18 फरवरी, 2011 को शिकायतकर्ता चिम्मन सिंह ने कुछ अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध पुलिस थाना कोटकासिम में अभिकथित रूप से उसी दिन घटित घटना के संबंध में रिपोर्ट दर्ज कराई । उक्त रिपोर्ट में शिकायतकर्ता द्वारा यह अभिकथन किया गया था कि तारीख 17 फरवरी, 2011 को वह अपने पुत्र देवेन्द्र और पुत्रवधु के साथ शहर से बाहर गया था और घर पर उसकी पत्नी सावित्री देवी अकेली मौजूद थी । तारीख 18 फरवरी, 2011 को एक ग्रामवासी अर्थात् राजू ने उसे टेलीफोन पर बताया कि किसी व्यक्ति ने उसकी पत्नी सावित्री देवी की हत्या कर दी है । इस सूचना के प्राप्त होने

पर वह अपने ग्राम पहुंचा और ग्रामवासियों की मौजूदगी में उसने देखा कि उसकी पत्नी सावित्री देवी चारपाई पर मृत पड़ी हुई है । उसने यह अभिकथन किया है कि कुछ अज्ञात व्यक्तियों ने उसकी पत्नी की हत्या की है और उसके संदूक और अलमारी में रखे हुए आभूषणों की चोरी भी की है ।

3. ऊपर उल्लिखित रिपोर्ट के आधार पर, पुलिस ने दंड संहिता की धारा 450 और 380 के अधीन अपराध के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 31/2000 दर्ज की और मामले में अन्वेषण किया । अन्वेषण पूरा होने के पश्चात्, पुलिस ने विद्वान् अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, किशनगढ़ बास, अलवर के समक्ष अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया और उक्त न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मामले का संज्ञान लिया । अपराध एकमात्र रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय होने के कारण, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने मामले को विचारण के लिए विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, किशनगढ़ बास, जिला अलवर को भेज दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने दलीलें सुनने के पश्चात् अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 458, 302 और 392 के अधीन आरोप विरचित किए । अभियुक्त-अपीलार्थी ने आरोप से इनकार किया और विचारण की मांग की । विचारण के दौरान, अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 17 साक्षियों की परीक्षा कराई और 25 दस्तावेज प्रदर्शित किए । विद्वान् विचारण न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थी की परीक्षा की जिसमें उसने सभी आरोपों से इनकार किया और यह कथन किया कि उसे पुलिस द्वारा मिथ्या फंसाया गया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को सुनने के पश्चात् तारीख 5 अगस्त, 2013 के आक्षेपित निर्णय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 458, 302 और 392 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और ऊपर कथित रूप में दंडादिष्ट किया ।

4. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री गुरविंदर सिंह ने यह दलील दी है कि अभियुक्त-अपीलार्थी को अभियुक्त के रूप में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित नहीं किया गया है । उसका अभिकथित अपराध से कोई लेना-देना नहीं है और अभिलेख पर किसी भी प्रकार का ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिसके आधार पर अभियुक्त को अपराध से संबद्ध किया जा सके किंतु अन्वेषण के दौरान पुलिस ने अपीलार्थी को बिना किसी संबद्ध या संपोषक साक्ष्य के इस अपराध में आलिप्त किया है । विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी

को दंड संहिता की धारा 458, 302 और 392 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करने में विधि तथा तथ्य की भारी त्रुटि की है । यह दलील दी गई है कि अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध ऐसा कोई भी अपराध अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर नहीं बनता है । अभियोजन पक्ष अभियुक्त-अपीलार्थी का दोष साबित करने में पूर्णतया असफल रहा है ।

5. यह दलील दी गई है कि विद्वान् विचारण न्यायालय इस पर विचार करने में असफल रहा है कि किसी दांडिक मामले में साक्ष्य पर विचार करते समय न्यायालय को दो महत्वपूर्ण सिद्धांतों को ध्यान में रखना चाहिए कि अभियुक्त का हेतु संदेह के परे साबित होना चाहिए और यह कि अभियुक्त पर अपने अभिवाक् को साबित करने का भार इतना नहीं होना चाहिए जितना अभियोजन पक्ष पर अपना पक्षकथन साबित करने का भार होता है । अभियुक्त द्वारा ली गई प्रतिरक्षा को साबित करने के भार का निर्वहन मात्र उसके पक्ष में किए गए अभिवाक् की संभाव्यताओं की प्रबलता से ही हो जाता है । अभियोजन साक्षी के कथनों में कई शिथिलताएं और विरोधाभास हैं, इसलिए ऐसे साक्षियों के परिसाक्ष्य का कोई भी अवलंब नहीं लिया जा सकता ।

6. अभियोजन साक्षियों के कथन असंगत, प्रतिरोधात्मक और शिथिलताओं से ग्रसित हैं । अभियोजन साक्षियों ने घटना की उत्पत्ति को छिपाया है और अभियोजन वृत्तांत का समर्थन नहीं किया है । अतः, अभियोजन साक्षियों को विश्वसनीय और विश्वासप्रद साक्षी नहीं माना जा सकता । यहां यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी के विरुद्ध कोई भी विधिक या प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है और वर्तमान मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । परिस्थितियों की शृंखला इतनी पूर्ण नहीं है कि किसी भी ऐसी परिकल्पना को त्यक्त किया जा सके जिसका संबंध अभियुक्त-अपीलार्थी के निर्दोष होने के साथ हो ।

7. यह प्रतिवाद किया गया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी को इस मामले में अभिकथित अन्तिम बार देखे गए साक्ष्य के आधार पर मिथ्या फंसाया गया है । इस संबंध में, अभियोजन पक्ष ने दो साक्षी अर्थात् जल कौर (अभि. सा. 5) और इन्द्रा देवी (अभि. सा. 6) को प्रस्तुत किया है किन्तु ये साक्षी जैसा कि अन्वेषण से स्पष्ट है, अन्तिम बार देखे जाने के साक्षी नहीं हैं । यह भी प्रतिवाद किया गया है कि इस मामले में पुलिस ने अभिकथित

रूप से सोने और चांदी के दो आभूषण ज्ञापन प्रदर्श पी. 11 के अनुसार बरामद किए हैं । ये आभूषण अपीलार्थी के एकमात्र कब्जे से बरामद नहीं किए गए हैं और यह भी अभिकथन किया गया है कि बरामद किए गए इस सामान की शनाख्त शिकायतकर्ता द्वारा नहीं कराई गई है ताकि यह सुनिश्चित किया जाता कि ये वस्तुएं चोरी की हैं या मृतका की हैं । बरामद किए गए सामान की पुलिस द्वारा इस प्रकार शनाख्त कराए जाने से साक्ष्य अधिनियम की धारा 9 के उपबंध और पुलिस नियम का अतिक्रमण होता है, इस प्रकार संदेह के परे यह साबित नहीं हो सका है कि अभिकथित रूप से बरामद किए गए आभूषण चोरी के हैं और मृतका के ही हैं । यह भी निवेदन किया गया है कि अभिकथित रूप से बरामद किए गए आभूषणों को अभियोजन पक्ष द्वारा न्यायालय में प्रस्तुत भी नहीं किया गया है । इस प्रकार, की गई बरामदगी स्वयं में संदिग्ध हो जाती है और इस संदेह का लाभ अभियुक्त-अपीलार्थी को दिया जाना चाहिए ।

8. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री गुरविंदर सिंह ने यह दलील दी है कि विद्वान् विचारण न्यायालय इस पर विचार करने में असफल रहा है कि अभिकथित घटना के दिन अपीलार्थी मौजूद भी नहीं था । तारीख 18 फरवरी, 2011 को ही अपीलार्थी अपने ग्राम मोतिया अपने पुत्र के जन्म लेने पर कुंआ-पूजन के कार्यक्रम में सम्मिलित होने गया था और उसके इस पुत्र का जन्म घटना से ढाई महीने पहले हुआ था । तारीख 18 फरवरी, 2011 को राजेन्द्र नाम के एक व्यक्ति (अभि. सा. 9) ने अपीलार्थी को फोन किया और उसे वापस आने को कहा जिस पर अपीलार्थी वापस आ गया । यह प्रतिवाद किया गया है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस आधार पर अनुचित निष्कर्ष निकाला है कि अपीलार्थी को कुंआ-पूजन के कार्यक्रम के लिए धन की कड़ी आवश्यकता थी और इसीलिए उसने मृतका के सोने-चांदी के आभूषण चोरी करने के लिए उसकी हत्या कर दी । यह निवेदन किया गया है कि यदि अपीलार्थी ने अभिकथित रूप से बरामद किए गए आभूषणों की चोरी की होती तो वह उन्हें अपने साथ लाता और उसे बेचता किन्तु उन आभूषणों को अपने कमरे में न रखता । इस प्रकार, इस पहलू से विद्वान् विचारण न्यायालय का निष्कर्ष विधि की दृष्टि से कायम रखे जाने योग्य नहीं है ।

9. यह प्रतिवाद किया गया है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्षियों के कथनों पर न तो समुचित रूप से विचार किया है

और न ही उनके साक्ष्य का परिशीलन सुक्ष्मता के साथ किया है और सरसरी तौर पर कार्यवाही की है और उनके कथनों में से कोई-कोई शब्द लेकर दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय पारित किया है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया यह तरीका दांडिक न्यायशास्त्र के विरुद्ध है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने समुचित रूप से अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और साक्ष्य का मूल्यांकन यथार्त रूप में नहीं किया है और जल्दबाजी में दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश पारित किया है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष महत्वपूर्ण साक्ष्य का गलत पठन करने तथा गणना में न लेने और अनुमान एवं अटकलों के आधार पर दूषित हो जाते हैं ।

10. राज्य की ओर से विद्वान् लोक अभियोजक सुश्री सोनिया शांडिल्य ने अपीलार्थी का विरोध करते हुए आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया है । उन्होंने यह निवेदन किया है कि अभिकथित अपराध के लिए अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि कायम रखने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री मौजूद है । इस मामले में परिस्थितियों की शृंखला अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि कायम रखने के लिए पूर्ण है और अभियुक्त-अपीलार्थी की निर्दोषिता की प्रत्येक परिकल्पना को अभिखंडित करती है । अतः, आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप किए जाने का कोई भी मामला नहीं बनता है और यह अपील खारिज किए जाने योग्य है ।

11. हमने परस्पर विरोधी दलीलों और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर गहराई से विचार किया है ।

12. चूंकि कोई भी प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है इसलिए अभियोजन का सम्पूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर टिका हुआ है । विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि घटना की रात मृतका घर पर अकेली थी । सुनील कुमार (अभि. सा. 15) के अनुसार उसके भाई का विवाह समारोह तारीख 20 फरवरी, 2011 को हुआ था । ग्राम की महिलाएं तारीख 16 फरवरी, 2011 को संगीत कार्यक्रम देखने उनके घर आई थीं । प्रातःकाल यह पता चला कि किसी व्यक्ति ने सावित्री देवी की हत्या कर दी है । श्रीमती तारा देवी (अभि. सा. 8) ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है कि वह भी मृतका सावित्री देवी के साथ संगीत कार्यक्रम में उपस्थित होने के लिए दाताराम के घर गई थी ।

13. देवेन्द्र कुमार (अभि. सा. 4) ने मृतका को अन्तिम बार तारीख

16 फरवरी, 2011 को सायंकाल में जीवित देखा था । तारा देवी (अभि. सा. 8) और सुनील कुमार (अभि. सा. 15) ने यह कथन किया है कि उन्होंने मृतका को तारीख 17 फरवरी, 2011 की रात में जीवित देखा था । जल कौर (अभि. सा. 5) और इन्द्रा देवी (अभि. सा. 6) ऐसे दो साक्षी हैं जिनके कथनों का अवलंब विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि का निष्कर्ष निकालने में लिया है, जल कौर (अभि. सा. 5) ने यह कथन किया है कि घटना के दिन प्रातःकाल मृतका सावित्री घर में अकेली थी क्योंकि उसकी बहू अपने मायके गई हुई थी । यह साक्षी मृतका के घर छाछ लेने गई थी । घर का मुख्य द्वार भीतर से बंद था । इसके पश्चात् जल कौर ने सावित्री को आवाज लगाई । अभियुक्त जो कि बराबर वाले मकान में किराए पर रहता था, उस समय उस मकान की छत पर खड़ा हुआ था । उसने इस साक्षी से कहा कि मुख्य द्वार खुला हुआ नहीं है और उसे पीछे वाले द्वार से अन्दर आना चाहिए जो कि खुला हुआ है । वे अन्य द्वार से घर के अन्दर आए । जब जल कौर और इन्द्रा देवी घर के अन्दर आए, तब सभी द्वार खुले पड़े थे और सावित्री चारपाई पर सोई हुई पाई गई जो कंबल से ढकी हुई थी । जब उन्होंने कंबल हटाया, सावित्री को मृत पाया । उन्होंने शोर मचाया और घर से बाहर आ गई । अभि. सा. 5 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि उसने और इन्द्रा ने सावित्री का शव उसके पति चिम्मन (अभि. सा. 1) के वहां पहुंचने के पूर्व देख लिया था । श्रवण ने, जो अपने मकान की छत पर खड़ा हुआ था उन्हें बताया कि मकान का पिछला द्वार खुला हुआ है । इस साक्षी ने इस सुझाव से इनकार किया है कि श्रवण मौजूद नहीं था और यह कि वह कोटकासिम गया हुआ था ।

14. विद्वान् विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में अभियुक्त के विरुद्ध इस आधार पर प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला है कि उसने जल कौर (अभि. सा. 5) और इन्द्रा (अभि. सा. 6) को यह बताया था कि पिछला द्वार खुला हुआ है और इसीलिए उसने मृतका की हत्या की है क्योंकि वह जानता था कि मकान का मुख्य द्वार बन्द है और पिछला द्वार खुला हुआ है, इस परिस्थिति पर विचारण न्यायालय द्वारा विचार किया गया है । हमें इस प्रकार हस्तक्षेप करने के लिए मुश्किल से ही कोई कारण दिखाई देता है क्योंकि हमारी राय में यदि अभियुक्त मृतका की हत्या के लिए वास्तव में जिम्मेदार होता, तो उसका सामान्य मानवीय आचरण इस प्रकृति का न होता । वह अपने मकान से भाग जाता या कम से कम वह उन दोनों

महिलाओं को पिछले द्वार से मकान के अन्दर आने को न कहता वरना वे मृतका की हत्या के बारे में जान जाती । इन्द्रा देवी (अभि. सा. 6) ने अभियोजन पक्षकथन के समर्थन में कुछ भी साबित नहीं किया है । इस साक्षी ने केवल जल कौर (अभि. सा. 5) द्वारा दिए गए साक्ष्य की संपुष्टि की है । यद्यपि, उसने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह कथन किया है कि उसने यह सुना था कि अभियुक्त-अपीलार्थी श्रवण के पुत्र ने इस घटना के पूर्व जन्म लिया था और वह अपने मूल निवास-स्थान कुंआ पूजन के लिए जाना चाहता था । किन्तु इस साक्षी ने इस तथ्य से जानकारी न होने के कारण इनकार किया है कि वह (श्रवण) वास्तव में अपने ग्राम गया था या नहीं । इस साक्षी के कथन से अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं होता है ।

15. अभियोजन पक्ष ने तारा देवी (अभि. सा. 8) को यह साबित करने के लिए प्रस्तुत किया है कि अभियुक्त मृतका के मकान के सामने देखा गया था जब महिलाएं पूर्ववर्ती रात्रि में दाताराम के घर से वापस आ रही थीं जहां वे महिलाएं संगीत कार्यक्रम देखने गई हुई थीं । जब तारा देवी से इस तथ्य के बारे में मालूम किया, तब उसने इस बात से इनकार किया कि उसने अभियुक्त-अपीलार्थी को घटना की रात में मृतका के मकान के बाहर देखा था । बल्कि इस साक्षी ने यह कथन किया है कि उसने चिम्मन के मकान के निकट किसी भी व्यक्ति को नहीं देखा था और यह भी कथन किया है कि उसने पुलिस को ऐसा कोई भी कथन (प्रदर्श पी. 13) नहीं दिया था । इस प्रकार इस साक्षी को पक्षद्रोही घोषित किया गया है । राजेन्द्र (अभि. सा. 9) अभियुक्त-अपीलार्थी का सह-कक्षी ने यह कथन किया है कि श्रवण की पत्नी ने इस घटना के डेढ़ मास पूर्व एक बालक को जन्म दिया था और यह कि श्रवण कुमार कुंआ पूजन के लिए अपने घर जाना चाहता था । इस साक्षी ने यह कथन किया है कि श्रवण दूध लेने के लिए मृतका के घर आया करता था । तारीख 18 फरवरी, 2011 को प्रातःकाल अभियुक्त के अपने ग्राम के लिए रवाना होने के पश्चात् अभि. सा. 9 को यह पता चला कि किसी व्यक्ति ने सावित्री देवी की हत्या कर दी है । उसने श्रवण को फोन किया और वापस आने को कहा वरना लोग श्रवण कुमार को हत्यारा समझेगें । श्रवण तुरन्त वापस आया । अपनी प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 9 ने यह कथन किया है कि श्रवण प्रातःकाल ही रवाना हो गया था और उसे सावित्री की हत्या के बारे में लगभग 7.30 बजे पूर्वाह्न में जानकारी मिली थी और इसके पश्चात् उसने श्रवण कुमार

को फोन किया था । श्रवण कुमार के इस आचरण को अप्राकृतिक नहीं कहा जा सकता है और उस पर संदेह नहीं किया जा सकता । मनुष्य का सामान्य आचरण ऐसा होता है कि यदि उसने हत्या की है तब वह अपने सह-कक्षी राजेन्द्र द्वारा दिए गए सुझाव को स्वीकार करते हुए वापस न आता ।

16. वीर सिंह (अभि. सा. 10) के कथन का अवलंब लेते हुए अभियोजन पक्ष द्वारा यह साबित करना कि अभियुक्त ने अभि. सा. 10 की मौजूदगी में न्यायेतर संस्वीकृति कथन दिया था, पूर्णतया गलत है । इस साक्षी ने स्वीकृत रूप से पुलिस को दिए गए अपने कथन में इस प्रकार की कोई भी बात नहीं कही थी । इस साक्षी ने न्यायालय में पहली बार यह कहा है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने पुलिस द्वारा पूछताछ किए जाने के दौरान सावित्री की हत्या करने का दोष स्वीकार किया था और इसके पश्चात् अपने ग्राम कोटकासिम तारीख 18 फरवरी, 2011 को 6 बजे पूर्वाह्न में रवाना हो गया था और इसके पश्चात् राजेन्द्र ने उसे वापस बुलाया । जहां तक इस तथ्य का संबंध है कि वह राजेन्द्र के कहने पर वापस आ गया था, इसकी संपुष्टि स्वयं राजेन्द्र के साक्ष्य से होती है और इसमें कुछ भी अप्राकृतिक नहीं है किन्तु न्यायेतर संस्वीकृति कथन को विधिमान्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता जिसके दो कारण हैं , पहला यह कि वीर सिंह (अभि. सा. 10) ने तारीख 21 फरवरी, 2011 को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन पुलिस को दिए गए अपने कथन (प्रदर्श डी. 4) में ऐसी कोई बात नहीं कही है और दूसरा यह कारण है कि पुलिस कार्मिकों की मौजूदगी में दिया गया ऐसा अभिकथित संस्वीकृति कथन साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 25 और 26 के अनुसार साक्ष्य की दृष्टि से ग्राह्य नहीं होगा ।

17. वास्तव में, जल कौर ने यह कथन किया है कि जब उसने इन्द्रा (अभि. सा. 6) के साथ मृतका को चारपाई पर पड़े हुए पहली बार देखा तब उसके कान में एक बाली नहीं थी और उसके गले का हार टूटा हुआ था । यदि अभियुक्त ने वास्तव में मृतका की हत्या धन और आभूषणों को पाने के लालच में की थी, तब वह किसी भी स्थिति में गले के टूटे हुए हार को वहां पर नहीं छोड़ता । अतः, इसी कारण अभियुक्त के कमरे से कान की बाली और एल. आई. सी. की चांदी के शील्ड की अभियुक्त के कहने पर प्रदर्श पी. 11 के अनुसार दर्शाई गई बरामदगी पर विश्वास करने के लिए आनत नहीं है । यदि अभियुक्त ने, जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा

दावा किया गया है, कुंआ पूजन हेतु इन वस्तुओं को पाने के लिए हत्या की होती तब वह इन्हें अपने कमरे में हत्या के अपराध में पुलिस द्वारा फंसाए जाने के लिए सबूत के रूप में नहीं छोड़ता ।

18. यह उल्लेखनीय है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में इत्तिलाकर्ता ने अनेक आभूषणों के लूटने का अभिकथन किया है :–

1. गले का एक हार जिसका भार लगभग 3 तोला है ।

2. एल. आई. सी. के ठप्पे वाली चांदी की दो शील्ड जिनका भार लगभग 350 ग्राम है ।

3. सोने की एक जोड़ी झुमकी जिनका भार लगभग 2 तोला है ।

4. सोने के एक जोड़ी बुन्दे जिनका भार लगभग 10 ग्राम है ।

5. सोने का एक कुन्डल जिसका भार लगभग 4 ग्राम है ।

6. चांदी के दो कड़े जिनका भार लगभग 500 ग्राम है ।

7. चांदी के पांच सिक्के ।

8. सोने की चार अंगूठियां जिनका भार लगभग 3 तोला है ।

9. सोने की दो जंजीरें जिनका भार लगभग 4 तोला है।

10. सोने के गले के दो हार जिनका भार लगभग 11 तोला है ।

11. सोने की दो नथें जिनका भार लगभग एक तोला ।

12. सोने को दो सिक्के जिनका भार लगभग 13 ग्राम है ।

19. इसके पश्चात् चिम्मन सिंह (अभि. सा. 1) ने स्वयं थाने के भारसाधक अधिकारी के समक्ष पत्र प्रदर्श पी. 8 प्रस्तुत किया जिसमें यह सूचना दी गई कि ऊपर उल्लिखित अभिकथित रूप से लूटे गए सभी आभूषण घर में ही पाए गए हैं । इसके अतिरिक्त, प्रदर्श पी. 10 के अनुसार की गई कैंची की बरामदगी, जिसे अभियुक्त-अपीलार्थी से संबद्ध किया गया है, पुलिस द्वारा अन्वेषण में की गई हेरा-फेरी का परिणाम प्रतीत होती है क्योंकि यह कैंची मृतका के घर से बरामद की गई थी और यही बात चिम्मन सिंह (अभि. सा. 1) ने स्वयं कही है और इस साक्ष्य से मुश्किल से ही अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध कोई तथ्य साबित होता है ।

20. अतः, उपरोक्त विश्लेषण को दृष्टिगत करते हुए यह नहीं कहा

जा सकता है कि अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप युक्तियुक्त संदेह के परे साबित कर दिए गए हैं । अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध परिस्थितियों की शृंखला में बहुत सी कड़ियां नहीं हैं क्योंकि केवल परिस्थितियां ही विश्वसनीय साक्ष्य से साबित नहीं की गई हैं अपितु ये सभी परिस्थितियां एक साथ मिलकर साक्ष्य की पूर्ण शृंखला नहीं बनाती हैं ताकि अन्य किसी व्यक्ति पर नहीं बल्कि अभियुक्त-अपीलार्थी पर ही बिना किसी त्रुटि के संदेह किया जा सकता था और ऐसी किसी भी परिकल्पना से इनकार नहीं किया जाता जो उसके निर्दोष होने के साथ मेल खाती होती । इन परिस्थितियों में, आक्षेपित निर्णय कायम नहीं रखा जा सकता ।

21. उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए यह अपील सफल होने योग्य है और तद्नुसार मंजूर की जाती है । तारीख 5 अगस्त, 2013 का अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश अपास्त किया जाता है । अभियुक्त-अपीलार्थी श्रवण कुमार को दंड संहिता की धारा 458, 302 और 392 के अधीन अपराध के आरोप से दोषमुक्त किया जाता है । उसे तत्काल छोड़ा जाए यदि वह अन्य किसी मामले में वांछित नहीं है ।

22. तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 437क के उपबंधों को दृष्टिगत करते हुए अपीलार्थी को 20,000/- रुपए का स्वीय बंधपत्र और इतनी ही रकम का प्रतिभूति बंधपत्र निष्पादित करने का निदेश दिया जाता है जिसे इस न्यायालय के उप-रजिस्ट्रार (न्यायिक) के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा जो छह मास की अवधि के लिए प्रभावी होगा जिसमें यह वचनबंध करना होगा कि इस निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका फाइल किए जाने या इजाजत मंजूर किए जाने पर उपरोक्त अपीलार्थी नोटिस प्राप्त होने पर, उच्चतम न्यायालय के समक्ष पेश होगा ।

अपील मंजूर की गई ।

अस.

रमेश कुमार मधोक (डा.)

बनाम

राजस्थान राज्य

तारीख 11 जुलाई, 2017

न्यायमूर्ति संजीव प्रकाश शर्मा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 304क और धारा 302 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 190 और 204] – अपराध का संज्ञान – अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी – मामले में यह अभिकथन किया जाना कि चिकित्सा उपेक्षा के कारण रोगी की मृत्यु हुई – यदि अस्पताल के विभागाध्यक्ष की राय में अभियुक्त डाक्टर द्वारा रोगी का उपचार करने में कोई उपेक्षा नहीं बरती गई और उपचार से रोगी के कोई प्रतिक्रिया देखने में नहीं मिलती है, परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो जाती है तो अभियुक्त डाक्टर के बारे में रोगी के उपचार में उपेक्षा बरतना नहीं कहा जा सकता है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 304क – जहां मजिस्ट्रेट द्वारा सही परिप्रेक्ष्य में चिकित्सा असावधानी के मामले की परीक्षा करने में विफलता बरती गई और प्रथमदृष्ट्या चिकित्सा उपेक्षा का मामला प्रकट नहीं हुआ है वहां पर राज्य सरकार द्वारा अभियुक्त डाक्टर पर अभियोजन को चलाने की मंजूरी न देने के बावजूद भी मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त डाक्टर के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने का आदेश अपास्त किया जाता है ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 190, 192 और 204 – अपराध का संज्ञान – अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी – चिकित्सा उपेक्षा – अभियुक्त डाक्टर के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाह कार्डियोलाजी प्रमुख के रूप में करते हुए रोगी पीड़िता का उपचार किया जाना अभियुक्त डाक्टर के कार्यों का केवल शासकीय कर्तव्य के भाग रूप में अर्थान्वयन किया जा सकता है – ऐसे अभियुक्त डाक्टर के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने से पूर्व राज्य से अभियोजन चलाने की मंजूरी लेना अपेक्षित है ।

इस पुनरीक्षण आवेदन के माध्यम से आवेदक जो राज्य सरकार में डाक्टर के पद पर नौकरी कर रहा है, ने विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा विद्वान् मजिस्ट्रेट ने राज्य के बजाय

आवेदक के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अपराध का संज्ञान लिया जबकि राज्य ने अभियोजन मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया । रोगी के उपचार करने में चिकित्सा उपेक्षा/असावधानी बरतने पर मृत्यु कारित किए जाने के लिए संज्ञान लिया गया जो घटना सेवानिवृत्त पुलिस महानिदेशक के साथ घटित हुई, देखिए आदेश तारीख 10 मई, 2003 । आवेदक के काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि आवेदक जुलाई, 1995 से एम. एम. एस. चिकित्सा महाविद्यालय में हृदय रोग विभाग में विभागाध्यक्ष के पद पर था । वह हृदय रोग में डी. एम. की अर्हता रखता है । उसका पक्षकथन यह है कि मृतक रोगी जो सेवानिवृत्त पुलिस अधिकारी है, पहले ही कई वर्षों से उसका उपचार चल रहा था । रोगी तीव्र मधुमेह, अत्यधिक रक्तचाप, गंभीर हृदयरोग, हाइपर लिपिडेमिया, राक वृक्क के खराब पाए जाने से ग्रसित था । आवेदक ने उक्त संभव उपचार रोगी कालिया को दिया था और उसके यूनिट सदस्य डा. राजीव बर्गोहत्ता, डा. विजय पाठक और डा. अरविन्द शर्मा ने रोगी के स्वास्थ्य की बारीकी से मानीटर किया था । तारीख 10 अगस्त, 1999 को उक्त रोगी ने हांफने/दम फूलने की शिकायत की और आवेदक ने तत्काल उसकी देखभाल की और डा. बर्गोहत्ता और डा. विजय पाठक को समुचित अनुदेश दिए थे । उक्त संभव उपचार देने के बावजूद रोगी की उसी तारीख को मृत्यु हो गई । मृतक रोगी के पुत्र द्वारा मुख्यमंत्री को स्वेच्छया से शिकायत भेजी गई थी और एक भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी को जांच करने के लिए नियुक्त किया गया था । उक्त भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी ने डा. एस. के. चुटानी की राय पर आधारित अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जो आवेदक का तात्कालिक अधीनस्थ था और अपने निलंबन तथा प्रतिकूल टिप्पणियों के संबंध में आवेदक के साथ मुकदमेबाजी में लगा हुआ था । आवेदक ने यह भी कथन किया है कि उसने इस रिपोर्ट पर आरोप जताया है जो ईर्ष्या.... तथा आवेदक को हानि पहुंचने के आशय से अधीनस्थ डाक्टर द्वारा बनाई गई है जिसकी पहले से ही उसके साथ मुकदमेबाजी थी । संप्रकाशित निर्णय, 2003 (2) डब्ल्यू. एल. सी. 527 का उद्धरण दिया गया । राज्य सरकार ने तब हृदयरोग विभाग के आचार्य और विभागाध्यक्ष डा. एस. सी. मनचंदा, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान को पुनः परीक्षा करने के लिए अभिलेख भेजे गए थे । डा. एस. सी. मनचंदा ने 30 मार्च, 2002 को अपनी रिपोर्ट पेश की जिसे विद्वान् काउंसेल द्वारा न्यायालय को दिखाया गया था और उसके द्वारा दी गई राय से यह प्रकट होता है कि रोगी को पुनरुज्जीवन देने में कोई सुस्पष्ट उपेक्षा नहीं बरती

गई थी और आखिरी सांस तक उचित उपचार दिया गया था । अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के विभागाध्यक्ष द्वारा पेश की गई रिपोर्ट के आधार पर यह प्रकट है कि राज्य सरकार ने दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अभियोजन पक्ष को मंजूरी देने से इनकार कर दिया था । उच्चतम नयायालय द्वारा आवेदक के आवेदन को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने तथा अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् यह मत व्यक्त किया है कि अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के विभागाध्यक्ष की चिकित्सीय राय यह थी कि जिसमें स्पष्ट रूप से यह परिलक्षित होता है कि आवेदक की ओर से कोई चिकित्सा उपेक्षा नहीं बरती गई थी । यह प्रकट हुआ है कि मजिस्ट्रेट ने डा. एस. के चुटानी और भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी स्थानीय रिपोर्ट के संबंध में चिकित्सा उपेक्षा की परीक्षा की । स्वीकृततः, डा. एस. के. चुटानी के आवेदक से मुकदमेबाजी थी, जिसमें डा. एस. के. चुटानी ने यह उल्लेख किया है कि डा. रमेश कुमार मधोक के कहने पर उसका निलंबन हुआ और इस प्रकार, डा. एस. के. चुटानी द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट का संबंधित मजिस्ट्रेट द्वारा अवलंब नहीं लिया जा सकता । इस प्रकार, यह प्रकट है कि चिकित्सा उपेक्षा को कारित करने वाला व्यक्ति जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है, उसके विरुद्ध सावधानी और चौकसी बरतने के पश्चात् यह भी समाधान करने के पश्चात् ऐसे अपराध के लिए संज्ञान लेना कुछ अकाट्य सामग्री के आधार पर होना चाहिए कि उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिकथित आवश्यक संघटक अभिलेख पर उपलब्ध है । मैंने यह निष्कर्ष निकाला है कि विद्वान् मजिस्ट्रेट ने उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित परिप्रेक्ष्य में आपराधिक शिकायत की परीक्षा की । वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करते हुए मेरा यह समाधान हुआ है कि आवेदक के बारे में दंड संहिता की धारा 304क के निबंधनों में किसी प्रकार, उपेक्षा बरता जाना नहीं कहा जा सकता है, किसी प्रकार, उपचार के संबंध में निर्णय में गलती हो सकती है, क्योंकि अभिलेख पर यह प्रकट हुआ है कि रोगी को उचित पुनरुज्जीवन किया गया परंतु इस बात की खराबी को विचार में लिया गया कि रोगी गुर्दे सहित कई तरह की बीमारियों से ग्रसित था, यह प्रकट हुआ है कि उपचार की प्रतिक्रिया प्रकट नहीं हुई जो उसे दी गई थी । यह देखा गया है कि जब आवेदक का दल के सदस्यों के साथ अभियोजन किया गया जो रोगी का उपचार कर रहे थे, जिसमें तीन सदस्य अर्थात् डा. राजीव बर्गोहत्ता, डा. विजय पाठक और डा. अरविन्द शर्मा

सम्मिलित थे, उन्हें पुलिस थाने में दर्ज शिकायत में सम्मिलित नहीं किया गया था । यह प्रतीत होता है कि शिकायत स्वतः प्रेरित हुई है । इस न्यायालय का यह समाधान है कि अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के हृदय रोग के विभागाध्यक्ष डा. एस. सी. मनचंदा द्वारा मामले की उचित रूप से जांच की गई थी । संबंधित मजिस्ट्रेट द्वारा दंड संहिता की धारा 304क के अधीन संज्ञान लेने के लिए जिसकी राय पर विचार किया जाना ईप्सित था । अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी के संबंध में प्रश्न पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 का उल्लेख किया जाना जरूरी है । अभियुक्त द्वारा अपने शासकीय कर्तव्य के निर्वहन में अधिनियम से संबंधित तात्पर्यित कार्रवाई में किया गया अभिकथित अपराध उसके शासकीय कार्य से संबंधित होना अभिप्रेत है और यदि वह ऐसा नहीं करता है तो यह शासकीय कर्तव्य के चूक की कोटि में आएगा । दूसरे शब्दों में यह विवक्षित है कि लोक सेवक द्वारा अपनी सेवा के दौरान ऐसा कार्य या लोप किया जाना चाहिए और ऐसा कार्य या लोप अपने कर्तव्य के भाग रूप में पूरा किया जाना चाहिए, इसके अतिरिक्त शासकीय प्रकृति का होना चाहिए । डाक्टर की ओर से किए गए ऐसे कार्य या लोप की परीक्षा करते हुए, दो पहलुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए अर्थात् डाक्टर रहते हुए ऐसा कार्य या लोप किया गया था या एक शासकीय डाक्टर होते हुए अपने शासकीय कर्तव्य, जो देखने में आता है, पूरा किया गया है । हृदय रोग विभागाध्यक्ष के रूप में आवेदक एस. एम. एस. चिकित्सा महाविद्यालय में अपने कर्तव्य को शासकीय रूप में पूरा कर रहा था जहां रोगी का उपचार चल रहा था । इस प्रकार, वर्तमान अभिकथित कार्य या लोप का यदि इस प्रकार अर्थान्वयन किया जाए तो मात्र शासकीय कर्तव्य की चूक हुई है और इसलिए धारा 197 के उपबंध लागू होंगे और राज्य से अभियोजन चलाने की मंजूरी अपरिहार्य रूप से अपेक्षित है और न्यायालय शासकीय कर्तव्य का निर्वहन करने के दौरान बरती गई ऐसे अभिव्यक्ति की उपेक्षा के लिए संज्ञान ले सकता है और अभियोजन से संबंधित कोई भी कार्यवाही पहले से ली गई मंजूरी के बिना नहीं चलाई जा सकती । (पैरा 12, 14, 19, 20 और 21)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2017]	ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 2078 : **डा. साहू जयश्री उज्जवल इनगोले** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य ;**	15, 16

[2016] (2016) 1 एस. सी. सी. 594 = 2015
ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6802 :
मनोरमा तिवारी और अन्य बनाम **सुरेन्द्र नाथ राज** ; 10, 17, 18

[2013] (2013) 8 एस. सी. सी. 119 = 2013
ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3174 :
महाराष्ट्र राज्य बनाम **महेश जी. जैन** ; 10, 18

[2005] ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3180 :
जैकब मैथ्यू बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य** ; 10, 13, 19

[2004] 2004 (5) सुप्रीम 604 = ए. आई. आर.
2004 एस. सी. 4091 :
डा. सुरेश गुप्ता बनाम **राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली सरकार और एक अन्य** ; 10

[2003] (2003) 2 डब्ल्यू. एल. सी. 527 :
डा. सुरेन्द्र कुमार चुटानी बनाम **राजस्थान राज्य और एक अन्य** । 12

पुनरीक्षण (दांडिक) अधिकारिता : 2004 की एस. बी. दांडिक पुनरीक्षण सं. 225.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397/401 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री आर. सी. जोशी

प्रत्यर्थी की ओर से श्री एम. के. कौशिक

न्यायमूर्ति संजीव प्रकाश शर्मा – इस पुनरीक्षण आवेदन के माध्यम से आवेदक जो राज्य सरकार में डाक्टर के पद पर नौकरी कर रहा है, ने विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा विद्वान् मजिस्ट्रेट ने राज्य के बजाय आवेदक के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अपराध का संज्ञान लिया जबकि राज्य ने अभियोजन मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया ।

2. रोगी के उपचार करने में चिकित्सा उपेक्षा/असावधानी बरतने पर मृत्यु कारित किए जाने के लिए संज्ञान लिया गया जो घटना सेवानिवृत्त

पुलिस महानिदेशक के साथ घटित हुई, देखिए आदेश तारीख 10 मई, 2003 ।

3. आवेदक के काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि आवेदक जुलाई, 1995 से एम. एम. एस. चिकित्सा महाविद्यालय में हृदय रोग विभाग में विभागाध्यक्ष के पद पर था । वह हृदय रोग में डी. एम. की अर्हता रखता है । उसका पक्षकथन यह है कि मृतक रोगी जो सेवानिवृत्त पुलिस अधिकारी है, पहले ही कई वर्षों से उसका उपचार चल रहा था । रोगी तीव्र मधुमेह, अत्यधिक रक्तचाप, गंभीर हृदयरोग, हइपर लिपिडेमिया, राक वृक्क (गुर्दा) के खराब पाए जाने से ग्रसित था । आवेदक ने उक्त संभव उपचार रोगी कालिया को दिया था और उसके यूनिट सदस्य डा. राजीव बर्गोहत्ता, डा. विजय पाठक और डा. अरविन्द शर्मा ने रोगी के स्वास्थ्य की बारीकी से मानीटर किया था । तारीख 10 अगस्त, 1999 को उक्त रोगी ने हांफने/दम फूलने की शिकायत की और आवेदक ने तत्काल उसकी देखभाल की और डा. बर्गोहत्ता और डा. विजय पाठक को समुचित अनुदेश दिए थे । उक्त संभव उपचार देने के बावजूद रोगी की उसी तारीख को मृत्यु हो गई । मृतक रोगी के पुत्र द्वारा मुख्यमंत्री को स्वेच्छया से शिकायत भेजी गई थी और एक भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी को जांच करने के लिए नियुक्त किया गया था ।

4. उक्त भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी ने डा. एस. के. चुटानी की राय पर आधारित अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जो आवेदक का तात्कालिक अधीनस्थ था और अपने निलंबन तथा प्रतिकूल टिप्पणियों के संबंध में आवेदक के साथ मुकदमेबाजी में लगा हुआ था । आवेदक ने यह भी कथन किया है कि उसने इस रिपोर्ट पर आरोप जताया है जो ईर्ष्या.... तथा आवेदक को हानि पहुंचने के आशय से अधीनस्थ डाक्टर द्वारा बनाई गई है जिसकी पहले से ही उसके साथ मुकदमेबाजी थी । संप्रकाशित निर्णय, 2003 (2) डब्ल्यू. एल. सी. 527 का उद्धरण दिया गया । राज्य सरकार ने तब हृदयरोग विभाग के आचार्य और विभागाध्यक्ष डा. एस. सी. मनचंदा, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान को पुनः परीक्षा करने के लिए अभिलेख भेजे गए थे । डा. एस. सी. मनचंदा ने 30 मार्च, 2002 को अपनी रिपोर्ट पेश की जिसे विद्वान् काउंसेल द्वारा न्यायालय को दिखाया गया था और उसके द्वारा दी गई राय से यह प्रकट होता है कि रोगी को पुनरुज्जीवन देने में कोई सुस्पष्ट उपेक्षा नहीं बरती गई थी और आखिरी सांस तक उचित उपचार दिया गया था । अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान

संस्थान के विभागाध्यक्ष द्वारा पेश की गई रिपोर्ट के आधार पर यह प्रकट है कि राज्य सरकार ने दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अभियोजन पक्ष को मंजूरी देने से इनकार कर दिया था ।

5. इसलिए, पुलिस ने अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की, तथापि, यह प्रकट हुआ है कि संबंधित मजिस्ट्रेट ने अपर लोक अभियोजक द्वारा दंड संहिता की धारा 304क के अधीन संज्ञान लेने के लिए अनुरोध करते हुए फाइल किए गए आवेदन के आधार पर यह भी मत व्यक्त किया है कि राज्य सरकार से मंजूरी चिकित्सा उपेक्षा से संबंधित मामलों में अपेक्षित नहीं होती है जबकि विद्वान् अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट सं. 6 जयपुर नगर ने दंड संहिता की धारा 304क के अधीन तारीख 10 मई, 2003 को अधिकथित आदेश के माध्यम से संज्ञान लेने के कार्यवाही की ।

6. वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन तारीख 10 मई, 2003 के आदेश को आक्षेपित करते हुए फाइल किया गया था । मामले में अवकाश के दौरान अगली तारीख 8 जून, 2017 नियत की गई थी । न्यायालय ने किसी एक के भी हाजिर नहीं होने पर जमानतीय वारंट जारी किए और आवेदक को तारीख 30 जून, 2017 को न्यायालय के समक्ष हाजिर रहने के लिए निदेश दिया गया था ।

7. आवेदक अपने काउंसेल के साथ तारीख 30 जून, 2017 को स्वयं हाजिर हुआ था और दोनों काउंसेल को सुनने के पश्चात् निर्णय आरक्षित रखा गया था ।

8. आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि उपेक्षा के कारण मृत्यु कारित किए जाने के लिए दंड संहिता की धारा 304क के अधीन संज्ञान आवेदक के विरुद्ध नहीं लिया जा सकता क्योंकि जिसके समर्थन में कोई दस्तावेज यह साबित करने के लिए अभिलेख पर नहीं रखे गए कि आवेदक ने उपेक्षा बरती थी जिसके परिणामस्वरूप मृतक रोगी की मृत्यु हुई थी । रोगी अत्यंत बीमार था और अति उत्तम संभव उपचार रोगी को उपलब्ध कराया जा सका जो आवेदक द्वारा अपने साक्षियों के साथ उसे मुहैया कराया गया था ।

9. इसके अतिरिक्त, विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया है कि विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अपराध के लिए संज्ञान नहीं लिया जा सकता, राज्य सरकार द्वारा अभियोजन मंजूरी को सहजता के साथ अस्वीकार किया गया और किसी भी व्यक्ति द्वारा ऐसे

इनकारी के आदेश को विधि के समक्ष न्यायालय में चुनौती नहीं दी गई थी ।

10. आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने **जैकब मैथ्यू** बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित मत का अवलंब लिया और एक अन्य यह दलील दी गई कि आवेदक के बारे में दंड संहिता की धारा 304क तथा **डा. सुरेश गुप्ता** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली सरकार और एक अन्य**[2] और **मनोरमा तिवारी और अन्य** बनाम **सुरेन्द्र नाथ राज**[3] वाले मामलों के अर्थान्वयन के अंतर्गत कोई उपेक्षा बरता जाना नहीं कहा जा सकता है । उन्होंने अपने निवेदनों के समर्थन में **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **महेश जी. जैन**[4] वाले मामले में न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का भी अवलंब लिया ।

11. तथापि, प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि चिकित्सा उपेक्षा यदि किसी सरकारी नौकर/डाक्टर या कोई अन्य डाक्टर द्वारा बरती गई है, तो उसकी परीक्षा हो सकती है और चिकित्सा उपेक्षा बरते जाने से हुई मृत्यु के संबंध में संज्ञान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अर्थ के अंतर्गत राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी अपेक्षित नहीं होती है ।

12. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने तथा अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् यह मत व्यक्त किया है कि अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के विभागाध्यक्ष की चिकित्सीय राय यह थी कि जिसमें स्पष्ट रूप से यह परिलक्षित होता है कि आवेदक की ओर से कोई चिकित्सा उपेक्षा नहीं बरती गई थी । यह प्रकट हुआ है कि मजिस्ट्रेट ने डा. एस. के चुटानी और भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी स्थानीय रिपोर्ट के संबंध में चिकित्सा उपेक्षा की परीक्षा की । स्वीकृततः, डा. एस. के. चुटानी के आवेदक से मुकदमेबाजी थी और **डा. सुरेन्द्र कुमार चुटानी** बनाम **राजस्थान राज्य और एक अन्य**[5] वाले मामले का निर्णय संप्रकाशित है जिसमें डा. एस. के. चुटानी ने यह उल्लेख किया है कि डा. रमेश कुमार मधोक के कहने पर उसका निलंबन हुआ और इस प्रकार, डा. एस.

---

[1] ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3180.

[2] 2004 (5) सुप्रीम 604 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 4091.

[3] (2016) 1 एस. सी. सी. 594 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6802.

[4] (2013) 8 एस. सी. सी. 119 = 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3174.

[5] (2003) 2 डब्ल्यू. एल. सी. 527.

के. चुटानी द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट का संबंधित मजिस्ट्रेट द्वारा अवलंब नहीं लिया जा सकता ।

13. **जैकब मैथ्यू** बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में बृहत्तर न्यायपीठ ने चिकित्सा उपेक्षा की परीक्षा की और **डा. एस. के. चुटानी** (उपरोक्त) वाले मामले में लिए गए मत की परीक्षा की । आवश्यक पैरा निम्नलिखित रूप में उत्कथित है :–

> "उपेक्षा की विधि में वकील, डाक्टर, वास्तुकार और अन्य व्यक्ति का न्यायालय जिसमें कुछ विशेष निपुर्णता या सामान्यता निपुर्ण व्यक्ति व्यवसायी व्यक्ति के प्रवर्ग में सम्मिलित हो कोई कार्य जिसे विशेष निपुर्ण व्यक्ति द्वारा पूरा किया जाना अपेक्षित है, जिसके बारे में साधारणतया यह स्वीकार किया जाएगा या केवल ऐसे व्यक्ति द्वारा पूरा करने का जिम्मा लिया गया है, यदि ऐसा व्यक्ति उक्त कार्य करने के लिए अध्यपेक्षित निपुर्णता रखता है । कोई युक्तियुक्त व्यक्ति ऐसे व्यवसाय में है जिससे उस शाखा के व्यवसाय को सीखने के विशिष्ट स्तर की अपेक्षा की जाती है, विवक्षित आश्वासन मिलता है कि ऐसा व्यक्ति जो उसके साथ व्यवहार कर रहा है कि निपुर्णता जिसे वह अपने पास रखता है, उसको प्रयोजन में लेगा और सावधानी और चौकसी के साथ युक्तियुक्त निपुर्णता का प्रयोग करेगा । वह परिणाम के बारे में अपने ग्राहक को आश्वासन नहीं देता है, कोई वकील अपने मुवक्किल को यह नहीं बताता है कि मुवक्किल सभी परिस्थितियों में मामले पर विजय प्राप्त करेगा । डाक्टर प्रत्येक मामले में रोगी को पूर्ण रूप से ठीक हो जाने का आश्वासन नहीं देता है । कोई शल्य चिकित्सक इस बात की प्रत्याभूति नहीं दे सकता है कि शल्य क्रिया के परिणाम से स्थिर रूप से शल्य क्रिया किए गए व्यक्ति 100 प्रतिशत सीमा तक न्यूनाधिक रूप से फायदा मिलेगा । केवल यह आश्वासन जो ऐसे व्यवसाय से दिया जा सकता है या इस प्रभाव से यह समझा जा सकता है कि वह व्यवसाय के उस शाखा में अध्यपेक्षित निपुर्णता रखता है जिसको वह उपभोग में ला रहा है और उसे सौंपे गए कार्य को पूरा करने के लिए जिम्मा लेते हुए, वह युक्तियुक्त सक्षमता के साथ अपने निपुर्णता का प्रयोग करेगा । सभी प्रकार, ऐसे व्यक्ति से ऐसे व्यवसाय में पहुंच की आशा की जा सकती है । इस मानक से परख की जानी चाहिए कि व्यवसायिक को एक

---

[1] ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3180.

या दो निष्कर्ष उपेक्षा के लिए दायी ठहराया जा सकता है : या तो उसके पास अध्यपेक्षित निपुर्णता नहीं थी जिसे उसे रखना चाहिए , या, उसने वर्णित मामले में युक्तियुक्त सहायता का प्रयोग नहीं किया, निपुर्णता जिसे वह रखता है । न्याय निर्णयन किए जाने के लिए मानक लागू किया जाना चाहिए कि क्या ऐसा व्यक्ति उपेक्षा बरते जाने के लिए आरोपित होना चाहिए या नहीं, ऐसा भी होता है कि उस व्यवसाय में कोई साधारण सक्षम व्यक्ति साधारण निपुर्णता का प्रयोग कर रहा हो । प्रत्येक व्यवसायी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उस शाखा में उच्चस्थ स्तर की दक्षता रखता हो जिसमें वह व्यवसाय कर रहा है । माइकल हाइड एण्ड एसोसिएट्स **बनाम** जे. डी. विलिसम्स एण्ड कंपनी लिमिटेड, (2001) पी. एन. एल. आर. 233, सी. ए. वाले मामले में सेडले एल. जे. ने यह कहा है कि जहां किसी व्यवसाय के बारे में मत समाविष्ट होते हैं, आचरण के स्वीकारयोग्य मानक क्या है, प्रतिवादी की सक्षमता का निम्नतर मानक द्वारा परख की जानी चाहिए कि स्वीकारयोग्य रूप में माना जाएगा । (चार्ल्स वर्थ एंड पेस्ती आई. बी. आई. डी., पैरा 8.03)

26. सामान्य व्यवसायिक पद्धति से मात्र विचलन अपरिहार्य रूप से उपेक्षा का साक्ष्य नहीं है । यह भी उल्लेख किया गया है कि मात्र दुर्घटना उपेक्षा का साक्ष्य नहीं है । व्यवसायिक के पक्ष में निर्णय की त्रुटि उपेक्षा नहीं है । आपातकाल में अत्यधिक संवेदनशीलता अत्यधिक जटिलताओं से निर्णय में गलती होने का बड़ा अवसर बनता है । ऐसे समयों पर व्यवसायिक व्यक्ति और गहरी खाई के बीच पसंद बनाने में मिलान करता है । पसंद बनाने का सामना करता है, और उसे कम बुराई को चुनना चाहिए । चिकित्सक व्यवसायी प्रायः ऐसी प्रक्रिया को अंगीकार करता है जिसमें जोखिम के उच्च तत्व अंतर्वलित होते हैं परंतु जिस पर वह ईमानदारी से विश्वास करता है । वस्तुतः कम जोखिम की प्रक्रिया रोगी को स्वस्थ करने के लिए बड़े अवसर देता है परंतु उच्च अवसर विफल हो जाते हैं जो प्रक्रिया अत्यधिक समुचित है जिसका अनुसरण किया जाता है जो वर्णित मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर है । आजकल सामान्य प्रचलित प्रक्रिया से रोगी की सहमति प्राप्त करना है या रोगी का संरक्षक यदि रोगी अंगीकृत वर्णित प्रक्रिया के अंतर्गत सहमति देने की स्थिति में नहीं होता है यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रक्रिया जो वस्तुतः जिसे अंगीकार किया गया है, जिनमें से एक जो आज

तक चिकित्सा विज्ञान में स्वीकारयोग्य है, चिकित्सा व्यवसायी को केवल इसलिए उपेक्षा का दोषी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि उसने एक प्रक्रिया का अनुसरण किया है और न कि दूसरी जिसका परिणाम विफल होना था ।

27. कोई समझदार व्यवसायी साआशय कोई ऐसा कार्य या लोप नहीं करेगा जिसका परिणाम रोगी को हानि या क्षति पहुंचाना होगा क्योंकि ऐसे व्यक्ति की व्यवसायिक प्रतिष्ठा दांव पर लगी होती है । एक बार भी विफल होना उसके कैरियर को महंगा पड़ सकता है । सिविल अधिकारिता वाले मामलों में भी स्वयं प्रमाण का नियम सार्वभौमिक रूप से लागू नहीं है और जिसका प्रयोग व्यवसायिक उपेक्षा के मामलों में, विशेषकर चिकित्सकों द्वारा की गई व्यवसायिक उपेक्षा के मामलों में, अत्यधिक सावधानी और चौकसी के साथ किया जाना चाहिए । अन्यथा इसका प्रतिकूल प्रभाव होगा । मात्र इस कारण से रोगी को चिकित्सक या शल्यक्रिया से दिए गए उपचार से कोई अनुकूल फायदा नहीं हुआ है, ऐसा दिया गया उपचार विफल है तो डाक्टर स्वयं प्रमाण के सिद्धांत लागू करने के अनुसार विफलता के लिए दायी नहीं ठहराया जा सकता ।

53. भारत सरकार या राज्य सरकारों द्वारा भारतीय चिकित्सा परिषद् के साथ परामर्श करके कतिपय दिशा-निर्देश में निगमित कानूनी नियम या कार्यपालक अनुदेश निश्चित और जारी किए जाने जरूरी है, जब तक ऐसा नहीं किया जाता है, हम भविष्य के लिए कतिपय दिशा-निर्देश अधिकथित करते हैं जिनसे अपराधों के लिए डाक्टर का अभियोजन किया जाना शास्ति होना चाहिए जिनसे आपराधिक उतावलापन और आपराधिक उपेक्षा के संघटक बनते हैं । कोई प्राइवेट शिकायत तब तक ग्रहण नहीं की जा सकती है जब तक कि शिकायतकर्ता अभियुक्त डाक्टर की ओर से किया गया उतावलापन या उपेक्षा के आरोप के समर्थन में किसी अन्य डाक्टर द्वारा दी गई विश्वसनीय राय के रूप में न्यायालय के समक्ष प्रथम-दृष्ट्या साक्ष्य पेश किया हो । अन्वेषण अधिकारी को अभियुक्त डाक्टर के विरुद्ध उतावलेपन उपेक्षित कार्य या लोप के कारण कार्यवाही करने से पूर्व चिकित्सा पद्धति के उस शाखा में अर्हित सरकारी सेवा में नियुक्त डाक्टर को वरीयता देते हुए स्वतंत्र और सक्षम चिकित्सा राय प्राप्त करनी चाहिए जिससे सामान्यतया यह आशा की जा सकती है कि वह निष्पक्ष और पक्षपात रहित राय देने के लिए अन्वेषण में

एकत्रित तथ्यों के बारे में बोलाम परीक्षा (Bolam's Test) लागू करें । किसी डाक्टर अभियुक्त जिस पर उतावलेपन या उपेक्षा का कार्य करने का नित्यक्रम रीति में गिरफ्तारी नहीं किया जा सकता है (मात्र इस कारण से जो आरोप उसके विरुद्ध लगाए गए है) जब तक कि उसको गिरफ्तार किया जाना अग्रिम अन्वेषण कार्यवाही या साक्ष्य एकत्र करने के लिए आवश्यक न हो या जब तक अन्वेषक अधिकारी अपना समाधान करने के लिए यह महसूस न करें कि जब तक डाक्टर को गिरफ्तार न कर लिया जाए, वह आगे की कार्यवाही के संबंध में अभियोजन का सामना करने के लिए स्वयं उपलब्ध नहीं होगा अन्यथा गिरफ्तारी को रोका जा सकता है ।"

14. इस प्रकार, यह प्रकट है कि चिकित्सा उपेक्षा को कारित करने वाला व्यक्ति जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है, उसके विरुद्ध सावधानी और चौकसी बरतने के पश्चात् यह भी समाधान करने के पश्चात् ऐसे अपराध के लिए संज्ञान लेना कुछ अकाट्य सामग्री के आधार पर होना चाहिए कि उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिकथित आवश्यक संघटक अभिलेख पर उपलब्ध है । मैंने यह निष्कर्ष निकाला है कि विद्वान् मजिस्ट्रेट ने उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित परिप्रेक्ष्य में आपराधिक शिकायत की परीक्षा की ।

15. **डा. साहू जयश्री उज्जवल इंगोले** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित किए गए नवीनतम निर्णय में चिकित्सा उपेक्षा के लिए संज्ञान सम्यक् सावधानी तथा यह तय किए जाने के पश्चात् लिया जाना चाहिए कि उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित आवश्यक संघटक अभिलेख पर उपलब्ध हैं ।

16. इस न्यायालय ने मामले के तथ्यों पर यह निष्कर्ष निकाला कि विद्वान् मजिस्ट्रेट ने **डा. साहू जयश्री उज्जवल इंगोले** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित नवीनतम निर्णय के मत के सही परिप्रेक्ष्य में आपराधिक शिकायत की परीक्षा करने में विफल हुआ है । उच्चतम न्यायालय ने विधि को लागू करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अनुध्यात चिकित्सा उपेक्षा का मामला नहीं बनता है । यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निर्णय में गलती होना उतावलेपन और उपेक्षित कार्य की कोटि में नहीं आता है जैसाकि उक्त उपबंधों के अधीन अनुध्यात है ।

---

[1] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 2078 (2017) 4 स्केल 321.

17. **मनोरमा तिवारी और अन्य** बनाम **सुरेन्द्र नाथ राज**[1] वाले मामले में डाक्टर, जो सरकारी सेवक थे, ने रोगी का उपचार किया । राज्य सरकार से बिना मंजूरी के अपराधिक शिकायत के आधार पर विचारण रखा गया था उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया जो इस प्रकार है :–

> "12. विधि की उपरोक्त स्थिर स्थिति को ध्यान में रखते हुए हमारी राय यह है कि वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई दांडिक पुनरीक्षण को खारिज करके विधि में गलती की है और राज्य सरकार से बिना मंजूरी के आपराधिक शिकायत को बनाए रखने के बारे में उनके आवेदन को अस्वीकार करने के मजिस्ट्रेट के आदेश की पुष्टि की । हमारी राय में, यह स्पष्ट मामला है कि जहां अपीलार्थी अपने लोक कर्तव्य का निर्वहन कर सके थे । क्योंकि वे सरकारी अस्पताल में रोगी की शल्यक्रिया कर रहे थे । यह विवाद नहीं किया गया है कि अपीलार्थी सरकारी अस्पताल में चिकित्सा अधिकारी थे । इस प्रकार, अपीलार्थियों का आपराधिक अभियोजन जो प्रत्यर्थी (शिकायतकर्ता) द्वारा प्रारंभ किया गया, राज्य सरकार से बिना मंजूरी चलने योग्य नहीं है । ऐसा होते हुए हम इस अपील को मंजूर करते हैं ।"

18. **मनोरमा तिवारी और** बनाम **सुरेन्द्र नाथ राज** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा वही मत अपनाया गया तथा **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **महेश जी. जैन**[2] वाले एक अन्य संप्रकाशित मामले में उच्चतम न्यायालय ने एक समान मत अपनाया है ।

19. वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करते हुए मेरा यह समाधान हुआ है कि आवेदक के बारे में दंड संहिता की धारा 304क के निबंधनों में किसी प्रकार, उपेक्षा बरता जाना नहीं कहा जा सकता है, किसी प्रकार, उपचार के संबंध में निर्णय में गलती हो सकती है, क्योंकि अभिलेख पर यह प्रकट हुआ है कि रोगी को उचित पुनरुज्जीवन किया गया परंतु इस बात की खराबी को विचार में लिया गया कि रोगी गुर्दे सहित कई तरह की बीमारियों से ग्रसित था, यह प्रकट हुआ है कि उपचार की प्रतिक्रिया प्रकट नहीं हुई जो उसे दी गई थी । यह देखा गया है कि जब आवेदक का दल के सदस्यों के साथ अभियोजन किया गया जो रोगी का उपचार कर रहे थे, जिसमें तीन सदस्य अर्थात् डा. राजीव बर्गोहत्ता, डा. विजय पाठक और

---

[1] (2016) 1 एस. सी. सी. 594 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6802.

[2] (2013) 8 एस. सी. सी. 119 = 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3174.

डा. अरविन्द शर्मा सम्मिलित थे, उन्हें पुलिस थाने में दर्ज शिकायत में सम्मिलित नहीं किया गया था । यह प्रतीत होता है कि शिकायत स्वतः प्रेरित हुई है । इस न्यायालय का यह समाधान है कि अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के हृदय रोग के विभागाध्यक्ष डा. एस. सी. मनचंदा द्वारा मामले की उचित रूप से जांच की गई थी । संबंधित मजिस्ट्रेट द्वारा दंड संहिता की धारा 304क के अधीन संज्ञान लेने के लिए जिसकी राय पर विचार किया जाना ईप्सित था जैसाकि **जैकब मैथ्यू** बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है ।

20. अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी के संबंध में प्रश्न पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 का उल्लेख किया जाना जरूरी है । अभियुक्त द्वारा अपने शासकीय कर्तव्य के निर्वहन में अधिनियम से संबंधित तात्पर्यित कार्रवाई में किया गया अभिकथित अपराध उसके शासकीय कार्य से संबंधित होना अभिप्रेत है और यदि वह ऐसा नहीं करता है तो यह शासकीय कर्तव्य के चूक की कोटि में आएगा । दूसरे शब्दों में यह विवक्षित है कि लोक सेवक द्वारा अपनी सेवा के दौरान ऐसा कार्य या लोप किया जाना चाहिए और ऐसा कार्य या लोप अपने कर्तव्य के भाग रूप में पूरा किया जाना चाहिए, इसके अतिरिक्त शासकीय प्रकृति का होना चाहिए ।

21. डाक्टर की ओर से किए गए ऐसे कार्य या लोप की परीक्षा करते हुए, दो पहलुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए अर्थात् डाक्टर रहते हुए ऐसा कार्य या लोप किया गया था या एक शासकीय डाक्टर होते हुए अपने शासकीय कर्तव्य, जो देखने में आता है, पूरा किया गया है । हृदय रोग विभागाध्यक्ष के रूप में आवेदक एस. एम. एस. चिकित्सा महाविद्यालय में अपने कर्तव्य को शासकीय रूप में पूरा कर रहा था जहां रोगी का उपचार चल रहा था । इस प्रकार, वर्तमान अभिकथित कार्य या लोप का यदि इस प्रकार अर्थान्वयन किया जाए तो मात्र शासकीय कर्तव्य की चूक हुई है और इसलिए धारा 197 के उपबंध लागू होंगे और राज्य से अभियोजन चलाने की मंजूरी अपरिहार्य रूप से अपेक्षित है और न्यायालय शासकीय कर्तव्य का निर्वहन करने के दौरान बरती गई ऐसे अभिव्यक्ति की उपेक्षा के लिए संज्ञान ले सकता है और अभियोजन से संबंधित कोई भी कार्यवाही पहले से ली गई मंजूरी के बिना नहीं चलाई जा सकती ।

---

[1] ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3180.

22. पूर्वोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान आवेदन को मंजूर किया जाता है । विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा आवेदक के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 304क के अधीन संज्ञान लेने का तारीख 10 मई, 2003 का आदेश अभिखंडित या अपास्त किया जाता है ।

23. खर्चों के बाबत कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

आवेदन मंजूर किया गया ।

आर्य

(2018) 1 दा. नि. प. 515 राजस्थान

भोज राज उर्फ मुखी सिंधी

बनाम

राजस्थान राज्य

तारीख 23 नवंबर, 2017

न्यायमूर्ति गोपाल कृष्ण व्यास और न्यायमूर्ति (डा.) वीरेन्द्र कुमार माथुर

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 [भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 और 32] – हत्या – मृत्युकालिक कथन – विश्वसनीयता – मृतक पर मिट्टी का तेल उंडेल कर आग लगाए जाने का अभिकथन – स्वस्थता प्रमाणपत्र प्राप्त किए जाने के पश्चात् मजिस्ट्रेट द्वारा मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जाना – चिकित्सीय साक्ष्य से आग में जलने से हुई मृत्यु की पुष्टि होना – चिकित्सक ने यह स्वीकार किया है कि मजिस्ट्रेट द्वारा मृतक का कथन तब अभिलिखित किया गया था जब स्वस्थता प्रमाणपत्र जारी कर दिया गया था, चिकित्सा बोर्ड द्वारा स्पष्ट किया गया है कि मृतक को पहुंची दाह क्षतियां गंभीर प्रकृति की हैं जिनके कारण मृत्यु हुई है तथा मृतक और अभियुक्त के बीच धन संबंधी संव्यवहार को लेकर झगड़ा भी हुआ था, अतः इन परिस्थितियों में विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए दोषसिद्धि के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

मामले के तथ्यों के अनुसार तारीख 21 दिसंबर, 2007 को पुलिस थाना कोतवाली, भीलवाड़ा के नियंत्रण कक्ष से यह सूचना प्राप्त हुई कि

एक व्यक्ति आग से जल गया है, इस पर सहायक पुलिस निरीक्षक मान सिंह घटनास्थल पर गया और मृतक कुन्दनमल को महात्मा गांधी अस्पताल ले गया जहां उसे उपचार के लिए भर्ती करा दिया गया । आहत कुन्दनमल का पर्चा-बयान (प्रदर्श पी. 7) पुलिस थाना कोतवाली के सहायक पुलिस निरीक्षक द्वारा तारीख 21 दिसंबर, 2007 को 2 बजे अपराह्न में अभिलिखित किया गया जिसमें मृतक कुन्दनमल ने कथन किया है कि "श्री कुन्दनमल पुत्र कोड़ामल सिंधी निवासी बापू नगर, भीलवाड़ा, थाना प्रताप नगर जेरे-इलाज बर्निंग वार्ड, बिस्तर सं. 2ए ने बताया कि आज मैं सवारी शास्त्री नगर से छोड़कर आ रहा था । कालेज रोड पर भोजराज **उर्फ** मुखी और बेबू अनुवाला दोनों मिले । दोनों स्कूटर पर थे, आते ही मुझे रोककर टेम्पो से बाहर निकाला । मुखी ने पकड़ लिया व बेबू अनुवाला ने पेट्रोल डाल दिया व मुखी ने आग लगा दी जिनसे में वहीं गिर पड़ा । काफी लोग इकट्ठा हो गए । इन दोनों ने पहले भी मुझे जान से मारने की धमकी दी थी जिसकी रिपोर्ट दे रखी है । मुझे भोज राज **उर्फ** मुखी व बेबू अनुवाले ने जान से मारो की गरज से मेरे ऊपर पेट्रोल डालकर आग लगा दी । पुलिस वालों ने मुझे अस्पताल में लाकर भर्ती कराया । इन दोनों ने मुझे जान से खत्म करने की नीयत से पेट्रोल डालकर आग लगाई है । बयान पढ़कर सुनाया गया । सुनकर सही मानकर हस्ताक्षर किए । सुबह मेरे को धमकी दी । जिसका आज ही कोतवाल साहब/एस. पी. साहब के नाम से पत्र डाला है ।" इस पर्चा-बयान (प्रदर्श पी. 7) के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 645/2007 (प्रदर्श पी. 8) तारीख 21 दिसंबर, 2007 को पुलिस थाना कोतवाली, जिला भीलवाड़ा में दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दर्ज कराई गई । अपर सेशन न्यायाधीश ने अभियुक्त-अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और आजीवन कारावास से तथा 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने, जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त छह मास के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया । अपर सेशन न्यायाधीश के इस आदेश से व्यथित होकर अभियुक्त-अपीलार्थी ने राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मृतक की मृत्यु के पश्चात् दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध जोड़ा गया और शवपरीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श पी. 9) के अनुसार मृत्यु का कारण शत-प्रतिशत पहुंची दाह क्षतियां पाया गया । हमने मजिस्ट्रेट राकेश शर्मा (अभि. सा. 20) द्वारा अभिलिखित मृत्युकालिक

कथन (प्रदर्श पी. 10) का भी परिशील किया है जिसमें अभियुक्त-अपीलार्थियों पर मृतक कुन्दनमल द्वारा स्पष्ट रूप से अभिकथन किए गए हैं जिनसे हेतु साबित होता है साथ ही वह घटना भी साबित होती है जिसमें मृतक को जलाया गया है । पुलिस थाना कोतवाली के थानाध्यक्ष ने तारीख 21 दिसंबर, 2007 को मजिस्ट्रेट द्वारा आहत का कथन अभिलिखित किए जाने के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन (प्रदर्श पी. 15) प्रस्तुत किया, जिस पर विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने श्री राकेश शर्मा, न्यायिक मजिस्ट्रेट (प्रथम श्रेणी) सं. 3, भीलवाड़ा (अभि. सा. 20) को निदेश दिया कि मृतक का कथन अभिलिखित किया जाए और यह बात अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेज (प्रदर्श पी. 15) से स्पष्ट है । मृतक के कथन (प्रदर्श पी. 10) पर ही मजिस्ट्रेट ने डा. सरिता काबरा (अभि. सा. 9) से स्वस्थता प्रमाणपत्र भी प्राप्त किया था । उक्त डा. सरिता काबरा ने स्पष्ट रूप से अपने कथन में यह स्वीकार किया है कि मजिस्ट्रेट द्वारा मृतक का कथन तब अभिलिखित किया गया था जब उसने (डा. काबरा) स्वस्थता प्रमाणपत्र जारी कर दिया था और यह तथ्य मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) से स्पष्ट है । अन्य साक्षी हीरा नंद (अभि. सा. 1), भंवर सिंह (अभि. सा. 2), अंकुर जैन (अभि. सा. 3), नवीन जोशी (अभि. सा. 4) और मूलचंद (अभि. सा. 5) ने स्पष्ट रूप से अन्वेषण को साबित किया है और साथ ही अन्वेषण अधिकारी द्वारा अन्वेषण के दौरान की गई बरामदगी को भी सिद्ध किया है । सुमेर सिंह (अभि. सा. 6) पक्षद्रोही हो गया है किन्तु उसने अभियोजन पक्षकथन का भागतः समर्थन किया है । मान सिंह (अभि. सा. 7) ऐसा साक्षी है जो पुलिस थाना कोतवाली में सहायक उप निरीक्षक के पद पर कार्यरत है और इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से सम्पूर्ण अभियोजन पक्षकथन का समर्थन किया है और मृतक के कथन अभिलिखित किए हैं । डा. वी. डी. शर्मा (अभि. सा. 8) मृतक का शवपरीक्षण किए जाने के प्रयोजनार्थ गठित किए गए चिकित्सा बोर्ड का सदस्य है और डा. डी. एल. काश्त तथा डा. अजय नारायण माथुर भी चिकित्सा बोर्ड के सदस्य हैं और इन सभी सदस्यों ने स्पष्ट रूप से यह साबित किया है कि मृतक के शरीर पर गंभीर दाह क्षतियां आई हुई थीं । न्यायालय ने राकेश शर्मा (अभि. सा. 20) के साक्ष्य का परिशीलन किया है जिन्होंने स्पष्ट रूप से मृतक के मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) के अभिलिखित किए जाने के तथ्य को साबित किया है और यह उल्लेख किया है कि मृतक का कथन अभिलिखित किए जाने के पूर्व चिकित्सक द्वारा स्वस्थता प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया गया था ।

पुलिस थाना कोतवाली के थानाध्यक्ष राजेन्द्र सिंह (अभि. सा. 22) ने स्पष्ट रूप से सम्पूर्ण अन्वेषण को साबित किया है । अभिलेख पर उपलब्ध सम्पूर्ण साक्ष्य का निर्धारण करने और इस तथ्य का आंकलन करने पर कि अभियुक्त-अपीलार्थी अभ्यस्त अपराधी हैं और मृतक और अभियुक्त भोज राज **उर्फ** मुखी के बीच कुछ धन संबंधी संव्यवहार को लेकर झगड़ा हुआ था, यह निष्कर्ष निकलता है कि अभियुक्त-अपीलार्थियों ने मृतक कुन्दन-मल पर मिट्टी का तेल उंडेल कर मृत्यु कारित की है । (पैरा 17, 18, 19 और 21)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2008 की दांडिक अपील सं. 843.

2008 के सेशन विचारण मामला सं. 10 में अपर सेशन न्यायाधीश (त्वरित न्यायालय) सं. 1, भीलवाड़ा द्वारा तारीख 24 सितंबर, 2008 को पारित निर्णय के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री महेश बोरा (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और अरुण कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जे. पी. एस. चौधरी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति गोपाल कृष्ण व्यास ने दिया ।

न्या. व्यास – वर्तमान दांडिक अपील अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन 2008 के सेशन विचारण मामला सं. 10 में अपर सेशन न्यायाधीश (त्वरित न्यायालय) सं. 1, भीलवाड़ा द्वारा तारीख 24 सितंबर 2008 को पारित निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कारावास से तथा 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त छह मास के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया गया है ।

2. मामले के तथ्यों के अनुसार तारीख 21 दिसंबर, 2007 को पुलिस थाना कोतवाली, भीलवाड़ा के नियंत्रण कक्ष से यह सूचना प्राप्त हुई कि एक व्यक्ति आग से जल गया है, इस पर सहायक पुलिस निरीक्षक मान सिंह घटनास्थल पर गया और मृतक कुन्दनमल को महात्मा गांधी अस्पताल ले गया जहां उसे उपचार के लिए भर्ती करा दिया गया ।

3. आहत कुन्दनमल का पर्चा-बयान (प्रदर्श पी.7) पुलिस थाना कोतवाली के सहायक पुलिस निरीक्षक द्वारा तारीख 21 दिसंबर, 2007 को 2 बजे अपराह्न में अभिलिखित किया गया जिसमें मृतक कुन्दनमल ने निम्न प्रकार कथन किया :–

> "श्री कुन्दनमल पुत्र कोड़ामल सिंधी निवासी बापू नगर, भीलवाड़ा, थाना प्रताप नगर जेरे-इलाज बर्निंग वार्ड, बिस्तर सं. 2ए ने बताया कि आज मैं सवारी शास्त्री नगर से छोड़कर आ रहा था । कालेज रोड पर भोज राज **उर्फ** मुखी और बेबू अनुवाला दोनों मिले । दोनों स्कूटर पर थे, आते ही मुझे रोककर टेम्पो से बाहर निकाला । मुखी ने पकड़ लिया व बेबू अनुवाला ने पेट्रोल डाल दिया व मुखी ने आग लगा दी जिससे मैं वहीं गिर पड़ा । काफी लोग इकट्ठा हो गए । इन दोनों ने पहले भी मुझे जान से मारने की धमकी दी थी जिसकी रिपोर्ट दे रखी है । मुझे भोज राज **उर्फ** मुखी व बेबू अनुवाले ने जान से मारो की गरज से मेरे ऊपर पेट्रोल डालकर आग लगा दी । पुलिस वालों ने मुझे अस्पताल में लाकर भर्ती कराया । इन दोनों ने मुझे जान से खत्म करने की नीयत से पेट्रोल डालकर आग लगाई है । बयान पढ़कर सुनाया गया । सुनकर सही मानकर हस्ताक्षर किए । सुबह मेरे को धमकी दी । जिसका आज ही कोतवाल साहब/एस. पी. साहब के नाम से पत्र डाला है ।"

4. उपरोक्त पर्चा-बयान (प्रदर्श पी. 7) के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 645/2007 (प्रदर्श पी. 8) तारीख 21 दिसंबर, 2007 को पुलिस थाना कोतवाली, जिला भीलवाड़ा में दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दर्ज कराई गई ।

5. राकेश शर्मा (अभि. सा. 20) अर्थात् न्यायिक मजिस्ट्रेट (प्रथम श्रेणी) सं. 3 द्वारा मृतक के कथन अभिलिखित किए गए जिनमें विशेष रूप से मृतक द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध मिट्टी का तेल उंडेल कर आग लगाने का अभिकथन किया गया था ।

6. मृतक कुन्दनमल की मृत्यु चिकित्सा उपचार के दौरान हुई है, अतः शवपरीक्षण तारीख 22 दिसंबर, 2007 को 9.40 बजे पूर्वाह्न में कराया गया और शवपरीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श पी. 9) अन्वेषण अधिकारी को आगे कार्यवाही किए जाने के लिए दी गई ।

7. अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल का मुआयना करने के पश्चात्

स्थलनक्शा (प्रदर्श पी. 1 और मानचित्र (प्रदर्श पी. 2) तैयार किए । ऑटो-रिक्शा अभिगृहीत किया गया और उसे प्रदर्श पी. 3 के अनुसार कब्जे में लिया गया । मृतक कुन्दनमल का पर्चा-बयान (प्रदर्श पी. 4) अस्पताल में अभिलिखित किया गया । शवपरीक्षण के पश्चात् मृतक कुन्दनमल का शव उसके पुत्र मूलचंद को प्रदर्श पी. 5 के अनुसार दो साक्षियों अर्थात् अंकुर जैन और मोहम्मद अकरम की मौजूदगी में सौंप दिया गया । कुन्दनमल की मृत्यु के पश्चात् अन्वेषण के दौरान दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध जोड़ा गया । अभियुक्त-अपीलार्थी भोज राज **उर्फ** मुखी को तारीख 22 दिसंबर, 2007 को दो साक्षियों अर्थात् भवानी सिंह और रामेश्वर लाल की मौजूदगी में 6.30 बजे अपराह्न में प्रदर्श पी. 20 के अनुसार पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया, इसी प्रकार अन्य अभियुक्त पुरुषोत्तम **उर्फ** बेबू को भी तारीख 22 दिसंबर, 2007 को 6.15 बजे अपराह्न में भवानी सिंह और रामेश्वर लाल की मौजूदगी में गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण के दौरान यह पाया गया कि अभियुक्त अभ्यस्त अपराधी हैं अतः अन्वेषण के प्रयोजनार्थ भोज राज **उर्फ** मुखी और पुरुषोत्तम **उर्फ** बेबू के विरुद्ध दर्ज किए गए अन्य मामलों के भी ब्यौरे प्राप्त किए गए । अन्वेषण अधिकारी ने अभियोजन साक्षियों के कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित करने के पश्चात् अन्वेषण पूरा करते हुए अभियुक्त-अपीलार्थियों के विरुद्ध अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भीलवाड़ा के समक्ष आरोप पत्र फाइल किया और इस न्यायालय से मामला सेशन न्यायाधीश, भीलवाड़ा को विचारण के लिए सुपुर्द कर दिया गया किन्तु इसके पश्चात् इस मामले को अपर जिला और सेशन न्यायाधीश (त्वरित न्यायालय) सं. 1, भीलवाड़ा को स्थानांतरित कर दिया गया ।

8. विद्वान् विचारण न्यायालय ने सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् अभियुक्त-अपीलार्थियों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किया किन्तु दोनों अपीलार्थियों ने आरोप से इनकार किया और विचारण किए जाने की प्रार्थना की ।

9. अभियोजन पक्षकथन साबित करने के लिए विचारण के दौरान 23 अभियोजन साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए, इसके पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थियों के कथन अभिलिखित किए गए जिनमें अभियुक्त-अपीलार्थी भोज राज ने यह स्पष्टीकरण दिया कि उसे 2 बजे टेम्पो स्टेंड से पुलिस द्वारा बलपूर्वक इस आधार पर पुलिस थाने लाया गया कि इस घटना के बारे में उसे जानकारी

थी, यही स्पष्टीकरण सह-अभियुक्त पुरुषोत्तम उर्फ बेबू द्वारा दिया गया है और प्रतिरक्षा में सुरेश कुमार (प्रतिरक्षा साक्षी 1) और मंगल उर्फ नाथू (प्रतिरक्षा साक्षी 2) को प्रस्तुत किया गया । दोनों पक्षों की ओर से साक्ष्य अभिलिखित किए जाने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अंतिम रूप से बहस सुनी और तारीख 24 सितंबर, 2008 को सेशन मामला सं. 10/2008 में आक्षेपित निर्णय पारित कर दिया और अभियुक्त-अपीलार्थियों को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया और प्रत्येक अपीलार्थी पर 10,000/- रुपए जुर्माना करते हुए आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर 6 मास के अतिरिक्त कारावास का भी दंड दिया । इस अपील में उक्त निर्णय को चुनौती दी गई है ।

10. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि सम्पूर्ण अभियोजन पक्षकथन दो मृत्युकालिक कथनों पर आधारित है जिनमें पहला कथन (प्रदर्श पी. 7) पुलिस थाना कोतवाली, भीलवाड़ा के सहायक उप निरीक्षक द्वारा अभिलिखित किया गया था और दूसरा मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) न्यायिक मजिस्ट्रेट सं. 3, भीलवाड़ा द्वारा अभिलिखित किया गया था । किन्तु अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के अनुसार पुलिस थाना कोतवाली के सहायक उप निरीक्षक या मजिस्ट्रेट द्वारा कथन अभिलिखित किए जाने के पूर्व कोई भी लिखित सूचना चिकित्सक को नहीं दी गई थी ताकि यह सुनिश्चित किया जाता कि मृतक कुन्दनमल प्रश्नों को समझने की स्थिति में या कथन देने की स्थिति में था या नहीं, अतः मृतक के ठीक अवस्था में होने से संबंधित दस्तावेजी साक्ष्य के न होने पर यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि अभियोजन पक्ष ने अपना पक्षकथन संदेह के परे साबित कर दिया है । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के अनुसार विचारण न्यायालय ने पुलिस थाना कोतवाली, जिला भीलवाड़ा के सहायक उप निरीक्षक द्वारा अभिलिखित मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 7) और विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) को अविश्वसनीय ठहराने के लिए आबद्ध था क्योंकि इन दोनों साक्षियों ने अपने कथन में यह स्वीकार किया है कि मृतक कुन्दन-मल के कथन देने के लिए ठीक हालत में होने से संबंधित चिकित्सक द्वारा लिखित में कोई भी प्रमाणपत्र नहीं प्राप्त किया गया था, अतः सम्पूर्ण अभियोजन पक्षकथन संदिग्ध हो जाता है क्योंकि अभियोजन पक्ष का यह कर्तव्य है कि वह अपना पक्षकथन संदेह के परे साबित करे ।

11. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि चिकित्सक के कथन के अनुसार मृतक की मृत्यु शत-प्रतिशत दाह क्षतियों के कारण हुई है और यह तथ्य सही है, इसलिए, स्वाभाविक है कि मृतक के लिए यह संभव नहीं था कि वह पुलिस थाना कोतवाली, जिला भीलवाड़ा के सहायक उप निरीक्षक या न्यायिक मजिस्ट्रेट सं. 3, भीलवाड़ा द्वारा अभिलिखित कथन पर अपने हस्ताक्षर करता । यह सत्य है कि चिकित्सक के साक्ष्य को अविश्वसनीय नहीं ठहराया जा सकता किन्तु साथ ही अभियोजन पक्ष का कर्तव्य है कि वह मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने के लिए विधि में अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण करे जो कि इस मामले में नहीं किया गया है, अतः वर्तमान अपील मंजूर की जानी चाहिए । अभियुक्त-अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभियोजन पक्ष कोई भी विश्वसनीय या विश्वासप्रद साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहा है ताकि अभियुक्त-अपीलार्थियों को अपराध से संबद्ध किया जाता किन्तु विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने केवल अनुमान और अटकलों के आधार पर अभियुक्त-अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है, अतः यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित निर्णय अभिखंडित किया जाए और अपीलार्थियों को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए उन पर लगाए गए आरोपों से मुक्त किया जाए ।

इसके प्रतिकूल विद्वान् लोक अभियोजक ने यह दलील दी है कि पुलिस नियंत्रण कक्ष से सूचना प्राप्त करने पर तत्काल अस्पताल गई जहां आहत कुन्दनमल को दाहक्षति-वार्ड में बिस्तर सं. 2 पर भर्ती कराया गया । पुलिस थाना कोतवाली के सहायक उप निरीक्षक ने मृतक का कथन अभिलिखित किया और उक्त कथन का सत्यापन 2.15 बजे अपराह्न में चिकित्सक द्वारा कराया गया जो कि कथन (उपाबंध पी. 7) से स्पष्ट है । इस पर मृतक कुन्दनमल के हस्ताक्षर हैं ।

12. पुलिस ने तारीख 21 दिसंबर, 2007 को दंड संहिता की धारा 307 के अधीन मामला दर्ज किया और अन्वेषण आरंभ किया किन्तु दुर्भाग्यवश उपचार के दौरान मृतक की मृत्यु हो गई अतः अन्वेषण अधिकारी द्वारा मृतक का शवपरीक्षण कराया गया और शवपरीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श पी. 9) प्राप्त की गई । विद्वान् लोक अभियोजक ने भी दलील दी है कि पुलिस थाना भीलवाड़ा के थानाध्यक्ष द्वारा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भीलवाड़ा के समक्ष आवेदन (उपाबंध पी. 15) प्रस्तुत किया गया जिस पर चिकित्सक द्वारा आदेश किया गया कि मृतक का कथन न्यायिक मजिस्ट्रेट

(प्रथम श्रेणी) सं. 3, भीलवाड़ा द्वारा अभिलिखित किया जाए, उक्त मजिस्ट्रेट तत्काल ही मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने के लिए अस्पताल गए और कथन अभिलिखित करने के पूर्व रोगी का स्वस्थता प्रमाणपत्र उसी कागज पर प्राप्त किया गया जिस पर मृतक का कथन अभिलिखित किया गया था जो कि मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) से स्पष्ट है । मृतक ने स्पष्ट रूप से अपीलार्थियों के विरुद्ध मिट्टी का तेल उंडेलकर आग लगाने का अभिकथन किया है और शवपरीक्षण रिपोर्ट के अनुसार मृतक की मृत्यु दाह-क्षतियों के कारण हुई है और इस तथ्य की संपुष्टि चिकित्सीय साक्ष्य से भी होती है, अतः विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य को विश्वसनीय और विश्वासप्रद स्वीकार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी दोषी हैं । डा. सरिता कबरा (अभि. सा. 9) ने स्पष्ट रूप से यह अभिकथन किया है कि मृतक का कथन अभिलिखित किए जाने के समय मृतक जीवित था और मैंने कथन प्रदर्श पी. 10 पर ही अपनी राय दे दी थी कि मृतक कथन देने के लिए ठीक हालत में है और मृतक के कथन देने के लिए ठीक हालत में होने के संबंध में सूचना देने के पश्चात् मजिस्ट्रेट (अभि. सा. 20) ने मृतक कुन्दन-मल का कथन अभिलिखित किया जिसमें मृतक द्वारा सम्पूर्ण अभियोजन वृत्तांत प्रकट किया गया ।

13. विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा दी गई दलील के अनुसार अभियोजन पक्ष ने संदेह के परे इस घटना को साबित किया है, अतः दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त-अपीलार्थियों के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने का कोई प्रश्न नहीं उठता है । इस प्रकार यह दलील दी गई है कि वर्तमान अपील खारिज की जाए ।

14. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् हमने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के आलोक में दी गई दलीलों पर विचार किया है ।

15. अन्वेषण की शुद्धता को सुनिश्चित करने के लिए सबसे पहले हमने अन्वेषण अधिकारी राजेन्द्र सिंह (अभि. सा. 22) के कथन का परिशीलन किया है, उक्त साक्षी ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि तारीख 21 दिसंबर, 2007 को जब मैं पुलिस थाना कोतवाली जिला भीलवाड़ा में थानाध्यक्ष के रूप में तैनात था, तब उस दिन मुझे पुलिस नियंत्रण कक्ष से यह सूचना प्राप्त हुई कि गर्ल्स कालेज रोड पर एक व्यक्ति आग में जल रहा है । इस सूचना के प्राप्त होने पर सहायक उप

निरीक्षक मान सिंह दो अन्य पुलिस अधिकारियों के साथ घटनास्थल पर पहुंचा और कुन्दनमल को जली हुई अवस्था में पाया, अतः उसे उपचार के लिए महात्मा गांधी अस्पताल ले जाया गया । इसी दौरान यह साक्षी पुलिस थाने से अस्पताल गया जहां सहायक उप निरीक्षक मान सिंह ने आहत कुन्दनमल का कथन प्रदर्श पी. 7 अभिलिखित किया जिसमें आहत ने निम्न अभिकथन किए :–

> "श्री कुन्दनमल पुत्र कोड़ामल सिंधी निवासी बापू नगर, भीलवाड़ा, थाना प्रताप नगर जेरे-इलाज बर्निंग वार्ड, बिस्तर सं. 2ए ने बताया कि आज मैं सवारी शास्त्री नगर से छोड़कर आ रहा था । कालेज रोड पर भोज राज **उर्फ** मुखी और बेबू अनुवाला दोनों मिले । दोनों स्कूटर पर थे, आते ही मुझे रोककर टेम्पो से बाहर निकाला । मुखी ने पकड़ लिया व बेबू अनुवाला ने पेट्रोल डाल दिया व मुखी ने आग लगा दी जिससे मैं वहीं गिर पड़ा । काफी लोग इकट्ठा हो गए । इन दोनों ने पहले भी मुझे जान से मारने की धमकी दी थी जिसकी रिपोर्ट दे रखी है । मुझे भोज राज **उर्फ** मुखी व बेबू अनुवाले ने जान से मारो की गरज से मेरे ऊपर पेट्रोल डालकर आग लगा दी । पुलिस वालों ने मुझे अस्पताल में लाकर भर्ती कराया । इन दोनों ने मुझे जान से खत्म करने की नीयत से पेट्रोल डालकर आग लगाई है । बयान पढ़कर सुनाया गया । सुनकर सही मानकर हस्ताक्षर किए । सुबह मेरे को धमकी दी । जिसका आज ही कोतवाल साहब/एस. पी. साहब के नाम से पत्र डाला है ।"

16. तारीख 21 दिसंबर, 2007 को उपरोक्त कथन के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 645/2007 पुलिस थाना कोतवाली, भीलवाड़ा में दर्ज कराई गई और अन्वेषण आरंभ किया गया ।

17. मृतक की मृत्यु के पश्चात् दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध जोड़ा गया और शवपरीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श पी. 9) के अनुसार मृत्यु का कारण शत-प्रतिशत पहुंची दाह क्षतियां पाया गया । हमने मजिस्ट्रेट राकेश शर्मा (अभि. सा. 20) द्वारा अभिलिखित मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) का भी परिशीलन किया है जिसमें अभियुक्त-अपीलार्थियों पर मृतक कुन्दनमल द्वारा स्पष्ट रूप से अभिकथन किए गए हैं जिनसे हेतु साबित होता है साथ ही वह घटना भी साबित होती है जिसमें मृतक को जलाया गया है । पुलिस थाना कोतवाली के थानाध्यक्ष ने तारीख 21 दिसंबर, 2007 को मजिस्ट्रेट द्वारा आहत का कथन अभिलिखित किए जाने

के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन (प्रदर्श पी. 15) प्रस्तुत किया, जिस पर विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने श्री राकेश शर्मा, न्यायिक मजिस्ट्रेट (प्रथम श्रेणी) सं. 3, भीलवाड़ा (अभि. सा. 20) को निदेश दिया कि मृतक का कथन अभिलिखित किया जाए और यह बात अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेज (प्रदर्श पी. 15) से स्पष्ट है । मृतक के कथन (प्रदर्श पी. 10) पर ही मजिस्ट्रेट ने डा. सरिता कबरा (अभि. सा. 9) से स्वस्थता प्रमाणपत्र भी प्राप्त किया था । उक्त डा. सरिता काबरा ने स्पष्ट रूप से अपने कथन में यह स्वीकार किया है कि मजिस्ट्रेट द्वारा मृतक का कथन तब अभिलिखित किया गया था जब उसने (डा. कबरा) स्वस्थता प्रमाणपत्र जारी कर दिया था और यह तथ्य मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) से स्पष्ट है । अन्य साक्षी हीरा नंद (अभि. सा. 1), भंवर सिंह (अभि. सा. 2), अंकुर जैन (अभि. सा. 3), नवीन जोशी (अभि. सा. 4) और मूलचंद (अभि. सा. 5) ने स्पष्ट रूप से अन्वेषण को साबित किया है और साथ ही अन्वेषण अधिकारी द्वारा अन्वेषण के दौरान की गई बरामदगी को भी सिद्ध किया है । सुमेर सिंह (अभि. सा. 6) पक्षद्रोही हो गया है किन्तु उसने अभियोजन पक्षकथन का भागतः समर्थन किया है ।

18. मान सिंह (अभि. सा. 7) ऐसा साक्षी है जो पुलिस थाना कोतवाली में सहायक उप निरीक्षक के पद पर कार्यरत है और इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से सम्पूर्ण अभियोजन पक्षकथन का समर्थन किया है और मृतक के कथन अभिलिखित किए हैं । डा. वी. डी. शर्मा (अभि. सा. 8) मृतक का शवपरीक्षण किए जाने के प्रयोजनार्थ गठित किए गए चिकित्सा बोर्ड का सदस्य है और डा. डी. एल. काश्त तथा डा. अजय नारायण माथुर भी चिकित्सा बोर्ड के सदस्य हैं और इन सभी सदस्यों ने स्पष्ट रूप से यह साबित किया है कि मृतक के शरीर पर गंभीर दाह क्षतियां आई हुई थीं ।

19. हमने राकेश शर्मा (अभि. सा. 20) के साक्ष्य का परिशीलन किया है जिन्होंने स्पष्ट रूप से मृतक के मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी. 10) के अभिलिखित किए जाने के तथ्य को साबित किया है और यह उल्लेख किया है कि मृतक का कथन अभिलिखित किए जाने के पूर्व चिकित्सक द्वारा स्वस्थता प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया गया था । पुलिस थाना कोतवाली के थानाध्यक्ष राजेन्द्र सिंह (अभि. सा. 22) ने स्पष्ट रूप से सम्पूर्ण अन्वेषण को साबित किया है ।

20. हमारी राय में, अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल की दलील में कोई बल नहीं है कि आहत कुन्दनमल का कथन अभिलिखित किए जाने

और श्री राकेश शर्मा, न्यायिक मजिस्ट्रेट (अभि. सा. 20) द्वारा मृतक का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किए जाने के पूर्व श्री राकेश शर्मा चिकित्सक से आहत के ठीक अवस्था में होने से संबंधित प्रमाणपत्र प्राप्त करने में असफल रहे थे । हमारी राय में, ऐसी दलीलें पूर्णतया निराधार हैं क्योंकि विद्वान् मजिस्ट्रेट (अभि. सा. 20) ने मृतक का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने के पूर्व मृत्युकालिक कथन वाले कागज पर ही चिकित्सक से प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया था और इस तथ्य की संपुष्टि डा. सरिता कबरा (अभि. सा. 9) के साक्ष्य से भी होती है । शवपरीक्षण रिपोर्ट में चिकित्सा बोर्ड ने स्पष्ट रूप से यह राय दी है कि मृतक की मृत्यु शत-प्रतिशत अनुपात में पहुंची दाह क्षतियों के कारण हुई है और उक्त क्षतियां मृत्यु पूर्व की हैं ।

21. अभिलेख पर उपलब्ध सम्पूर्ण साक्ष्य का निर्धारण करने और इस तथ्य का आंकलन करने पर कि अभियुक्त-अपीलार्थी अभ्यस्त अपराधी हैं और मृतक और अभियुक्त भोज राज **उर्फ** मुखी के बीच कुछ धन संबंधी संव्यवहार को लेकर झगड़ा हुआ था, यह निष्कर्ष निकलता है कि अभियुक्त-अपीलार्थियों ने मृतक कुन्दनमल पर मिट्टी का तेल उंडेल कर मृत्यु कारित की है ।

22. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए, अभियुक्त-अपीलार्थियों को दोषी अभिनिर्धारित करने के संबंध में विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है । परिणामतः, अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई वर्तमान दांडिक अपील एतद्द्वारा खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

सी.एन.एन.-आई.बी.एन. 7 (मैसर्स)

बनाम

मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य

तथा

आशुतोष

बनाम

मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य

तथा

राजदीप सरदेसाई

बनाम

मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य

तथा

अनिरुद्ध बहल

बनाम

मौलाना मुमताज अहमद कासमी और अन्य

तारीख 29 अगस्त, 2017

न्यायमूर्ति तरलोक सिंह चौहान

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 482 – उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति – यदि परिवाद में उपवर्णित अभिकथन ऐसे अपराध का गठन नहीं करते जिसके लिए मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया गया है तो मजिस्ट्रेट धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए, उच्च न्यायालय, इस आदेश को अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 202 – आदेशिका के जारी किए जाने का मुल्तवी किया जाना – जहां मजिस्ट्रेट द्वारा समन पूर्व प्रक्रम पर परिवादी और उसके साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए हैं, वहां यह

स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा जांच की कोटि में आता है और उसके लिए पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण के लिए मामला भेजना कतई आवश्यक नहीं है, अतः विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा संहिता की धारा 202 के अधीन अनुध्यात प्रक्रिया का सम्यक् पालन किया गया है, इसलिए एकमात्र इस आधार पर परिवाद को अभिखंडित नहीं किया जा सकता ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 65ख – द्वितीयक साक्ष्य के साथ प्रमाणपत्र का दिया जाना – जहां सी.डी.आर. धारा 65क के अधीन ग्राह्य नहीं है और परिवाद में मानहानिकारक सामग्री के प्रकाशन में प्रत्येक याची द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है और संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित कथन तथा परिवाद में भी ऐसा उल्लेख नहीं है, वहां मात्र प्रसारण कंपनी का प्रभारी होने के आधार पर आदेशिका जारी किया जाना वैधतः न्यायसंगत नहीं है और न ही विधि की दृष्टि से संधार्य है ।

परिवादी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 500 और धारा 120ख के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए याचियों और प्रत्यर्थियों के विरुद्ध इस आशय का आपराधिक परिवाद फाइल किया कि वह अखिल भारतीय मुस्लिम स्वीय विधि का संयोजक और रबीता मदारिस दारुल-उलुम देवबंद, उत्तर प्रदेश का सदस्य है और तारीख 28 सितंबर, 2006 के पूर्व वह हिमाचल वक्फ बोर्ड और हिमाचल हज कमेटी का सदस्य रहा था और उसकी आम जनता में अच्छा नाम और ख्याति थी । तारीख 27 दिसंबर, 2012 को, सी.एन.एन.-आई.बी. 7 ने "कोबरा पोस्ट" के नाम से स्टिंग आपरेशन के माध्यम से उसे अपख्याति पहुंचाने के लिए समाचार प्रकाशित किया जबकि एक प्रत्यर्थी ने सभी अभियुक्तों की दुरभि संधि से समाचार का संपादन किया जिसने उसे 10,000/- रुपए की रिश्वत लेते हुए दिखाया गया था, तथापि, इस तरह की कोई बात नहीं हुई थी । परिवादी के अनुसार अभियुक्त अपने 15 व्यक्तियों को हज भेजना चाहता था तथापि, हज जाने के लिए उनके नामांकन के लिए आवेदन फाइल करने का समय पहले ही बीत चुका था और अभियुक्त व्यक्तियों ने उन्हें अनुज्ञा लेने के लिए बाम्बे जाने के लिए जबरदस्ती 10,000/- रुपए दिए । मुसलमान होते हुए उन्होंने उन व्यक्तियों की सहायता करनी चाही किंतु याचियों और प्रत्यर्थी सं. 5 से 7 में उन्हें 10,000/- रुपए रिश्वत लेते हुए दिखाया और यह संविरचित तस्वीर द्वारा समाचारपत्र में इस प्रकार प्रकाशित किया गया जिसके द्वारा उनकी ख्याति दागदार हुई । परिवादी ने अपने

काउंसेल के माध्यम से याची और प्रत्यर्थियों को भी नोटिस जारी किए किंतु उन लोगों ने इसका उत्तर नहीं दिया । उच्च न्यायालय द्वारा याचिकाएं मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – संहिता की धारा 482 उच्च न्यायालय को न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकने और परिवाद पर संस्थित कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की अपनी अंतर्निहित शक्तियों को प्रयोग करने की शक्ति प्रदान करती है किंतु ऐसी शक्ति का प्रयोग ऐसे मामलों में ही किया जाना चाहिए जहां परिवाद से कोई अपराध प्रकट नहीं होता या परिवाद उलझाऊ या दमनकारी है । यदि परिवाद में उपवर्णित अभिकथनों से ऐसा अपराध गठित नहीं होता जिसका संज्ञान मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया है तो उच्च न्यायालय संहिता की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए, इसे अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है । इस प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा विधि की प्रतिपादना के आधार पर यह स्थिर किए जाने का विचार किया जा सकता है कि संहिता की धारा 482 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को सतर्क भी और चौकस दोनों रहना चाहिए । इस शक्ति का प्रयोग कभी-कभार और किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयोजन के लिए ही किया जाना चाहिए । क्या परिवाद/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट/आरोप पत्र आदि दांडिक अपराध प्रकट करता है या नहीं, उसमें अभिकथित तथ्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है । (पैरा 5 और 9)

संहिता की धारा 200 के अधीन अपराध का संज्ञान लेने वाला मजिस्ट्रेट अपने समक्ष परिवादी द्वारा पेश परिवाद और साक्षियों की परीक्षा करने के लिए सशक्त हैं । यदि लोक सेवक द्वारा लिखित में परिवाद किया जाता है तो परिवाद या उसके साक्षियों की परीक्षा करने की अपेक्षा नहीं है किंतु संहिता की धारा 202 के अधीन कोई मजिस्ट्रेट अपराध/अपराधों का परिवाद प्राप्त होने पर जिसका संज्ञान लेने के लिए प्राधिकृत है, स्वयं जांच करेगा या पुलिस अधिकारी या ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा अन्वेषण करने का निदेश देगा जैसा वह ठीक समझे या ठीक पाए जाने पर अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका जारी करने को मुल्तवी करेगा जब अभियुक्त ऐसे क्षेत्र जिसमें वह अधिकारिता का प्रयोग करता है, से परे स्थान पर निवास करता है । धारा 202(1) के अधीन जांच का उद्देश्य परिवाद की सत्यता या असत्यता सुनिश्चित करना है । किंतु, जांच करने

वाले मजिस्ट्रेट को जांच पर उसके समक्ष किए गए कथनों की अंतर्निहित गुणता के प्रतिनिर्देश से ही ऐसा करना है जिसका स्वभावतः स्वयं परिवाद, परिवादी द्वारा किए गए शपथ पर कथन और परिवादी के अनुरोध पर परीक्षित व्यक्तियों द्वारा उसके समक्ष किए गए कथनों से ही अर्थ निकालना है । संहिता की धारा 202(1) के अधीन अनुध्यात जांच को धारा 202(2) में स्पष्ट किया गया है, जो यह दर्शित करता है कि शपथ पर साक्षियों के कथनों का अभिलेखन भी संहिता की धारा 202(1) में अंकित जांच का भाग है । मजिस्ट्रेट के पास प्रथमदृष्ट्या यह निष्कर्ष निकालने के प्रयोजन के लिए जांच की काफी व्यापक शक्ति है कि मामला विधि के पूर्वोक्त उपबंधों के अधीन आदेशिका के जारी करने के लिए उपयुक्त है । वह परिवाद के अपराध/अपराधों के संबंध में गहन जांच करा सकता है । इसके पश्चात् वह इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि आदेशिका जारी करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं । दूसरे शब्दों में, मजिस्ट्रेट के समक्ष परिवादी और उसके साक्षियों के समनपूर्व साक्ष्य के परिवाद में वर्णित अभिकथनों के आधार पर आगे कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं । संहिता की धारा 202 के अधीन उसके द्वारा अवलंबित जांच के दौरान शपथ पर साक्षियों की परीक्षा संहिता की धारा 202 के अधीन यथा अनुध्यात साक्षियों की परीक्षा के सदृश्य है । अतः, मजिस्ट्रेट द्वारा समनपूर्व प्रक्रम पर परिवादी और उसके साथियों के कथन का अभिलेखन किए जाने के पश्चात् यह स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा जांच की कोटि में आता है और उसके लिए मामले को पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण के लिए भेजना कतई आवश्यक नहीं है, जब वर्तमान मामले की तरह अभियुक्त उसकी अधिकारिता के बाहर रह रहा है । यह विवादित नहीं है कि सभी याची विद्वान् मजिस्ट्रेट की अधिकारिता के बाहर रहते हैं । अतः, मजिस्ट्रेट से संहिता की धारा 202(1) के संशोधित उपबंधों का पालन करने की अपेक्षा है जिसके द्वारा विद्वान् मजिस्ट्रेट से अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका जारी करने को मुल्तवी करने की अपेक्षा है और या तो स्वयं जांच करें या पुलिस अधिकारी या ऐसे किसी अन्य व्यक्ति द्वारा यह विनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए अन्वेषण करने का निदेश दें कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही आरंभ करने का पर्याप्त आधार है या नहीं । न्यायालय को, यह निष्कर्ष निकालने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि संहिता की धारा 202 के अधीन यथा अनुध्यात प्रक्रिया का विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा सम्यक् पालन किया गया है । अतः, एक मात्र इस आधार पर ही परिवाद

को अभिखंडित नहीं किया जा सकता । (पैरा 12, 13, 17, 19, 20, 21, 22 और 27)

न्यायिक प्रक्रिया उत्पीड़न या अनावश्यक तंग करने का उपकरण नहीं होनी चाहिए । न्यायालय को विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय चौकस और विवेकसम्मत होना चाहिए और न्यायिक प्रक्रिया जारी करने के पूर्व सभी सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए, ऐसा न हो कि यह प्राइवेट परिवादी के हाथों अनावश्यक रूप से व्यक्तियों को तंग करने के लिए प्रतिशोध के उपकरण के रूप में हो जाए । यह सुस्थिर है कि आपराधिक मामले में अभियुक्त को समन करना एक गंभीर मामला है और अभियुक्त को समन करते हुए, मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लेने वाले आदेश में यह प्रतिबिम्बित होना चाहिए कि उसने मामले के तथ्यों और उस पर लागू विधि के संबंध में अपने विवेक का प्रयोग किया है । संहिता की धारा 482, इस न्यायालय को न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और परिवाद पर संस्थित कार्यवाहियों को अभिखंडित करने के लिए अपनी अंतर्निहित शक्तियों को प्रयोग करने की शक्ति प्रदान करती है, किंतु, ऐसी शक्तियों का प्रयोग केवल ऐसे मामलों में किया जा सकता है जहां परिवाद से किसी अपराध का होना प्रकट नहीं होता या परिवाद खिजाऊ या दमनात्मक है । यदि परिवाद में यथा उपवर्णित अभिकथनों से ऐसा अपराध गठित नहीं होता जिसके लिए मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया गया है तो यह न्यायालय संहिता की धारा 482 के अधीन शक्तियों का उपयोग करते हुए, इसे अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है । निःसंदेह परिवादी से साक्ष्य अभिवाचित करने की अपेक्षा नहीं है, किंतु आधारभूत प्रकथन/अभिकथन होना चाहिए कि कैसे व्यक्ति अभिकथित अपराध में अंतर्वलित है । यदि परिवाद में उपवर्णित समग्र अभिकथनों पर विचार करने के पश्चात् अपराध के विनिर्दिष्ट अभिकथन की कमी है तो न्यायालय का यह स्पष्ट कर्तव्य है कि अभियुक्त व्यक्तियों को अनावश्यक विचारण की पीड़ा सहन करने से बचाएं । न केवल यही, बल्कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही जारी रखने की अनुज्ञा देने से सार्वजनिक समय और धन का बहुत अपव्यय होगा । इस प्रक्रम पर, यह ध्यान देने योग्य है, अभियुक्त सं. 1 से 3 अर्थात् मैसर्स सी. एन. एन.-आई. बी. एन. 7, राजदीप सरदेसाई और आशुतोष के विरुद्ध अभिकथन केवल ये हैं कि उन लोगों ने "हज के दलाल" शीर्ष के अधीन अभियुक्त सं. 4 से 7 द्वारा तैयार किए गए समाचार का प्रसारण किया, जो परिवादी के अनुसार अपमानजनक और अनादरपूर्ण है । परिवाद में या

परिवादी के कथन और अपमानजनक कार्यक्रम में प्रसारण या प्रकाशन में विभिन्न अभियुक्त की भूमिका के संबंध में संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित उनके दो साथियों में भी कोई विनिर्दिष्ट कथन नहीं है । वस्तुतः, अपमानजनक कार्यक्रम के प्रकाशन या प्रसारण में, प्रत्येक अभियुक्त द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में कोई सकारात्मक प्रकथन नहीं है । कथनों से यह प्रकट होता है कि अपमानजनक और अनादरपूर्ण लांछनों वाले अपमानजनक कार्यक्रम को प्रसारित किया गया था । अतः, परिवाद में और संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित कथनों में भी, इन अभिकथनों के अभाव में कि कैसे समाचार के प्रसारण के लिए विभिन्न अभियुक्त अंतर्वलित/उत्तरदायी थे, जो अपमानजनक और अनादरपूर्ण था, उन्हें आदेशिका जारी करना वैधतः पोषणीय नहीं है । परिवाद के शीर्षक में नामों का मात्र उल्लेख कि ऐसे-ऐसे व्यक्ति संपादक या निदेशक या प्रबंध निदेशक हैं, उन व्यक्तियों की दोषिता का अनुमान लगाना पर्याप्त नहीं होगा । सिविल दायित्व के असमान, दंड उपबंधों का भी कठोर अर्थान्वयन निकाला जाना चाहिए, जिसमें दंड विधि में कोई प्रतिनिर्धारित दायित्व नहीं है, जब तक कानून उसे अपनी परिधि के भीतर नहीं लेता है । अतः, परिवादी के लिए विनिर्दिष्ट अभिकथन करना लाजिमी था कि कैसे और किस आधार पर, प्रत्येक अभियुक्त दोषी है या अभिकथित अपराध किया है । मात्र इस कारण कि कुछ अभियुक्त प्रबंध निदेशक, मुख्य संपादक, संपादक और संस्थापक मुख्य संपादक रहे हैं, उन्हें अपने कर्मचारियों के कार्यों के लिए प्रतिनिधायी रूप से दायी नहीं बनाता, जो इस मामले में संख्या में तीन अर्थात् प्रत्यर्थी 3 से 5 रहे । उनमें से प्रत्येक के संबंध में भिन्न-भिन्न और पृथक् अभिकथन कि कैसे वे उत्तरदायी थे और अपराध किए थे, को स्पष्ट किया जाना चाहिए । इन निर्णयों के आधार पर यह निवेदन किया गया कि संपादकों का ऐसी प्रत्येक बात का उत्तरदायी होना चाहिए, जिससे वे प्रकाशित करते हैं और प्रकाशन के लिए उत्तरदायी होने के कारण वे मानहानि के अपराध के लिए प्रथमदृष्ट्या दोषी हैं । आगे यह निवेदन किया गया कि याचियों के लिए न्यायालय के समक्ष उपस्थित होना और यह अभिवचन करना है कि प्रकाशित समाचार उनकी जानकारी/सहमति के बिना थी और इस प्रक्रम पर न्यायालय से केवल यह देखने की अपेक्षा है कि आदेशिका जारी करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है और इन परिस्थितियों में आदेशिका को जारी करने के लिए याचियों द्वारा कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता । परिवादी, परिवाद में याचियों के विरुद्ध

सकारात्मक प्रकथन करने में और आपराधिक कार्यवाहियों के आरंभ करने की अपेक्षा करते हुए, अभिकथित अपराध करने में उन प्रत्येक द्वारा विनिर्दिष्ट भूमिका नियत करने में असफल रहा । यह नहीं बताया गया है कि विभिन्न याची कैसे ऐसे समाचार, जिसका मानहानिकारक होना अभिकथित है, के प्रसारण के लिए अंतर्वलित/उत्तरदायी थे । ऐसे विनिश्चय जिनका अवलंब प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील लेने के लिए लिया गया है कि संपादक ऐसे समाचार के लिए उत्तरदायी है, जो प्रकाशित किया गया था, का संबंध मुख्यतः प्रिंट मीडिया से है, जो प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1867 द्वारा शासित है । जहां तक केबिल नेटवर्क/इलेक्ट्रानिक मीडिया के चैनलों के प्रसारण का संबंध है, यह केबिल टेलीविजन नेटवर्क (विनियमन) अधिनियम, 1955 के उपबंध हैं, जो लागू हैं । अतः, टी.वी. चैनल के संपादक का दायित्व प्रेस अधिनियम का अवलंब लेकर नियत नहीं किया जा सकता । यहां तक कि केबिल टी.वी. अधिनियम और उसके अधीन विरचित नियम किसी चैनल के संपादक के मानहानि का उपबंध नहीं करते बल्कि उक्त पद ही विशिष्ट रूप से नहीं है । अतः, केवल यह उपबंध, जो कोई व्यक्ति कुछ सुसंगति ढूंढ़ सकता है, केबिल टी.वी. अधिनियम की धारा 17 है, जिसमें यह उपबंध है कि जहां किसी कंपनी द्वारा अपराध किया जाता है, वहां ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो अपराध के किए जाने के समय कंपनी के कारबार के संचालन के लिए कंपनी का प्रभारी था और उत्तरदायी था और कंपनी भी अपराध की दोषी समझी जाएगी और तद्नुसार, उनके विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का दायी होगा । यह ध्यातव्य है कि यह उपबंध अर्थात् धारा 17 भी अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के लिए तभी लागू होगी न कि भारतीय दंड संहिता के उपबंध, अतः, मात्र इस कारण कि व्यक्ति का कंपनी का निदेशक या संपादक या कर्मचारी होना अभिकथित है, प्रसारण मानहानिकारक सामग्री के कारण मानहानि के लिए तब तक उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, जब तक यह साबित नहीं किया जाए कि उक्त व्यक्ति इसे बनाने/प्रकाशित करने का उत्तरदायी है । इस प्रकार, उपरोक्त चर्चा के आलोक में और तथ्यों पर विचार करने के आधार पर कि परिवाद और संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित कथनों में भी परिवादी के विरुद्ध मानहानिकारक सामग्री बनाने या प्रकाशन में प्रत्येक याचियों द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है, इसलिए प्रतिनिधायी के सिद्धांत का अवलंब लेकर प्रसारण कंपनी/न्यूज

चैनल में उनके पदधारण करने के आधार पर उनके विरुद्ध आदेशिका जारी करना न तो वैधतः न्यायसंगत है न ही विधि की दृष्टि से संधार्य है । इस प्रकार, पूर्वोक्त चर्चा के आधार पर, यह स्थापित किया जाता है कि, (i) परिवादी, परिवाद में और आपराधिक कार्यवाहियों के आरंभ की अपेक्षा करने वाले अभिकथित अपराध में की गई उनमें से प्रत्येक की विनिर्दिष्ट भूमिका निभाने के लिए दिए गए साक्ष्य में भी याचियों के विरुद्ध सकारात्मक प्रकथन करने में असफल रहा ; (ii) सिविल दायित्व के असमान, दंड उपबंधों का भी कड़ाई से अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जिसमें दंड विधि में कोई प्रतिनिधायी दायित्व नहीं है, जब तक कानून उसको अपनी परिधि के भीतर नहीं लेता और इस प्रकार, याची मात्र प्रबंध निदेशक, मुख्य संपादक, संपादक और संस्थापक मुख्य संपादक होने के आधार पर अपने कर्मचारियों के कार्यों के लिए उन्हें प्रतिनिधायी रूप से दायी नहीं बनाएगा ; (iii) सी. डी. आर. जिसे परिवादी के मामले का मुख्य आधार बनाया गया, विधि, विशिष्टतया भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65ख के अनुसार प्रमाणित नहीं किया गया है और विचार से अपवर्जित किया जाना चाहिए । अतः, एकबार विचार से सी. डी. आर. के अपवर्जित किए जाने के पश्चात् याचियों के विरुद्ध प्रक्रिया मजिस्ट्रेट के समक्ष उपलब्ध सामग्री के आधार पर जारी किए जाने का आदेश नहीं दिया जा सकेगा ; और (iv) मजिस्ट्रेट द्वारा उपरोक्त सभी तथ्यों, जैसाकि हमने उल्लेख किया है, पर विचार करने में असफल होने पर सहजता से यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि विद्वान् न्यायाधीश ने याचियों के विरुद्ध आदेशिका जारी करने के पूर्व अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग नहीं किया । (पैरा 28, 29, 32, 35, 36, 37, 46, 47, 48, 49 और 55)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2017]	ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 3441 : **सोनू** उर्फ **अमर** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	51
[2017]	(2017) 1 एस. सी. सी. 640 : **एच.डी.एफ.सी. प्रतिभूति लि. और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** ;	44
[2015]	(2015) 12 एस. सी. सी. 420 : **महमूद उल रहमान** बनाम **खाजिर मोहम्मद टूंडा और अन्य** ;	30

[2014] (2014) 10 एस. सी. सी. 473 :
अनवर पी. वी. बनाम **पी. के. बसीर और अन्य** ; 50

[2013] (2013) 11 एस. सी. सी. 599 :
सी. पी. सुभाष बनाम **पुलिस निरीक्षक चेन्नई और अन्य** ; 8

[2013] (2013) 2 एस. सी. सी. 488 :
नेशनल बैंक आफ ओमान बनाम **बरकरा अब्दुल अजीज और एक अन्य** ; 23

[2013] (2013) 2 एस. सी. सी. 435 :
उदय शंकर अवस्थी बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** ; 24

[2012] (2012) 9 एस. सी. सी. 407 :
अमित कपूर बनाम **रमेश चंदर और एक अन्य** ; 7

[2009] (2009) 1 एस. सी. सी. 516 :
आर. कल्याणी बनाम **जनक सी. मेहता** ; 41

[2009] (2009) 3 एस. सी. सी. 375 :
शरोन माइकल बनाम **तमिलनाडु राज्य** ; 42

[2008] (2008) 5 एस. सी. सी. 668 :
मकसूद सैयद बनाम **गुजरात राज्य** ; 40

[2005] (2005) 11 एस. सी. सी. 600 :
राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली बनाम **नवजोत संधू** उर्फ **अफशान गुरु** ; 50

[2004] (2004) 1 एस. सी. सी. 691 :
मध्य प्रदेश राज्य बनाम **अवध किशोर गुप्ता** ; 6

[2003] (2003) 5 एस. सी. सी. 257 :
हीरा लाल हरिलाल भगवती बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ; 39

[1989] (1989) 4 एस. सी. सी. 630 :
श्याम सुंदर और अन्य बनाम **हरियाणा राज्य** ; 38, 43

[1976] (1976) 3 एस. सी. सी. 736 :
नगवा बनाम **वीरन्ना शिवलिंगप्पा कोंजालगी** ; 14

[1963] ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1430 :
चंद्रदेव सिंह बनाम **प्रकाश चंद्र बोशेयर** ; 14

[1960] ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 1113 :
वदीलाल पंचाल बनाम **दतात्रेय दुलाजी घडीगांवकर** । 14

आरंभिक (दांडिक) अधिकारिता : 2017 की दांडिक प्रकीर्ण ज्ञापन सं. 52 के साथ 2017 की दांडिक प्रकीर्ण ज्ञापन सं. 103, 104 और 120.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन अपील ।

याचियों की ओर से सुश्री बिमल गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता, श्री सतीश शर्मा, अधिवक्ता, (2017 की दांडिक प्रकीर्ण ज्ञापन सं. 52, 103 और 104) श्री अंकुश दास सूद, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सुश्री स्वेता जुल्का, अधिवक्ता, (2017 की दांडिक ज्ञापन सं. 120)

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अर्जुन लाल और नवीन अवस्थी, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति तरलोक सिंह चौहान – चूंकि इन सभी याचिकाओं में विधि और तथ्य के एक जैसे ही प्रश्न अंतर्वलित हैं अतः इन्हें सुनवाई के लिए एक साथ लिया गया और एक ही निर्णय द्वारा निपटान किया जा रहा है ।

2. याचियों ने विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित तारीख 1 अप्रैल, 2015 के समन आदेश को प्रश्नगत करते हुए इस आधार पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के उपबंधों का अवलंब लिया है कि यह किसी न्यायिक विवेक का प्रयोग किए बिना और बहुत यंत्रवत तरीके से पारित किया गया है अतः संपूर्ण कार्यवाही को अभिखंडित किया जाए ।

3. ये याचिकाएं फाइल करने के तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रत्यर्थी सं. 1/ परिवादी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 500 और धारा 120ख के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए याचियों और प्रत्यर्थी सं. 5 से 7 के विरुद्ध इस आशय का आपराधिक परिवाद फाइल किया कि वह

अखिल भारतीय मुस्लिम स्वीय विधि का संयोजक और रबीता मदारिस दारुल-उलुम देवबंद, उत्तर प्रदेश का सदस्य है और तारीख 28 सितंबर, 2006 के पूर्व वह हिमाचल वक्फ बोर्ड और हिमाचल हज कमेटी का सदस्य रहा था और उसकी आम जनता में अच्छा नाम और ख्याति थी । तारीख 27 दिसंबर, 2012 को, सी.एन.एन.-आई.बी.एन. 7 ने "कोबरा पोस्ट" के नाम से स्टिंग आपरेशन के माध्यम से उसे अपख्याति पहुंचाने के लिए समाचार प्रकाशित किया जबकि प्रत्यर्थी सं. 4 ने सभी अभियुक्तों की दुरभि संधि से समाचार का संपादन किया जिसने उसे 10,000/- रुपए की रिश्वत लेते हुए दिखाया गया था, तथापि, इस तरह की कोई बात नहीं हुई थी । परिवादी के अनुसार अभियुक्त अपने 15 व्यक्तियों को हज भेजना चाहता था तथापि, हज जाने के लिए उनके नामांकन के लिए आवेदन फाइल करने का समय पहले ही बीत चुका था और अभियुक्त व्यक्तियों ने उन्हें अनुज्ञा लेने के लिए बाम्बे जाने के लिए जबरदस्ती 10,000/- रुपए दिए । मुसलमान होते हुए उन्होंने उन व्यक्तियों की सहायता करनी चाही किंतु याचियों और प्रत्यर्थी सं. 5 से 7 में उन्हें 10,000/- रुपए रिश्वत लेते हुए दिखाया और यह संविरचित तस्वीर द्वारा समाचारपत्र में इस प्रकार प्रकाशित किया गया जिसके द्वारा उनकी ख्याति दागदार हुई । परिवादी ने अपने काउंसेल के माध्यम से याची और प्रत्यर्थी सं. 5 से 7 को भी नोटिस जारी किए किंतु उन लोगों ने इसका उत्तर नहीं दिया ।

4. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेख की सामग्री का परिशीलन किया ।

5. संहिता की धारा 482 उच्च न्यायालय को न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकने और परिवाद पर संस्थित कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की अपनी अंतर्निहित शक्तियों को प्रयोग करने की शक्ति प्रदान करती है किंतु ऐसी शक्ति का प्रयोग ऐसे मामलों में ही किया जाना चाहिए जहां परिवाद से कोई अपराध प्रकट नहीं होता या परिवाद उलझाऊ या दमनकारी है । यदि परिवाद में उपवर्णित अभिकथनों से ऐसा अपराध गठित नहीं होता जिसका संज्ञान मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया है तो उच्च न्यायालय संहिता की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए, इसे अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है ।

6. **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **अवध किशोर गुप्ता**[1] वाले मामले में

[1] (2004) 1 एस. सी. सी. 691.

माननीय उच्चतम न्यायालय ने संहिता की धारा 482 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए निम्नलिखित सिद्धांत नियत किए :–

"(1) संहिता के आदेश को प्रभावी बनाना ।

(2) न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकना ।

(3) अन्यथा न्याय के प्रयोजनों को पूरा करना ।

(4) न्यायालय, अपील न्यायालय या पुनरीक्षण न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता ।

(5) धारा 482 के अधीन अंतर्निहित अधिकारिता, यद्यपि काफी व्यापक है फिर भी इसका प्रयोग कभी-कभार, सावधानीपूर्वक और सतर्कतापूर्वक किया जाना चाहिए और तभी जब ऐसा प्रयोग स्वयं धारा में अधिकथित विनिर्दिष्ट कसौटियों द्वारा न्यायसंगत है ।

(6) ऐसी किसी कार्रवाई को अनुज्ञात करने से न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा जिसका परिणाम अन्याय हो ।

(7) शक्तियों का प्रयोग करते हुए न्यायालय द्वारा ऐसी किसी कार्यवाही को अभिखंडित करना न्यायोचित होगा यदि वह यह पाता है कि इसका आरंभ/सातत्य न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के समान है ।

(8) जब परिवाद द्वारा कोई अपराध प्रकट नहीं होता है तो न्यायालय तथ्य के प्रश्न की परीक्षा कर सकेगा ।

(9) जब संहिता की धारा 482 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय मामूली तौर पर ऐसी जांच का सहारा नहीं लेगा चाहे प्रश्नगत साक्ष्य विश्वसनीय है या नहीं या इसके अर्जन के युक्तियुक्त मूल्यांकन पर कायम नहीं रखा जा सकता - जो विचारण न्यायाधीश का कृत्य है ।

(10) धारा 482 अभियोजन को सीमित करने और इसे अचानक समाप्त करने के लिए अभियुक्त को दिया गया उपकरण नहीं है ।

(11) उच्च न्यायालय के लिए यह अवधारित करने के लिए सभी संभाव्यताओं के आलोक में परिवादी के मामले का अन्वेषण करना उचित नहीं होगा जहां दोषसिद्धि कायम रखे जाने योग्य है और ऐसे आधारों पर यह निष्कर्ष निकलता है कि कार्यवाहियां अभिखंडित

की जाएं ।

(12) यदि परिवाद में उपवर्णित अभिकथन ऐसा अपराध गठित नहीं करते जिसका संज्ञान मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया है, को उच्च न्यायालय इसे अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है ।

(13) जब कोई इत्तिला पुलिस थाने में दी जाती है और अपराध दर्ज किया जाता है तो इत्तिलाकर्ता के दुर्भाव का द्वितीयक महत्व है - अन्वेषण के दौरान एकत्र की गई सामग्री और न्यायालय में दिया गया साक्ष्य ऐसी वस्तु है जो अभियुक्त व्यक्ति के भाग्य का विनिश्चय करता है - इत्तिलाकर्ता के विरुद्ध दुर्भाव के अभिकथनों का कोई महत्व नहीं है और यह स्वयं कार्यवाहियों को अभिखंडित करने का आधार नहीं होता ।"

7. **अमित कपूर** बनाम **रमेश चंदर और एक अन्य**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने विशेषकर आपराधिक कार्यवाहियों को अभिखंडित करने के बारे में, विशेषकर धारा 397 या धारा 482 के अधीन अधिकारिता के प्रयोग में आरोप के संबंध में अधिकारिता के लिखित प्रयोग के लिए विचार किए जाने वाले सिद्धांतों का अभिकथन किया और संक्षेप में इस प्रकार यह उल्लेख किया :–

"(1) यद्यपि, संहिता की धारा 482 के अधीन न्यायालय की शक्तियों की कोई सीमा नहीं है किंतु अधिक शक्ति है तो इन शक्तियों का अवलंब लेते समय और अधिक सम्यक् सतर्कता और सावधानी बरती जानी चाहिए । आपराधिक कार्यवाहियों विशेषकर संहिता की धारा 228 के निबंधनानुसार विरचित आरोप को अभिखंडित करने की शक्ति का प्रयोग कभी-कभार और सतर्कता से और वह भी विरल से विरलतम मामलों में किया जाना चाहिए ।

(2) न्यायालय को यह कसौटी बरतनी चाहिए कि क्या मामले के अभिलेख और प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों से बनाए गए असंविवादित अभिकथनों से प्रथमदृष्ट्या अपराध साबित होता है या नहीं । यदि अभिकथन प्रकटतः बेतुके और स्वाभाविकतः असंभाव्य हैं कि कोई भी प्रज्ञावान व्यक्ति कभी ऐसा निष्कर्ष नहीं निकाल सकता और जहां दांडिक अपराध के आधारभूत तत्व पूरे नहीं होते हैं तो

---

[1] (2012) 9 एस. सी. सी. 407.

न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है ।

(3) उच्च न्यायालय को असम्यक् रूप से हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए । यह विचार करने के लिए साक्ष्य की सावधानीपूर्वक परीक्षा की आवश्यकता नहीं है कि क्या आरोप विरचित करने या आरोप को अभिखंडित करने के प्रक्रम पर मामले की समाप्ति पर दोषसिद्धि होगी या नहीं ।

(4) जहां ऐसी शक्ति का प्रयोग न्याय के दुरुपयोग को रोकने और किसी गंभीर त्रुटि का सुधार करने के लिए बहुत आवश्यक है जो ऐसे मामलों में भी अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा की गई है वहां उच्च न्यायालय को अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए आरंभ में ही अभियोजन को समाप्त करने के लिए हस्तक्षेप करने से विमुख रहना चाहिए ।

(5) जहां संहिता के किसी उपबंध में अधिनियमित व्यक्त विधिक वर्जन है या ऐसी आपराधिक कार्यवाहियों को आरंभ करने या संस्थित करने और जारी करने के लिए प्रवृत्त कोई विशिष्ट विधि है वहां ऐसे वर्जन का आशय अभियुक्त को विशिष्ट संरक्षण उपलब्ध कराना है ।

(6) न्यायालय को व्यक्ति की स्वतंत्रता और परिवादी या अपराधी का अन्वेषण करने और अभियोजित करने के अधिकार के बीच संतुलन बनाए रखने का कर्तव्य है ।

(7) न्यायालय की प्रक्रिया का उपयोग परोक्ष या अंतिम/दूरस्थ प्रयोजन के लिए करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती ।

(8) जहां किए गए अभिकथन और जैसाकि संलग्न अभिलेख और दस्तावेजों से वे प्रतीत होते हैं, प्रमुखतः 'आपराधिकता के तत्व' से हीन 'सिविल दोष' पैदा करते हैं और गठित करते हैं और दांडिक अपराध के आधारभूत लक्षणों को पूरा नहीं करते वहां न्यायालय द्वारा आरोप का अभिखंडित किया जाना न्यायोचित हो सकेगा । ऐसे मामलों में भी न्यायालय साक्ष्य के गूढ़ विश्लेषण का अवलंब नहीं लेगा ।

(9) एक अन्य अतिमहत्वपूर्ण सतर्कता जिसका पालन न्यायालय को करना चाहिए यह है कि वह यह अवधारित करने के लिए

अभिलेख के तथ्यों, साक्ष्य और सामग्री की परीक्षा नहीं कर सकता है कि क्या ऐसी पर्याप्त सामग्री है जिसके आधार पर मामले की समाप्ति पर दोषसिद्धि होगी, न्यायालय का संबंध प्राथमिकतः संपूर्ण किए गए अभिकथनों से है कि क्या वे अपराध गठित करेंगे और यदि हां तो क्या यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है जिससे अन्याय हो रहा है ।

(10) न तो यह आवश्यक है और न ही न्यायालय से यह पता लगाने के लिए कि क्या यह दोषमुक्ति या दोषसिद्धि का मामला है, अन्वेषक अधिकरण द्वारा एकत्र किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन करने या पूरी तरह से जांच करने के लिए कहा जाता है ।

(11) जहां अभिकथन से सिविल दावा पैदा होता है और यह अपराध की कोटि में भी आता है वहां मात्र इस कारण कि सिविल दावा संधार्य है, इसका यह अर्थ नहीं है कि आपराधिक परिवाद कायम नहीं किया जा सकता ।

(12) अनुच्छेद 226 और/या धारा 482 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए किसी अभियुक्त द्वारा दी गई बाह्य सामग्री पर विचार नहीं कर सकता है कि किसी अपराध का प्रकटन नहीं हुआ या यह कि उसके दोषमुक्ति होने की संभावना है । न्यायालय को अभियोजन द्वारा संलग्न अभिलेख और दस्तावेजों पर विचार करना है ।

(13) अपराध का अभिखंडन सतत अभियोजन के नियम का अपवाद है । जहां अपराध का व्यापकतः समाधान होता है वहां न्यायालय को आरंभिक प्रक्रम पर उसे अभिखंडित करने के बजाए अभियोजन को जारी रखने की अनुज्ञा की ओर अधिक अभिमुख होना चाहिए । न्यायालय से दस्तावेजों या अभिलेखों की स्वीकार्यता और विश्वसनीयता का विनिश्चय करने की दृष्टि से अभिलेखों की क्रमबद्ध रखने की नहीं बल्कि प्रथमदृष्ट्या राय गठित करने की प्रत्याशा की जाती है ।

(14) जहां आरोप पत्र, संहिता की धारा 173(2) के अधीन रिपोर्ट आधारभूत विधिक त्रुटियों से ग्रस्त है वहां न्यायालय आरोप विरचित करने की अपनी अधिकारिता के भीतर होगा ।

(15) उपरोक्त किसी या सभी के साथ मिलाकर, जहां

न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि यह संहिता की प्रक्रिया के दुरुपयोग के समान होगा या यह कि न्याय के हित की यह मांग है, वहां अन्यथा वह आरोप को अभिखंडित कर सकेगा । शक्ति का प्रयोग न्यायानुसार अर्थात् प्रशासन के लिए वास्तविक और सारवान् न्याय करने के लिए किया जाना चाहिए जिसके लिए ही न्यायालय विद्यमान है ।

पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य **बनाम** स्वप्न कुमार गुहा और अन्य ए. आई. आर. 1982 एस. सी. 949, माधवराव जीवाजी राव सिंधिया और अन्य **बनाम** संभाजीराव चंद्रोजीराव एंग्रे और अन्य ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 709, जनता दल **बनाम** एच. एस. चौधरी और अन्य ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 892, सुश्री रूपन देओल बजाज और अन्य **बनाम** कंवर पाल सिंह गिल और अन्य ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 309, जी. सागर सूरी और अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 754, अजय मित्रा निर्दिष्ट करें ।

16. ये ऐसे सिद्धांत हैं जिन्हें व्यक्तिगत रूप से और अधिमानतः सामूहिक रूप से (एक या अधिक) का उच्च न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 482 के अधीन अधिकारिता और असाधारण तथा काफी परिपूर्ण शक्तियों के प्रयोग के नियम के रूप में विचार किया जाना चाहिए । जहां किसी अपराध का तथ्यात्मक आधार अधिकथित किया गया है, न्यायालयों को अनिच्छुक रहना चाहिए और इस आधार पर भी कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए कि एक या दो तत्व का उल्लेख नहीं किया गया है या समाधान होना प्रतीत नहीं होता यदि अपराध की अपेक्षाओं का सारवान् अनुपालन है ।"

8. **सी. पी. सुभाष** बनाम **पुलिस निरीक्षक चेन्नई और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह पुनः दोहराया गया कि जहां परिवाद से प्रथमदृष्ट्या अपराध का होना प्रकट होता है वहां उच्च न्यायालय को मामूली अंतरण में विरलतम और बाध्यकारी परिस्थितियों के सिवाए ऐसी कार्यवाहियों को अभिखंडित करने के लिए अपनी शक्तियों का अवलंब नहीं लेना चाहिए और यह इस प्रकार मत व्यक्त किया गया :–

---

[1] (2013) 11 एस. सी. सी. 599.

"7. अन्वेषण के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सहित लंबित आपराधिक कार्यवाहियों के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों के प्रयोग के संबंध में विधिक स्थिति को इस न्यायालय के कई विनिश्चयों में अच्छी तरह से सुस्थिर किया गया है । इतना कहना पर्याप्त है कि ऐसे मामलों में जहां परिवादी द्वारा की गई शिकायत चाहे यह न्यायालय के समक्ष या अधिकारितागत पुलिस थाने के समक्ष हो, से अपराध का होना प्रकट होता है, वहां उच्च न्यायालय हरियाणा राज्य और अन्य **बनाम** चौधरी भजनलाल और अन्य, (1992) (सप्ली.) 1 एस. सी. सी. 335, वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय में उपवर्णित विरलतम और बाध्यकारी परिस्थितियों के सिवाय ऐसी कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की अपनी शक्तियों का अवलंब मामूली अनुक्रम में नहीं लेगा ।

8. राजेश बजाज **बनाम** राज्य, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली, (1999) 3 एस. सी. सी. 259, वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का भी प्रतिनिर्देश किया जा सकता है जहां इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :–

> ".....यदि अपराध के तथ्यात्मक आधार का अधिकथन परिवाद में किया गया है तो न्यायालय को मात्र इस आधार पर अन्वेषण प्रक्रम के दौरान आपराधिक कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए कि एक या दो तत्वों का उल्लेख विस्तार से नहीं किया गया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिखंडित करने के लिए (एक उपाय जिसकी अनुज्ञा काफी विरल मामलों में ही दी गई है) परिवाद की सूचना ऐसे आधारभूत तथ्य जो अपराध बनाने के लिए बिल्कुल आवश्यक है से वंचित होना चाहिए ।"

9. मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** अवध किशोर गुप्ता, (2004) 1 एस. सी. सी. 691 वाले मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय इसी प्रकरण पर है जहां इस न्यायालय ने यह कहा :–

> "11. संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा धारित शक्तियां काफी व्यापक हैं और शक्ति की परिपूर्णता अपने प्रयोग के लिए अधिक सतर्कता की अपेक्षा करती है ।

न्यायालय को यह विचार करते समय बहुत सावधान रहना चाहिए कि इस शक्ति के प्रयोग में उसका विनिश्चय ठोस सिद्धांतों पर आधारित है । अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग अभियोजन की विधिसम्मता को कुचलने के लिए नहीं किया जाना चाहिए । राज्य का उच्चतम न्यायालय होते हुए उच्च न्यायालय को ऐसे मामलों में प्रथमदृष्ट्या विनिश्चय करने से प्रसामान्यतः बचना चाहिए जहां संपूर्ण तथ्य अपूर्ण और संदिग्ध हों और यह कि जब न्यायालय के समक्ष साक्ष्य एकत्र और पेश नहीं किया गया है तथा अंतर्वलित मुद्दे चाहे तथ्यात्मक या विधिक हैं, काफी महत्वपूर्ण हैं और पर्याप्त सामग्री के बिना उनके सही परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा जा सकता । वस्तुतः, ऐसे मामले जिनमें उच्च न्यायालय किसी प्रक्रम पर कार्यवाही को अभिखंडित करने की अपनी असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करेगा, के संबंध में कोई कठोर नियम अधिकथित नहीं किया जा सकता । उच्च न्यायालय के लिए यह अवधारित करने के लिए कि क्या दोषसिद्धि संधार्य होगी, के लिए सभी संभाव्यताओं के आलोक में परिवाद के मामले का विश्लेषण करना और ऐसे आधारों पर यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा कि कार्यवाहियों को अभिखंडित किया जाए । उसके समक्ष सामग्री का निर्धारण करना और यह निष्कर्ष निकालना गलत होगा कि परिवाद में आगे कार्यवाही नहीं की जा सकती । परिवाद पर संस्थित कार्यवाहियों में, कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग ऐसे मामलों में ही आवश्यक होगी जहां परिवाद से किसी अपराध का प्रकट नहीं होता या परिवाद निरर्थक, खिजाऊ या दमनकारी है । यदि परिवाद में उपवर्णित अभिकथन अपराध गठित नहीं करते जिसका संज्ञान मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया है तो उच्च न्यायालय संहिता की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए इसे अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है ।"

10. बी. वाई. जोश और एक अन्य **बनाम** गुजरात राज्य और एक अन्य, (2009) 3 एस. सी. सी. 78 और हरसेंद्र कुमार डी. **बनाम** रेवती लता ओले आदि, (2011) 3 एस. सी. सी. 351 वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों में उपरोक्त विधिक स्थिति को

दोहराया गया है ।"

9. इस प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा विधि की प्रतिपादना के आधार पर यह स्थिर किए जाने का विचार किया जा सकता है कि संहिता की धारा 482 के अधीन अपनी अधिकारिता को प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को सतर्क भी और चौकस दोनों रहना चाहिए । इस शक्ति का प्रयोग कभी-कभार और किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयोजन के लिए ही किया जाना चाहिए । क्या परिवाद/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट/आरोप पत्र आदि दांडिक अपराध प्रकट करता है या नहीं, उसमें अभिकथित तथ्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है ।

10. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने मुख्यतः निम्नलिखित पांच बिंदु उठाए :–

(i) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 में अनुध्यात प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया ;

(ii) समन करने वाला आदेश में कोई समाधान अभिलिखित नहीं है ;

(iii) परिवाद को देखने से यह संधार्य नहीं है क्योंकि इसमें षड्यंत्र के अभिकथन हैं, फिर भी किसी व्यक्ति के प्रति कोई विनिर्दिष्ट भूमिका नहीं है ;

(iv) दंड विधि के अधीन कोई प्रतिनिधायी दायित्व नहीं है अतः प्रत्यर्थी सं. 4 को पक्षकार के रूप में अभिवचित नहीं किया जा सकता ; और

(v) इस मामले में प्रदर्शित सी. डी. आर. को विचार में नहीं लिया गया है क्योंकि यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65ख के अनुसार प्रदर्शित नहीं किए गए हैं ।

बिंदु सं. 1

11. याची द्वारा उठाई गई दलीलों पर विचार करने की कार्यवाही आरंभ करने के पूर्व दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में "संहिता" कहा गया है) के सुसंगत उपबंधों अर्थात् 2(छ), 2(ज), 156, 200, 201, 202, 203 और 204 का उल्लेख करना उचित होगा जो इस प्रकार है :–

"2(छ) 'जांच' से, अभिप्रेत है विचारण से भिन्न, ऐसी प्रत्येक जांच जो इस संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा की जाए ;

2(ज) 'अन्वेषण' के अंतर्गत वे सब कार्यवाहियां हैं जो इस संहिता के अधीन पुलिस अधिकारी द्वारा या (मजिस्ट्रेट से भिन्न) किसी भी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो मजिस्ट्रेट द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किया गया है, साक्ष्य एकत्र करने के लिए की जाएं ;

156. संज्ञेय मामलों का अन्वेषण करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति – (1) कोई पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी ऐसे संज्ञेय मामले का अन्वेषण कर सकता है, जिसकी जांच या विचारण करने की शक्ति उस थाने की सीमाओं के अंदर के स्थानीय क्षेत्र पर अधिकारिता रखने वाले न्यायालय को अध्याय 13 के उपबंधों के अधीन है ।

(2) ऐसे किसी मामले में पुलिस अधिकारी की किसी कार्यवाही को किसी भी प्रक्रम में इस आधार पर प्रश्नगत न किया जाएगा कि वह मामला ऐसा था जिसमें ऐसा अधिकारी इस धारा के अधीन अन्वेषण करने के लिए सशक्त न था ।

(3) धारा 190 के अधीन सशक्त किया गया कोई मजिस्ट्रेट पूर्वोक्त प्रकार के अन्वेषण का आदेश कर सकता है ।

200. परिवादी की परीक्षा – परिवाद पर किसी अपराध का संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट, परिवादी की और यदि कोई साक्षी उपस्थित है तो उनकी शपथ पर परीक्षा करेगा और ऐसी परीक्षा का सारांश लेखबद्ध किया जाएगा और परिवादी और साक्षियों द्वारा तथा मजिस्ट्रेट द्वारा भी हस्ताक्षरित किया जाएगा :

परंतु जब परिवाद लिख कर किया जाता है तब मजिस्ट्रेट के लिए परिवादी या साक्षियों की परीक्षा करना आवश्यक न होगा –

(क) यदि परिवाद अपने पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य करने वाले या कार्य करने का तात्पर्य रखने वाले लोक सेवक द्वारा या न्यायालय द्वारा किया गया है, अथवा

(ख) यदि मजिस्ट्रेट जांच या विचारण के लिए मामले को धारा 192 के अधीन किसी अन्य मजिस्ट्रेट के हवाले कर

देता है :

परंतु यह और कि यदि मजिस्ट्रेट परिवादी या साक्षियों की परीक्षा करने के पश्चात् मामले को धारा 192 के अधीन किसी अन्य मजिस्ट्रेट के हवाले करता है तो बाद वाले मजिस्ट्रेट के लिए उनकी फिर से परीक्षा करना आवश्यक न होगा ।

201. ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा प्रक्रिया जो मामले का संज्ञान करने के लिए सक्षम नहीं है – यदि परिवाद ऐसे मजिस्ट्रेट को किया जाता है जो उस अपराध का संज्ञान करने के लिए सक्षम नहीं है, तो –

(क) यदि परिवाद लिखित है तो वह उसको समुचित न्यायालय में पेश करने के लिए, उस भाव के पृष्ठांकन सहित, लौटा देगा ;

(ख) यदि परिवाद लिखित नहीं है तो वह परिवादी को उचित न्यायालय में जाने का निदेश देगा ।

202. आदेशिका के जारी किए जाने को मुल्तवी करना – (1) यदि कोई मजिस्ट्रेट ऐसे अपराध का परिवाद प्राप्त करने पर, जिसका संज्ञान करने के लिए वह प्राधिकृत है या जो धारा 192 के अधीन उसके हवाले किया गया है, ठीक समझता है तो [1][और ऐसे मामले में जहां अभियुक्त ऐसे किसी स्थान में निवास कर रहा है जो उस क्षेत्र से परे है जिसमें वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है] अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका का जारी किया जाना मुल्तवी कर सकता है और यह विनिश्चित करने के प्रयोजन से कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है अथवा नहीं, या तो स्वयं ही मामले की जांच कर सकता है या किसी पुलिस अधिकारी द्वारा या अन्य ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसको वह ठीक समझे अन्वेषण किए जाने के लिए निदेश दे सकता है :

परंतु अन्वेषण के लिए ऐसा कोई निदेश वहां नहीं दिया जाएगा –

(क) जहां मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि वह अपराध जिसका परिवाद किया गया है अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है ; अन्यथा

---

[1] 2005 के अधिनियम सं. 25 की धारा 19 द्वारा (23-6-2006 से) अंतःस्थापित ।

(ख) जहां परिवाद किसी न्यायालय द्वारा नहीं किया गया है जब तक कि परिवादी की या उपस्थित साक्षियों की (यदि कोई हो) धारा 200 के अधीन शपथ पर परीक्षा नहीं कर ली जाती है ।

(2) उपधारा (1) के अधीन किसी जांच में यदि मजिस्ट्रेट ठीक समझता है तो साक्षियों का शपथ पर साक्ष्य ले सकता है :

परंतु यदि मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि वह अपराध जिसका परिवाद किया गया है अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है तो यह परिवादी से अपने सब साक्षियों को पेश करने की अपेक्षा करेगा और उनकी शपथ पर परीक्षा करेगा ।

(3) यदि उपधारा (1) के अधीन अन्वेषण किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा किया जाता है जो पुलिस अधिकारी नहीं है तो उस अन्वेषण के लिए उसे वारंट के बिना गिरफ्तार करने की शक्ति के सिवाय पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को इस संहिता द्वारा प्रदत्त सभी शक्तियां होंगी ।

203. परिवाद का खारिज किया जाना – यदि परिवादी के और साक्षियों के शपथ पर किए गए कथन पर (यदि कोई हो), और धारा 202 के अधीन जांच या अन्वेषण के (यदि कोई हो) परिणाम पर विचार करने के पश्चात्, मजिस्ट्रेट की यह राय है कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है तो वह परिवाद को खारिज कर देगा और ऐसे प्रत्येक मामले में वह ऐसा करने के अपने कारणों को संक्षेप में अभिलिखित करेगा ।

204. आदेशिका का जारी किया जाना – (1) यदि किसी अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट की राय में कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार हैं और –

(क) मामला समन-मामला प्रतीत होता है तो वह अभियुक्त की हाजिरी के लिए समन जारी करेगा ; अथवा

(ख) मामला वारंट-मामला प्रतीत होता है तो वह अपने या (यदि उसकी अपनी अधिकारिता नहीं है तो) अधिकारिता वाले किसी अन्य मजिस्ट्रेट के समक्ष अभियुक्त के निश्चित समय पर लाए जाने या हाजिर होने के लिए वारंट, या यदि ठीक समझता है समन, जारी कर सकता है ।

(2) अभियुक्त के विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन तब तक कोई समन या वारंट जारी नहीं किया जाएगा जब तक अभियोजन के साक्षियों की सूची फाइल नहीं कर दी जाती है ।

(3) लिखित परिवाद पर संस्थित कार्यवाही में उपधारा (1) के अधीन जारी किए गए प्रत्येक समन वारंट के साथ उस परिवाद की एक प्रतिलिपि होगी ।

(4) जब तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन कोई आदेशिका फीस या अन्य फीस संदेय है तब कोई आदेशिका तब तक जारी नहीं की जाएगी जब तक फीस नहीं दे दी जाती है और यदि ऐसी फीस उचित समय के अंदर नहीं दी जाती है तो मजिस्ट्रेट परिवाद को खारिज कर सकता है ।

(5) इस धारा की कोई बात धारा 87 के उपबंधों पर प्रभाव डालने वाली नहीं समझी जाएगी ।"

12. संहिता की धारा 200 के अधीन अपराध का संज्ञान लेने वाला मजिस्ट्रेट अपने समक्ष परिवादी द्वारा पेश परिवाद और साक्षियों की परीक्षा करने के लिए सशक्त हैं । यदि लोक सेवक द्वारा लिखित में परिवाद किया जाता है तो परिवाद या उसके साक्षियों की परीक्षा करने की अपेक्षा नहीं है किंतु संहिता की धारा 202 के अधीन कोई मजिस्ट्रेट अपराध/अपराधों का परिवाद प्राप्त होने पर जिसका संज्ञान लेने के लिए प्राधिकृत है, स्वयं जांच करेगा या पुलिस अधिकारी या ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा अन्वेषण करने का निदेश देगा जैसा वह ठीक समझे या ठीक पाए जाने पर अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका जारी करने को मुल्तवी करेगा जब अभियुक्त ऐसे क्षेत्र जिसमें वह अधिकारिता का प्रयोग करता है, से परे स्थान पर निवास करता है ।

13. धारा 202 (1) के अधीन जांच का उद्देश्य परिवाद की सत्यता या असत्यता सुनिश्चित करना है । किंतु, जांच करने वाले मजिस्ट्रेट को जांच पर उसके समक्ष किए गए कथनों की अंतर्निहित गुणता के प्रतिनिर्देश से ही ऐसा करना है जिसका स्वभावतः स्वयं परिवाद, परिवादी द्वारा किए गए शपथ पर कथन और परिवादी के अनुरोध पर परीक्षित व्यक्तियों द्वारा उसके समक्ष किए गए कथनों से ही अर्थ निकालना है ।

14. संहिता की धारा 202 की व्याप्ति को **वदीलाल पंचाल** बनाम

दत्रात्रेय दुलाजी घडीगांवकर[1], **चंद्रदेव सिंह** बनाम **प्रकाश चंद्र बोशेयर**[2], **नगवा** बनाम **वीरन्ना शिवलिंगप्पा कोंजालगी**[3] वाले मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अच्छी तरह से स्पष्ट किया गया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संहिता की धारा 202 के अधीन जांच की व्याप्ति प्रक्रिया के मुद्दे पर प्रश्न को अवधारित करने के लिए परिवादी की सत्यता या असत्यता पता लगाने तक सीमित है । जांच का प्रयोजन परिवाद की सत्यता या असत्यता सुनिश्चित करना है अर्थात् यह सुनिश्चित करना कि क्या परिवाद के समर्थन में साक्ष्य है जिससे कि आदेशिका के मुद्दे और संबद्ध व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाहियों के आरंभ को न्यायोचित ठहराया जा सके । तथापि, धारा यह अधिकथित नहीं करती कि जिसके विरुद्ध शिकायत की गई है, के दोष या अन्यथा का न्याय-निर्णयन करने के लिए नियमित विचारण उस प्रक्रम पर होना चाहिए बल्कि जिसके विरुद्ध शिकायत की गई है, को उसके विरुद्ध किए गए अभियोग का उत्तर देने के लिए वैधतः तभी बुलाया जा सकता है जब आदेशिका जारी की गई है और उसे विचारण के लिए बुलाया गया है ।

15. अन्यथा भी संहिता की धारा 202(1) "या तो स्वयं ही मामले की जांच कर सकता है या किसी पुलिस अधिकारी द्वारा या अन्य ऐसे व्यक्ति द्वारा जिसको वह ठीक समझे अन्वेषण किए जाने के लिए निदेश दे सकता है ।"

16. "जांच" को 2(छ) में परिभाषित किया गया है और "अन्वेषण" को 2(ज) में परिभाषित किया गया है । जांच और अन्वेषण की परिभाषा के परिशीलन से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि जांच मजिस्ट्रेट द्वारा की जाती है और अन्वेषण पुलिस अधिकारी द्वारा किया जाता है ।

17. संहिता की धारा 202(1) के अधीन अनुध्यात जांच को धारा 202 (2) में स्पष्ट किया गया है, जो यह दर्शित करता है कि शपथ पर साक्षियों के कथनों का अभिलेखन भी संहिता की धारा 202(1) में अंकित जांच का भाग है ।

18. मजिस्ट्रेट के पास प्रथमदृष्ट्या यह निष्कर्ष निकालने के प्रयोजन

---

[1] ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 1113.
[2] ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1430.
[3] (1976) 3 एस. सी. सी. 736.

के लिए जांच की काफी व्यापक शक्ति है कि मामला विधि के पूर्वोक्त उपबंधों के अधीन आदेशिका के जारी करने के लिए उपयुक्त हैं । वह परिवाद के अपराध/अपराधों के संबंध में गहन जांच करा सकता है । इसके पश्चात् वह इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि आदेशिका जारी करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं ।

19. दूसरे शब्दों में, मजिस्ट्रेट के समक्ष परिवादी और उसके साक्षियों के समनपूर्व साक्ष्य के परिवाद में वर्णित अभिकथनों के आधार पर आगे कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं ।

20. संहिता की धारा 202 के अधीन उसके द्वारा अवलंबित जांच के दौरान शपथ पर साक्षियों की परीक्षा संहिता की धारा 202 के अधीन यथा अनुध्यात साक्षियों की परीक्षा के सदृश्य है ।

21. अतः, मजिस्ट्रेट द्वारा समनपूर्व प्रक्रम पर परिवादी और उसके साथियों के कथन का अभिलेखन किए जाने के पश्चात् यह स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा जांच की कोटि में आता है और उसके लिए मामले को पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण के लिए भेजना कतई आवश्यक नहीं है, जब वर्तमान मामले की तरह अभियुक्त उसकी अधिकारिता के बाहर रह रहा है ।

22. यह विवादित नहीं है कि सभी याची विद्वान् मजिस्ट्रेट की अधिकारिता के बाहर रहते हैं । अतः, मजिस्ट्रेट से संहिता की धारा 202(1) के संशोधित उपबंधों का पालन करने की अपेक्षा है जिसके द्वारा विद्वान् मजिस्ट्रेट से अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका जारी करने को मुल्तवी करने की अपेक्षा है और या तो स्वयं जांच करें या पुलिस अधिकारी या ऐसे किसी अन्य व्यक्ति द्वारा यह विनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए अन्वेषण करने का निदेश दें कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही आरंभ करने का पर्याप्त आधार है या नहीं ।

23. **नेशनल बैंक आफ ओमान** बनाम **बरकरा अब्दुल अजीज और एक अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय को 2005 के अधिनियम सं. 25 द्वारा धारा 202 की उपधारा (1) द्वारा लाए गए संशोधन के प्रभाव पर विचार करने का अवसर प्राप्त हुआ और यह अभिनिर्धारित किया गया कि ऐसे मामले में जहां अभियुक्त ऐसे क्षेत्र से परे क्षेत्र में रहता है जिस पर संबद्ध मजिस्ट्रेट की अधिकारिता है, वहां मजिस्ट्रेट के लिए

[1] (2013) 2 एस. सी. सी. 488.

आदेशिका जारी करने के पूर्व धारा 202 के अधीन जांच करना या अन्वेषण का आदेश देना लाजिमी है ।

24. **उदय शंकर अवस्थी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णय के पैरा 40 में यह मत व्यक्त किया कि यथा संशोधित धारा 202 के उपबंध आदेशिका के जारी किए जाने को मुल्तवी करना आज्ञापक बनाते हैं, जहां, अभियुक्त संबद्ध मजिस्ट्रेट की राज्य क्षेत्रीय अधिकारिता से परे क्षेत्र में रहता है । आगे यह मत व्यक्त किया गया कि आदेशिका के जारी किए जाने को मुल्तवी करना बेईमान व्यक्तियों द्वारा निर्दोष व्यक्तियों को तंग करने से संरक्षित करने के लिए आवश्यक पाया गया । अतः, यह पता लगाने के प्रयोजन के लिए कि क्या ऐसे मामलों में समन जारी करने के पूर्व अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही आरंभ करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं, मजिस्ट्रेट के लिए स्वयं मामले की जांच करना या पुलिस अधिकारी द्वारा या ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा जैसा वह ठीक समझे अन्वेषण का निदेश देना बाध्यकर है ।

25. तथ्यों पर विचार करते हुए, यह पाया गया कि परिवादी के कथन को एक साक्षी आदर्श कुमार सूद के कथन के साथ 16 जुलाई, 2007 को अभिलिखित किया गया और उसके पश्चात् एक अन्य साक्षी मंसूर आलम का कथन 18 फरवरी, 2007 को अभिलिखित किया गया फिर भी आदेशिका जारी नहीं की गई थी और 1 अप्रैल, 2015 को ही जारी की गई । अतः, सुविधाजनक रूप से यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि संहिता की धारा 202(1) की अपेक्षा का मजिस्ट्रेट द्वारा सारतः पालन किया गया है ।

26. जहां तक, संहिता की धारा 202(1) के अधीन यथा अनुध्यात जांच का संबंध है, ऐसा एक बार किए जाने के पश्चात् आगे कुछ और करने की अपेक्षा नहीं थी । न्यायालय द्वारा आदेशिका के जारी किए जाने का समन टिप्पण है, जो संशोधित उपबंध को लागू किए जाने के पीछे छिपा उद्देश्य है ।

27. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह निष्कर्ष निकालने में मुझे कोई हिचकिचाहट नहीं है कि संहिता की धारा 202 के अधीन यथा अनुध्यात प्रक्रिया का विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा सम्यक् पालन किया गया है । अतः, एक मात्र इस आधार पर ही परिवाद को अभिखंडित नहीं किया जा

---

[1] (2013) 2 एस. सी. सी. 435.

सकता ।

बिंदु सं. 2 से 5

28. निर्विवादतः न्यायिक प्रक्रिया उत्पीड़न या अनावश्यक तंग करने का उपकरण नहीं होनी चाहिए । न्यायालय को विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय चौकस और विवेकसम्मत होना चाहिए और न्यायिक प्रक्रिया जारी करने के पूर्व सभी सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए, ऐसा न हो कि यह प्राइवेट परिवादी के हाथों अनावश्यक रूप से व्यक्तियों को तंग करने के लिए प्रतिशोध के उपकरण के रूप में हो जाए ।

29. समानतः, यह सुस्थिर है कि आपराधिक मामले में अभियुक्त को समन करना एक गंभीर मामला है और अभियुक्त को समन करते हुए, मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लेने वाले आदेश में यह प्रतिबिम्बित होना चाहिए कि उसने मामले के तथ्यों और उस पर लागू विधि के संबंध में अपने विवेक का प्रयोग किया है । संहिता की धारा 482, इस न्यायालय को न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और परिवाद पर संस्थित कार्यवाहियों को अभिखंडित करने के लिए अपनी अंतर्निहित शक्तियों को प्रयोग करने की शक्ति प्रदान करती है, किंतु, ऐसी शक्तियों का प्रयोग केवल ऐसे मामलों में किया जा सकता है जहां परिवाद से किसी अपराध का होना प्रकट नहीं होता या परिवाद खिजाऊ या दमनात्मक है । यदि परिवाद में यथा उपवर्णित अभिकथनों से ऐसा अपराध गठित नहीं होता जिसके लिए मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया गया है तो यह न्यायालय संहिता की धारा 482 के अधीन शक्तियों का उपयोग करते हुए, इसे अभिखंडित करने के लिए स्वतंत्र है ।

30. याचियों की दलील के संबंध में कि समन आदेश में किसी समाधान का अभिलेखन नहीं है, विषय के संपूर्ण विधि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **महमूद उल रहमान** बनाम **खाजिर मोहम्मद टूंडा और अन्य**[1] और संबद्ध मामले में सुबोधतः उपवर्णित किया गया है और इसमें उद्धृत निर्णयों में अधिकथित विधि की प्रतिपादना का विस्तृत प्रतिनिर्देश करते हुए, विधिक स्थिति को संक्षेप में इस प्रकार कहा गया है :–

> "(20) निर्णयज विधि के विस्तारी प्रतिनिर्देश से स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि परिवाद पर अपराध का संज्ञान अभियुक्त को

[1] (2015) 12 एस. सी. सी. 420.

आदेशिका जारी करने के प्रयोजन के लिए लिया जाता है । चूंकि यह ऐसे कतिपय तथ्यों की न्यायिक अवेक्षा लेने की प्रक्रिया है, जो अपराध गठित करता है, इसलिए विवेक का प्रयोग किया जाना चाहिए कि क्या परिवाद के अभिकथनों पर जब अभिलिखित कथनों या उस पर की गई जांच के साथ विचार किया जाए तो विधि का अतिक्रमण गठित करेगा जिससे व्यक्ति को दंड न्यायालय के समक्ष हाजिर होने के लिए बुलाया जा सके । यह यांत्रिक प्रक्रिया या स्वभावतः नहीं है । **पेप्सी फूड लिमिटेड** वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा किए गए अभिनिर्धारण के अनुसार किसी व्यक्ति के विरुद्ध आपराधिक विधि की प्रक्रिया चालू करना एक गंभीर विषय है ।

(21) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(ख) के अधीन मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट का फायदा है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(ख) के अधीन उसे अपराध किए जाने की जानकारी या ज्ञान है । किंतु, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(क) के अधीन उसके समक्ष केवल परिवाद है । संहिता, यह विनिर्दिष्ट करती है कि ..... 'उन तथ्यों का जिनसे ऐसा अपराध बनता है, परिवाद' । अतः, यदि परिवाद को देखने मात्र से किसी अपराध का होना प्रकट नहीं होता तो मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(क) के अधीन संज्ञान नहीं लेगा । परिवाद को साधारणतः खारिज किया जाना चाहिए ।

(22) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(क) के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 204 के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा उठाए गए कदमों से यह प्रतिबिम्बित होना चाहिए कि मजिस्ट्रेट ने तथ्यों और कथनों पर अपने विवेक का प्रयोग किया है और उनका यह समाधान हो गया है कि ऐसे व्यक्ति इसके विरुद्ध विधि का अतिक्रमण अभिकथित है, को न्यायालय के समक्ष हाजिर होने के लिए मामले में आगे कार्यवाही करने का आधार है । कार्यवाही के लिए आधार पर समाधान का यह अर्थ होगा कि परिवाद में अभिकथित तथ्य अपराध गठित करते हैं और जब अभिलिखित कथनों के साथ विचार किया जाएगा तो प्रथमदृष्ट्या न्यायालय के समक्ष अभियुक्त को जवाबदेह बनाएगा । निःसंदेह, कोई औपचारिक आदेश या कारण सहित आदेश उस प्रक्रम पर पारित करने की अपेक्षा नहीं है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 कारण सहित आदेश पारित किए जाने की अपेक्षा

करती है, जब परिवाद खारिज किया जाए और वह भी कारण केवल संक्षेप में बताए जाने की आवश्यकता है । दूसरे शब्दों में, मजिस्ट्रेट स्वभावतः उसके समक्ष फाइल किए गए प्रत्येक परिवाद का संज्ञान लेने और आदेशिका जारी करने के लिए डाक घर के रूप में कार्य नहीं करता है । मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश में पर्याप्त संकेत होना चाहिए कि उसका यह समाधान हो गया है कि परिवाद में किए गए अभिकथन अपराध गठित करते हैं और जब अभिकथित कथनों के साथ और जांच या अन्वेषण की रिपोर्ट के साथ विचार किया जाएगा तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के अधीन यदि कोई है, अभियुक्त दंड न्यायालय के समक्ष जवाबदेह है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 204 के अधीन हाजिर होने की आदेशिका जारी कर अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने का आधार है । विवेक का प्रयोग समाधान पर विवेक के प्रकटन द्वारा बेहतर रूप से प्रदर्शित किया जाए । यदि मामले में ऐसा कोई संकेत नहीं है जहां मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190/204 के अधीन कार्यवाही आरंभ करता है, वहां उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन दंड न्यायालय की शक्ति के दुरुपयोग को रोकने के लिए अपनी अंतर्निहित शक्ति का अवलंब लेने के लिए बाध्य है । अभियुक्त के रूप में दंड न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के लिए बुलाया जाना एक गंभीर विषय है, जो किसी व्यक्ति की समाज में गरिमा आत्म-सम्मान और छवि को प्रभावित करता है । अतः, दंड न्यायालय की प्रक्रिया को तंग करने के हथियार के रूप में नहीं बनाया जाएगा ।"

31. स्वीकार्यतः याचियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 500 और 120ख के अधीन कार्यवाही आरंभ किए जाने का आदेश दिया गया । तथापि, तथाकथित उपशमन या षडयंत्र के अभिकथनों को स्पष्ट नहीं किया गया है और केवल अस्पष्ट और सामान्य अभिकथन जो स्वयं षड्यंत्र का अपराध गठित नहीं करते, किए गए हैं । यह परिवाद के पैरा 2 से बिल्कुल स्पष्ट है, जिसमें ही निम्नलिखित शब्दों में षड्यंत्र के अभिकथन किए गए हैं :–

"2. अभियुक्त 1 से 7 में एक दूसरे से मिलकर नुकसान पहुंचाने के आशय से या यह जानते हुए या विश्वास करने के आधार के साथ कि ऐसा लांछन परिवादी की ख्याति को नुकसान पहुंचाएगा और उसे और उनकी ख्याति तथा सामाजिक प्रतिष्ठा को नुकसान

पहुंचाने के उनके सामान्य आशय के अनुसरण में परिवादी के विरुद्ध एक दूसरे के साथ मिलकर षड्यंत्र करते हुए लांछन प्रकाशित करने के लिए आपराधिक षड्यंत्र रचा । अतः, 27 जनवरी, 2006 को अभियुक्त सं. 1 से 3 में समाचार चैनल पर 'हज के दलाल' के नए शीर्ष के अधीन एक समाचार प्रसारित किया । इस अधिक अपमानजनक और मानहानिकारक समाचार में जिसका अभियुक्त द्वारा कई अवसरों पर बार-बार प्रकाशन किया गया, उन लोगों ने बार-बार परिवादी की मानहानि की । परिवादी के नाम का उल्लेख प्रश्नगत समाचार में बारंबार किया गया । उक्त समाचार जो बहुत चालाकी और चयनित रूप से संपादित और गढ़ा गया था, सुनिश्चित शब्दों में मिथ्या रूप से दूरदर्शन पर कहा गया और दावा किया गया कि परिवादी ने हिमाचल प्रदेश राज्य हज समिति के अध्यक्ष के पद और अपने अतिउत्तरदायित्वपूर्ण हैशियत का दुरुपयोग और गलत प्रयोग किया था । समाचार में मिथ्या रूप से परिवादी पर लांछन लगाया कि उस सूची में इस प्रकार सम्मिलित किए जाने के लिए उनके हकदार हुए बिना हाजियों की हिमाचल प्रदेश राज्य कोटा से हाजी की सूची में व्यक्तियों के नामों का अनुमोदन/सम्मिलित किए जाने के मामले के संबंध में उनके अभिकथित तैयारी/अंतर्लिप्तता और इच्छा को सुस्पष्ट शब्दों में निश्चित रूप से बताया कि परिवादी हज यात्रा के लिए विधि विरुद्ध और बाह्य धनीय प्रतिफल के लिए हिमाचल प्रदेश मुस्लिमों के कोटा और सूची में ऐसे नामों को सम्मिलित करने के लिए अवैधतः और अनधिकृत रूप से इच्छुक था ।"

32. निःसंदेह परिवादी से साक्ष्य प्रस्तुत करने की अपेक्षा नहीं है, किंतु आधारभूत प्रकथन/अभिकथन होने चाहिए कि किसी व्यक्ति को अभिकथित अपराध में किस प्रकार अंतर्वलित किया गया है । यदि परिवाद में उपवर्णित समग्र अभिकथनों पर विचार करने के पश्चात् अपराध के विनिर्दिष्ट अभिकथन की कमी है तो न्यायालय का यह स्पष्ट कर्तव्य है कि अभियुक्त व्यक्तियों को अनावश्यक विचारण की पीड़ा सहन करने से बचाएं । न केवल यही, बल्कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही जारी रखने की अनुज्ञा देने से सार्वजनिक समय और धन का बहुत अपव्यय होगा ।

33. अतः, इस प्रक्रम पर प्रश्न यह है, क्या मजिस्ट्रेट ने तथ्यों और कथनों पर अपने विवेक का प्रयोग किया और संतुष्ट हुआ कि उस व्यक्ति जिसके विरुद्ध अभिकथन किए गए हैं, को उसके समक्ष उपस्थित होकर

मामले में आगे कार्यवाही करने का आधार है ।

34. परिवादी के अनुसार, प्रत्यर्थी सं. 4 से 7 अर्थात् अनिरुद्ध बहल, संस्थापक और प्रधान संपादक, कोबरा पोस्ट, जमशेद खान, सईद मंसूर और सुशांत पठान, कोबरा पोस्ट का संवाददाता द्वारा स्टिंग आपरेशन किया जाना अभिकथित है, किंतु, यह दर्शित करने वाला कोई अभिकथन नहीं है कि सभी अभियुक्त व्यक्ति मिथ्या सी. डी. तैयार करने में उपरोक्त व्यक्तियों के साथ दुरभिसंधि या षड्यंत्र में थे या अपमानजनक सामग्री प्रकाशित करने या प्रसारित करने में आपराधिकतः उत्तरदायी थे । अतः, मात्र यह अभिकथन कि अभियुक्त व्यक्ति प्रसारण कंपनी के पदधारी हैं और यह जांच करने में अपने उत्तरदायित्व में असफल रहे कि मिथ्या सूचना उनके चैनल के माध्यम से प्रकाशित/प्रसारित नहीं हुआ है, चैनल में प्रसारित अपमानजनक सामग्री के प्रकाशन/प्रचार में विशेषकर उन पर प्रतिनिधायी दायित्व गढ़ने के किसी उपबंध के अभाव में उनकी अपराधिता का अनुमान लगाना पर्याप्त नहीं है ।

35. इस प्रक्रम पर, यह ध्यान देने योग्य है, अभियुक्त सं. 1 से 3 अर्थात् मैसर्स सी. एन. एन. आई. बी. एन.7, राजदीप सरदेसाई और आशुतोष के विरुद्ध अभिकथन केवल ये हैं कि उन लोगों ने "हज के दलाल" शीर्ष के अधीन अभियुक्त सं. 4 से 7 द्वारा तैयार किए गए समाचार का प्रसारण किया, जो परिवादी के अनुसार अपमानजनक और अनादरपूर्ण है । परिवाद में या परिवादी के कथन और अपमानजनक कार्यक्रम में प्रसारण या प्रकाशन में विभिन्न अभियुक्त की भूमिका के संबंध में संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित उनके दो साथियों में भी कोई विनिर्दिष्ट कथन नहीं है । वस्तुतः,अपमानजनक कार्यक्रम के प्रकाशन या प्रसारण में, प्रत्येक अभियुक्त द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में कोई सकारात्मक प्रकथन नहीं है । कथनों से यह प्रकट होता है कि अपमानजनक और अनादरपूर्ण लांछनों वाले अपमानजनक कार्यक्रम को प्रसारित किया गया था । अतः, परिवाद में और संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित कथनों में भी, इन अभिकथनों के अभाव में कि कैसे समाचार के प्रसारण के लिए विभिन्न अभियुक्त अंतर्वलित/उत्तरदायी थे, जो अपमानजनक और अनादरपूर्ण था, उन्हें आदेशिका जारी करना वैधतः पोषणीय नहीं है ।

36. परिवाद के शीर्षक में नामों का मात्र उल्लेख कि ऐसे-ऐसे व्यक्ति संपादक या निदेशक या प्रबंध निदेशक हैं, उन व्यक्तियों की दोषिता का

अनुमान लगाना पर्याप्त नहीं होगा ।

37. सिविल दायित्व के असमान, दंड उपबंधों का भी कठोर अर्थान्वयन निकाला जाना चाहिए, जिसमें दंड विधि में कोई प्रतिनिर्धारित दायित्व नहीं है, जब तक कानून उसे अपनी परिधि के भीतर नहीं लेता है । अतः, परिवादी के लिए विनिर्दिष्ट अभिकथन करना लाजिमी था कि कैसे और किस आधार पर, प्रत्येक अभियुक्त दोषी है या अभिकथित अपराध किया है । मात्र इस कारण कि कुछ अभियुक्त प्रबंध निदेशक, मुख्य संपादक, संपादक और संस्थापक मुख्य संपादक रहे हैं, उन्हें अपने कर्मचारियों के कार्यों के लिए प्रतिनिधायी रूप से दायी नहीं बनाता, जो इस मामले में संख्या में तीन अर्थात् प्रत्यर्थी 3 से 5 रहे । उनमें से प्रत्येक के संबंध में भिन्न-भिन्न और पृथक् अभिकथन कि कैसे वे उत्तरदायी थे और अपराध किए थे, को स्पष्ट किया जाना चाहिए ।

38. **श्याम सुंदर और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

> "(9) किंतु हम दंड उपबंध के अधीन आपराधिक दायित्व पर न कि सिविल दायित्व पर विचार कर रहे हैं । दंड उपबंध का अर्थान्वयन कड़ाई से प्रमुखता से किया जाना चाहिए । दूसरा आपराधिक विधि के अधीन कोई प्रतिनिधायी दायित्व नहीं है जब तक कानून उसे ही अपनी परिधि में नहीं लेता । धारा 10 ऐसे दायित्व का उपबंध नहीं करती । यह सभी भागीदारों को अपराध के लिए दायी नहीं बनाती चाहे वे कारबार कर रहे हों या नहीं ।"

39. **हीरा लाल हरिलाल भगवती** बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :-

> "(30) हमारे मतानुसार, दंड विधि के अधीन प्रतिनिधायी दायित्व की तब तक कोई अवधारणा नहीं है, जब तक उक्त कानून इसे अपनी परिधि के भीतर नहीं लाता । वर्तमान मामले में, उक्त विधि जो क्षेत्र अर्थात् सीमा-शुल्क अधिनियम, 1962 में लागू होती है, अपीलार्थी उसमें पूर्णतः उन्मोचित हो चुके हैं और जी. सी. एस. ने अभियोजन से छूट प्रदान की है ।"

---

[1] (1989) 4 एस. सी. सी. 630.

[2] (2003) 5 एस. सी. सी. 257.

40. **मकसूद सैयद** बनाम **गुजरात राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"(13) जहां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(3) या धारा 200 के निबंधनानुसार फाइल किए गए परिवाद अर्जी पर अधिकारिता का प्रयोग किया जाता है, वहां मजिस्ट्रेट से अपनी विवेक का प्रयोग करने की अपेक्षा है । भारतीय दंड संहिता में कंपनी के प्रबंध निदेशक या निदेशक पर प्रतिनिधायी दायित्व डालने का कोई उपबंध नहीं है जब अभियुक्त कंपनी है । विद्वान् मजिस्ट्रेट स्वयं सही प्रश्न निकालने में असफल रहे कि क्या परिवाद अर्जी को यदि पढ़ा जाए और इसकी समग्रता में सही माना जाए तो यह निष्कर्ष निकलेगा कि इसमें प्रत्यर्थी किसी अपराध के लिए व्यक्तिगत रूप से दायी हैं । बैंक एक निगमित निकाय है । प्रबंध निदेशक या निदेशक का प्रतिनिधायी दायित्व उद्भूत होगा बशर्ते कानून में उस बाबत कोई उपबंध हो । कानूनों में निर्विवादतः ऐसे प्रतिनिधायी दायित्व को नियत करने के उपबंध होने चाहिए । उक्त प्रयोजन के लिए भी, परिवादी की ओर से अपेक्षित अभिकथन करने की बाध्यता है जो प्रतिनिधायी दायित्व गठित करने के उपबंधों को लागू होता हो ।"

41. **आर. कल्याणी** बनाम **जनक सी. मेहता**[2] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"(32) प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के अभिकथन सामान्य कानून के अधीन अपराध किए जाने के लिए हैं । प्रतिनिधायी दायित्व कानून के उपबंध के आधार पर ही न कि अन्यथा डाला जा सकता है । उक्त प्रयोजन के लिए, विधिक कल्पना सृजित की जानी चाहिए । विशेष कानून के अधीन भी जब इस आधार पर किसी व्यक्ति पर प्रतिनिधायी आपराधिक दायित्व डाला जाता है कि वह कंपनी के क्रियाकलापों का प्रभारी था और इसका उत्तरदायी था तो कानून के अधीन अधिकथित सभी लक्षणों को पूरा किया जाना चाहिए । विधिक कल्पना उस उद्देश्य और आशय तक सीमित रहना चाहिए, जिसके लिए यह सृजित किया गया है ।"

---

[1] (2008) 5 एस. सी. सी. 668.

[2] (2009) 1 एस. सी. सी. 516.

42. **शरोन माइकल** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

> "(16) प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में पक्षकारों के बीच और उनके द्वारा की गई संविदा के निबंधनों के ब्यौरे और ढ़ंग और तरीका भी, जिसमें इन्हें क्रियान्वित किया जाना है, अंतर्विष्ट है । संविदा के निष्पादन के संबंध में अपीलार्थियों के विरुद्ध अभिकथन किए गए हैं । उनकी ओर से आपराधिक औजार का कोई मामला संविदा की विरचना के पूर्व नहीं बनाया गया है । यह साबित करने की कोई नहीं है कि इसमें अपीलार्थी, जो अपीलार्थी कंपनी में भिन्न-भिन्न पद धारण करते हैं, ने अपने व्यक्तिगत हैसियत में कोई प्रतिवेदन किया है और इस प्रकार उन्हें मात्र इस कारण प्रतिनिधायी रूप से दायी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि वे कंपनी के कर्मचारी हैं ।"

43. **श्याम सुंदर** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

> "16. हमने, इसमें पहले यह पाया है कि उक्त सड़क के निर्माणाधीन होने के बावजूद प्रथम प्रत्यर्थी पुलिस थाना तीन बार गया । अतः, उसे पुलिस थाने में जाने से नहीं रोका गया । वस्तुतः, प्राधिकारियों द्वारा एक दृढ़ कार्रवाई की गई थी । कर्मकारों से सड़क पर कोई काम नहीं करने के लिए कहा गया था । अतः, हम यह समझने में असफल रहे कि कैसे इस प्रकृति की स्थिति में कंपनी के प्रबंध निदेशक और निदेशक और वास्तुविद् को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 341 के अधीन अपराध करने वाला कहा जा सकता है ।
>
> 17. भारतीय दंड संहिता कुछ मामलों के सिवाय व्यक्ति पर कोई प्रतिनिधायी दायित्व अनुध्यात नहीं करती । विधिक कल्पना पैदा कर या कानून के उपबंधों के निबंधनानुसार प्रतिनिधायी दायित्व सृजित कर कानून में व्यक्ततः उपबंधित किया जाना चाहिए । इस प्रकार, कंपनी के प्रबंध निदेशक या निदेशकों को अपराध का करने वाला नहीं कहा जा सकता क्योंकि वे पदधारी हैं । अतः, हमारी राय में, विद्वान् अपर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा मामले के इस पहलू पर

---

[1] (2009) 3 एस. सी. सी. 375.

[2] (1989) 4 एस. सी. सी. 630.

विचार किए बिना समन जारी करना सही नहीं था । कंपनी के प्रबंध निदेशक या निदेशकों को इसलिए समन नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि कंपनी के विरुद्ध कुछ अभिकथन किए गए हैं ।

18. पेप्सी फूड लिमिटेड और एक अन्य बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट और अन्य वाले मामले में, न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया –

> 28. आपराधिक मामले में, अभियुक्त का समन किया जाना एक गंभीर मामला है । आपराधिक विधि को स्वभावतः गतिमान नहीं बनाया जा सकता । यह उपयुक्त नहीं है कि परिवादी, परिवाद के अपने अभिकथनों के समर्थन में केवल दो साक्षियों को लाकर आपराधिक विधि को गतिमान बना सकता है । अभियुक्त को समन करने के मजिस्ट्रेट के आदेश से यह प्रतिबिंबित होना चाहिए कि उसने मामले के तथ्यों और उसको लागू विधि पर अपने विवेक का प्रयोग किया है । उसे परिवाद में किए गए अभिकथनों की प्रकृति और उसके समर्थन में मौखिक और दस्तावेजी दोनों साक्ष्य और क्या यही परिवादी के लिए अभियुक्त को आरोप साबित करने के लिए सफल बनाना पर्याप्त होगा, की परीक्षा करनी चाहिए । यह सही नहीं है कि मजिस्ट्रेट अभियुक्त को समन करने के पूर्व प्रारंभिक साक्ष्य के अभिलेखन के समय मूक दर्शक है । मजिस्ट्रेट को अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य की सावधानीपूर्व संवीक्षा करनी चाहिए और यहां तक कि स्वयं परिवादी और उसके साक्षियों से अभिकथनों की सत्यता या अन्यथा का पता लगाने के लिए प्रश्न पूछना चाहिए और तब यह परीक्षा करनी चाहिए कि क्या सभी या किसी अभियुक्त द्वारा प्रथमदृष्ट्या अपराध किया गया है या नहीं ।

19. उन्मोचन का आवेदन फाइल करने के उपचार के उपलब्धता के संबंध में भी, इसका यह अर्थ नहीं होगा कि यद्यपि, परिवाद अर्जी में किए गए अभिकथन को मात्र पढ़ा जाए और समग्रतः सही पाया जाए, अपराध का प्रकटन नहीं होता है या अन्यथा इसे न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग पाया जाता है तो भी उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अपनी वैवेकिक अधिकारिता का प्रयोग करने से इनकार करेगा ।

44. विधिक स्थिति को **एच. डी. एफ. सी. प्रतिभूति लि. और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] के हाल ही के निर्णय में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने दोहराया और यह मत व्यक्त किया :–

> "19. वर्तमान मामले में, निचले न्यायालयों के आदेशों को सावधानीपूर्वक विचार करने पर, हम यह देख सकते हैं कि सामान्य और अनलंकृत अभिकथन अपीलार्थी सं. 1 जो विधिक व्यक्ति है न कि प्राकृतिक व्यक्ति, के संदर्भ में किए गए हैं । भारतीय दंड संहिता, 1860 कंपनी द्वारा किए गए अभिकथित किसी अपराध के लिए प्रतिनिधायी दायित्व का उपबंध नहीं करती । जब कभी कानून ऐसी विधिक कल्पना का सृजन अनुध्यात करती है तो यह उसके लिए विनिर्दिष्टतः उपबंध करती है, जैसे परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 । इसके आगे, एस. के. अलघ **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, (2008) 5 एस. सी. सी. 662 वाले मामले का अवलंब लिया गया, जिसके पैरा 16 में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया –
>
> > भारतीय दंड संहिता उसके लिए उपबंध करने वाले किसी विनिर्दिष्ट उपबंध के सिवाय, ऐसे पक्षकार पर कोई प्रतिनिधायी दायित्व अनुध्यात नहीं करती, जिसे अपराध किए जाने के लिए प्रत्यक्षतः आरोपित नहीं किया गया ।
>
> 20. आगे, मकसूद सैयद **बनाम** गुजरात राज्य और अन्य, (2008) 5 एस. सी. सी. 668 वाले मामले के पैरा 13 में, इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया –
>
> > "जहां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(3) या धारा 200 के निबंधनानुसार फाइल किए गए परिवाद अर्जी पर अधिकारिता का प्रयोग किया जाता है, वहां मजिस्ट्रेट से अपनी विवेक का प्रयोग करने की अपेक्षा है । भारतीय दंड संहिता में कंपनी के प्रबंध निदेशक या निदेशक पर प्रतिनिधायी दायित्व डालने का कोई उपबंध नहीं है जब अभियुक्त कंपनी है । विद्वान् मजिस्ट्रेट स्वयं सही प्रश्न निकालने में असफल रहे कि क्या परिवाद अर्जी को यदि पढ़ा जाए और इसकी समग्रता में सही माना जाए तो यह निष्कर्ष निकलेगा कि इसमें प्रत्यर्थी किसी अपराध के लिए व्यक्तिगत रूप से दायी हैं । बैंक एक निगमित निकाय है । प्रबंध

---

[1] (2017) 1 एस. सी. सी. 640.

निदेशक या निदेशक का प्रतिनिधायी दायित्व उद्भूत होगा बशर्ते कानून में उस बाबत कोई उपबंध हो । कानूनों में निर्विवादतः ऐसे प्रतिनिधायी दायित्व को नियत करने के उपबंध होने चाहिए । उक्त प्रयोजन के लिए भी, परिवादी की ओर से अपेक्षित अभिकथन करने की बाध्यता है जो प्रतिनिधायी दायित्व गठित करने के उपबंधों को लागू होता हो ।"

21. थरमैक्स लिमिटेड और अन्य **बनाम** के. एम. जॉनी और अन्य, (2011) 13 एस. सी. सी. 412 और सुनील भारती मित्तल **बनाम** केंद्रीय अन्वेषण ब्यरो, (2015) 4 एस. सी. सी. 609 के पैरा 39 में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया –

"इस तथ्य के अलावा कि परिवाद में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 405, 406 और 420 के आवश्यक लक्षणों का अभाव है, यह उल्लेखनीय है कि प्रतिनिधायी दायित्व की अवधारणा आपराधिक विधि के लिए अज्ञात है । पहले व्यक्त किए गए मत के अनुसार, किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं किया गया है, किंतु, बोर्ड के सदस्य और वरिष्ठ कार्यपालक अपीलार्थी कंपनी का प्रबंध और कारबार देखने वाले व्यक्तियों के रूप में सम्मिलित हैं ।"

45. श्री अर्जुन लाल, अधिवक्ता ने यह दलील दी कि याची भिन्न-भिन्न पद/उत्तरदायित्व धारण करते हैं । याचियों द्वारा अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्व के निर्वहन में चूक करने की दिशा में वे सुस्पष्टतः अपराध के लिए प्रतिनिधायी रूप से दायी हैं । निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया गया :–

(i) तरुण तेजपाल **बनाम** जयलक्ष्मी जेटली, 2007 एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 881.

(ii) गंभीर सिंह आर. देकारे **बनाम** फालगुण भाई चिमनभाई पटेल, (2013) 3 एस. सी. सी. 697 ।

(iii) राजदीप सरदेसाई **बनाम** आंध्र प्रदेश राज्य, (2015) 8 एस. सी. सी. 239 और

(iv) एम. जे. अकबर **बनाम** आंध्र प्रदेश राज्य, 2011 एस. सी.

सी. ऑनलाइन ए. पी. 935.

46. इन निर्णयों के आधार पर यह निवेदन किया गया कि संपादकों का ऐसी प्रत्येक बात का उत्तरदायी होना चाहिए, जिससे वे प्रकाशित करते हैं और प्रकाशन के लिए उत्तरदायी होने के कारण वे मानहानि के अपराध के लिए प्रथमदृष्ट्या दोषी हैं । आगे यह निवेदन किया गया कि याचियों के लिए न्यायालय के समक्ष उपस्थित होना और यह अभिवचन करना है कि प्रकाशित समाचार उनकी जानकारी/सहमति के बिना थी और इस प्रक्रम पर न्यायालय से केवल यह देखने की अपेक्षा है कि आदेशिका जारी करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है और इन परिस्थितियों में आदेशिका को जारी करने के लिए याचियों द्वारा कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता ।

47. उपरोक्त व्यक्त मत के अनुसार, परिवादी, परिवाद में याचियों के विरुद्ध सकारात्मक प्रकथन करने में और आपराधिक कार्यवाहियों के आरंभ करने की अपेक्षा करते हुए, अभिकथित अपराध करने में उन प्रत्येक द्वारा विनिर्दिष्ट भूमिका नियत करने में असफल रहा । यह नहीं बताया गया है कि विभिन्न याची कैसे ऐसे समाचार, जिसका मानहानिकारक होना अभिकथित है, के प्रसारण के लिए अंतर्वलित/उत्तरदायी थे । ऐसे विनिश्चय जिनका अवलंब प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील लेने के लिए लिया गया है कि संपादक ऐसे समाचार के लिए उत्तरदायी है, जो प्रकाशित किया गया था, का संबंध मुख्यतः प्रिंट मीडिया से है, जो प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1867 (संक्षेप में "प्रेस अधिनियम") द्वारा शासित है । जहां तक केबिल नेटवर्क/इलैक्ट्रोनिक मीडिया के चैनलों के प्रसारण का संबंध है, यह केबिल टेलीविजन नेटवर्क (विनियमन) अधिनियम, 1955 (संक्षेप में "केबिल टी. वी. अधिनियम") के उपबंध हैं, जो लागू हैं । अतः, टी. वी. चैनल के संपादक का दायित्व प्रेस अधिनियम का अवलंब लेकर नियत नहीं किया जा सकता । यहां तक कि केबिल टी. वी. अधिनियम और उसके अधीन विरचित नियम किसी चैनल के संपादक के मानहानि का उपबंध नहीं करते बल्कि उक्त पद ही विशिष्ट रूप से नहीं है । अतः, केवल यह उपबंध, जो कोई व्यक्ति कुछ सुसंगति ढूंढ सकता है, केबिल टी. वी. अधिनियम की धारा 17 है, जिसमें यह उपबंध है कि जहां किसी कंपनी द्वारा अपराध किया जाता है, वहां ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो अपराध के किए जाने के समय कंपनी के कारबार के संचालन के लिए कंपनी का प्रभारी था और उत्तरदायी था और कंपनी भी अपराध की दोषी समझी जाएगी और तद्नुसार, उनके विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और

दंडित किए जाने का दायी होगा ।

48. यह ध्यातव्य है कि यह उपबंध अर्थात् धारा 17 भी अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के लिए तभी लागू होगी न कि भारतीय दंड संहिता के उपबंध, अतः, मात्र इस कारण कि व्यक्ति का कंपनी का निदेशक या संपादक या कर्मचारी होना अभिकथित है, प्रसारण मानहानिकारक सामग्री के कारण मानहानि के लिए तब तक उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, जब तक यह साबित नहीं किया जाए कि उक्त व्यक्ति इसे बनाने/प्रकाशित करने का उत्तरदायी है ।

49. इस प्रकार, उपरोक्त चर्चा के आलोक में और तथ्यों पर विचार करने के आधार पर कि परिवाद और संहिता की धारा 202 के अधीन अभिलिखित कथनों में भी परिवादी के विरुद्ध मानहानिकारक सामग्री बनाने या प्रकाशन में प्रत्येक याचियों द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है, इसलिए प्रतिनिधायी के सिद्धांत का अवलंब लेकर प्रसारण कंपनी/न्यूज चैनल में उनके पदधारण करने के आधार पर उनके विरुद्ध आदेशिका जारी करना न तो वैधतः न्यायसंगत है न ही विधि की दृष्टि से संधार्य है ।

50. याचियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई अगली दलील यह है कि सी. डी. आर. भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65ख के अधीन ग्राह्य नहीं है, क्योंकि स्वीकार्यतः वे उसकी उपधारा (4) के अनुसार प्रमाणित नहीं किए गए हैं । **अनवर पी.वी.** बनाम **पी. के. बसीर और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया गया जिसमें **राज्य (दिल्ली संघ राज्य क्षेत्र)** बनाम **नवजोत संधू** उर्फ **अफशान गुरु**[2] वाले मामले में, दो विद्वान् न्यायाधीशों द्वारा व्यक्त पूर्व मत को उलट दिया गया और इस प्रकार मत व्यक्त किया गया :–

> "22. जैसाकि इसमें पहले उल्लेख किया गया है, इलैक्ट्रोनिक अभिलेख से संबंधित साक्ष्य विशेष उपबंध होने के कारण, साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के साथ पठित धारा 63 के अधीन द्वितीयक साक्ष्य पर सामान्य विधि एक जैसी है । **साधारण कथन विशेष कथन का अल्पीकरण नहीं करते**, विशेष विधि हमेशा सामान्य विधि पर अभिभावी होंगे । यह प्रतीत होता है कि न्यायालय ने इलैक्ट्रोनिक

---

[1] (2014) 10 एस. सी. सी. 473.

[2] (2005) 11 एस. सी. सी. 600.

अभिलेख की स्वीकार्यता पर विचार करते समय, धारा 59 और 65-क पर ध्यान देने का लोप किया । धारा 63 और 65 इलैक्ट्रोनिक अभिलेख के द्वारा द्वितीयक साक्ष्य के मामले में लागू नहीं होती । उस विस्तार तक, **नवजोत संधू** वाले मामले में, इस न्यायालय द्वारा किए गए कथन के अनुसार इलैक्ट्रोनिक अभिलेख से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य की स्वीकार्यता पर विधि का कथन सही विधिक स्थिति का अभिकथन नहीं करता । इसे उलटे जाने की अपेक्षा है और हम ऐसा करते हैं । द्वितीयक साक्ष्य द्वारा इलैक्ट्रोनिक अभिलेख को तब तक साक्ष्य में स्वीकार नहीं किया जाएगा जब तक धारा 65-ख के अधीन अपेक्षाओं को पूरा नहीं किया जाता । इस प्रकार, सी. डी., वी. सी. डी., चिप आदि के मामले में, इसके साथ दस्तावेज लेने के समय लिए गए धारा 65ख के निबंधनानुसार प्रमाणपत्र लगा होगा, जिसके बिना उस इलैक्ट्रोनिक अभिलेख से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य अग्राह्य है ।

23. स्वीकार्यतः अपीलार्थी ने सी.बी. प्रदर्श पी 4, पी. 8, पी. 9, पी. 10, पी. 13, पी.15, पी. 20 और पी. 22 की बाबत धारा 65-ख के निबंधनानुसार कोई प्रमाणपत्र पेश नहीं किया । अतः, इसे साक्ष्य में स्वीकार नहीं किया जा सकता । इस प्रकार, गीत, उद्घोषणा और भाषण का उपयोग करते हुए, भ्रष्ट आचरण से संबंधित स्थापित संपूर्ण मामला आधारहीन है ।"

51. **अनवर** वाले मामले में, अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, याचियों का यह निवेदन है कि इस प्रक्रम पर सी. डी. आर. विचार से अपवर्जित किए जाने के दायी हैं । तथापि, दूसरी ओर श्री अर्जुन लाल विद्वान् अधिवक्ता का यह तर्क है कि **अनवर** वाले मामले का निर्णय पूर्वापेक्षी प्रकृति का होना अभिनिर्धारित किया गया है और इस बाबत **सोनू** उर्फ **अमर** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का प्रतिनिर्देश किया गया है ।

52. मैंने उक्त निर्णय का परिशीलन किया और यह पाया कि यद्यपि, माननीय दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह महसूस किया कि **अनवर** वाले मामले के निर्णय का विनिश्चयाधार भविष्य सापेक्ष होना चाहिए जैसाकि निर्णय के पैरा 32 से स्पष्ट है, जो इस प्रकार है :–

---

[1] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 3441.

"32. **नवजोत संधू** वाले मामले में, इस न्यायालय द्वारा तारीख 4 अगस्त, 2005 के निर्णय द्वारा धारा 65ख(4) का निर्वचन अनवर वाले मामले में, तारीख 18 सितंबर, 2014 तक उलटे जाने तक उस क्षेत्र पर बना रहा । इस देश के सभी दंड न्यायालय इस न्यायालय द्वारा किए गए निर्वचन के अनुसार विधि का पालन करने के लिए बाध्य हैं । नवजोत संधू वाले मामले में, धारा 65ख के निर्वचन के कारण इलैक्ट्रोनिक अभिलेखों को साबित करने के लिए किसी प्रमाणपत्र की आवश्यकता नहीं है । तारीख 4 अगस्त, 2005 और तारीख 18 सितंबर, 2014 के बीच की अवधि के दौरान अनेक विचारण किए गए । प्रमाणपत्र के बिना इलैक्ट्रोनिक अभिलेख साक्ष्य में पेश किए गए होंगे । इसमें कोई संदेह नहीं कि अनवर वाले मामले में, इस न्यायालय का निर्णय भूतलक्षी प्रभाव से प्रवर्तित रहा, जब तक 'भविष्यलक्षी विनिर्णय' का न्यायिक सिद्धांत लागू होता है । तथापि, निर्णय का भूतलक्षी प्रयोजन न्याय प्रशासन के हित में नहीं है, क्योंकि इससे अनेक आपराधिक मामले को फिर से खोलने की आवश्यकता होगी । प्रमाणपत्र के बिना साक्ष्य में पेश किए गए, इलैक्ट्रोनिक अभिलेखों के आधार पर विनिश्चित आपराधिक मामलों पर फिर से विचार करना होगा, जब कभी अपीली प्रक्रम पर अभियुक्त द्वारा आक्षेप किए गए हैं । ऐसे मामलों को जो अंतिम हो गए हैं, फिर से खोलने के प्रयत्न किए जाएं ।"

53. तथापि, असलियत यह है कि क्या माननीय उच्चतम न्यायालय ने वस्तुतः **अनवर** वाले मामले के निर्णय को भविष्यलक्षी होने के लिए अभिनिर्धारित किया ? उत्तर निर्णय के पैरा 35 में दिया गया है, जिसमें इस बात पर विचार करने के पश्चात् कि **अनवर** वाले मामले का विनिश्चय माननीय तीन न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा दिया गया था, माननीय न्यायाधीशों ने औचित्य के आधार पर यह घोषित करने से स्वयं को विरत किया कि निर्णय भविष्यलक्षी रूप से प्रवर्तित होगा और जिसे तीन न्यायाधीशें के न्यायपीठ द्वारा समुचित मामले में विनिश्चय किए जाने के लिए छोड़ दिया, जैसाकि रिपोर्ट के पैरा 35 से स्पष्ट होता है, जो इस प्रकार है :–

"35. इस न्यायालय ने अनवर वाले मामले में, भविष्यलक्षी विनिर्णय के सिद्धांत को लागू नहीं किया । दुविधा यह है कि हमें क्या करना चाहिए ? इस न्यायालय ने के. माधव रेड्डी **बनाम** आंध्र प्रदेश

राज्य, (2014) 6 एस. सी. सी. 537 वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया कि पूर्वतर निर्णय इसके भूतलक्षी प्रवर्तन की प्रशाखाओं को ध्यान में रखते हुए, भविष्यलक्षी होगा । यदि अनवर वाले मामले के निर्णय को भूतलक्षी प्रभाव से लागू किया जाता है तो इसका परिणाम पिछले संव्यवहारों को उधेड़ना होगा और न्याय प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा । जैसाकि अनवर वाले मामले का विनिश्चय तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा किया गया है, औचित्य की यह मांग है कि हम यह घोषित करने से विरत रहे कि निर्णय का भविष्यलक्षी प्रवर्तन होगा । हम तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा समुचित मामले में विनिश्चय किए जाने की छूट देते हैं । किसी भी दशा में, यह प्रश्न अभियुक्त के विरुद्ध अन्य मुद्दों के न्यायनिर्णयन को ध्यान में रखते हुए, इस विवाद के न्यायनिर्णयन का आधार नहीं है ।"

54. अतः, यह न्यायालय अनवर वाले मामले के माननीय तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा अधिकथित विधि द्वारा आबद्ध है और धारा 65ख के अनुसार स्वीकार्यतः सी. डी. आर. के प्रमाणित न किए जाने को आवश्यकतः इस प्रक्रम पर विचार किए जाने से अपवर्जित किया जाना चाहिए ।

55. इस प्रकार, पूर्वोक्त चर्चा के आधार पर, यह स्थापित किया जाता है कि :–

(i) परिवादी, परिवाद में और आपराधिक कार्यवाहियों के आरंभ की अपेक्षा करने वाले अभिकथित अपराध में की गई उनमें से प्रत्येक की विनिर्दिष्ट भूमिका निभाने के लिए दिए गए साक्ष्य में भी याचियों के विरुद्ध सकारात्मक प्रकथन करने में असफल रहा ;

(ii) सिविल दायित्व के असमान, दंड उपबंधों का भी कड़ाई से अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जिसमें दंड विधि में कोई प्रतिनिधायी दायित्व नहीं है, जब तक कानून उसको अपनी परिधि के भीतर नहीं लेता और इस प्रकार, याची मात्र प्रबंध निदेशक, मुख्य संपादक, संपादक और संस्थापक मुख्य संपादक होने के आधार पर अपने कर्मचारियों के कार्यों के लिए उन्हें प्रतिनिधायी रूप से दायी नहीं बनाएगा ;

(iii) सी. डी. आर. जिसे परिवादी के मामले का मुख्य आधार बनाया गया, विधि, विशिष्टतया भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा

65ख के अनुसार प्रमाणित नहीं किया गया है और विचार से अपवर्जित किया जाना चाहिए । अतः, एकबार विचार से सी. डी. आर. के अपवर्जित किए जाने के पश्चात् याचियों के विरुद्ध प्रक्रिया मजिस्ट्रेट के समक्ष उपलब्ध सामग्री के आधार पर जारी किए जाने का आदेश नहीं दिया जा सकेगा ; और

(iv) मजिस्ट्रेट द्वारा उपरोक्त सभी तथ्यों, जैसाकि हमने उल्लेख किया है, पर विचार करने में असफल होने पर सहजता से यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि विद्वान् न्यायाधीश ने याचियों के विरुद्ध आदेशिका जारी करने के पूर्व अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग नहीं किया ।

56. तदनुसार, याचियों में सार है और इन्हें मंजूर किया जाता है । याचियों के विरुद्ध 15/2007 के आपराधिक परिवाद सं. 113क2 में पारित आदेश तारीख 1 अप्रैल, 2015 को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ।

57. तथापि, समाप्त करने के पूर्व यह स्पष्ट किया जाता है कि परिवादी पर संज्ञान लेने का आदेश तारीख 1 अप्रैल, 2015 अन्य अभियुक्त अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 5 से 7 के विरुद्ध कायम रखा जाता है ।

याचिकाएं मंजूर की गईं ।

पा.

हिकमत बहादुर

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तथा

नारायण सिंह चौहान

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तारीख 19 सितंबर, 2017

न्यायमूर्ति धरम चंद चौधरी और न्यायमूर्ति विवेक सिंह ठाकुर

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 [सपठित भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 व भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3] – पारिस्थितिक साक्ष्य – यह अभिकथित किया जाना कि अभियुक्त द्वारा बंदूक की गोली से क्षति कारित करके मृतक की हत्या की गई – साक्षियों के साक्ष्य से अभियुक्त द्वारा मृतक की हत्या किया जाना साबित न हुआ हो तथा हत्या को साबित करने के लिए पारिस्थितिक साक्ष्य की शृंखला पूरी नहीं होती है तो अभियुक्त दोषमुक्त होने का हकदार है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 302 [सपठित आयुध अधिनियम की धारा 2क] – स्वर्णिम सिद्धांत – आपराधिक मामले – जहां मामले में दो मत संभव हैं और एक मत अभियुक्त की दोषिता को इंगित करता है तथा दूसरा मत अभियुक्त की निर्दोषिता दर्शाता है, वहां पर अभियुक्त के अनुकूल मत को अंगीकार किया जाना चाहिए ।

मस्त राम ग्राम धवानदली, तहसील चौपाल, जिला शिमला का निवासी है । उसके पास दो सेब के बगीचे अर्थात् एक ग्राम धवानदली और दूसरा पोरान पर थे । ग्राम पोरान पर अपने बगीचे की देख-रेख करने के लिए मृतक दिल बहादुर, नेपाली राष्ट्रिक को 2,500/- रुपए प्रति माह के संदाय पर चौकीदार के पद पर नियोजित किया गया था । तारीख 18 मई, 2014 को मस्त राम जब अपने पुत्र की चिकित्सा जांच के लिए चंडीगढ़ के रास्ते

पर था, लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न उसने अपने पड़ोसी नारायण सिंह चौहान से दूरभाष कॉल प्राप्त की जिसने यह सूचना दी कि मृतक दिल बहादुर तथा हिकमत बहादुर एक दूसरे से झगड़ रहे थे । इस पर, उसने मृतक दिल बहादुर को बुलाया जिसने यह बताया कि अभियुक्त सं. 1 ने उस पर बंदूक से गोली चलाई और तदुपरि, उससे गोली की क्षति कारित हुई । ऐसा सुनकर मस्त राम अभि. सा. 12 ने तत्काल सतीश कुमार अपने साले को सूचित किया था और उससे घटनास्थल पर पहुंचने के लिए कहा गया । सतीश कुमार घटनास्थल पर गया और अभि. सा. 12 को यह बताया कि मृतक दिल बहादुर की कारित हुई क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई थी । मस्त राम के बारे में दूरभाष से लगभग 12.30 बजे अपराह्न पुलिस थाना, नेरवा के पुलिस को सूचना दिया जाना अभिकथित है । घटनास्थल पर भी संजीव नामक व्यक्ति के साथ सतीश कुमार के पहुंचने के पश्चात् पुलिस दल जिसका उप निरीक्षक/थाना भारसाधक अधिकारी जसवीर सिंह मुखिया था, उस दल में हेड कांस्टेबल संतराम एवं एच. एच. सी. वीरेन्द्र चंद एच. एच. सी./ड्राइवर मदन लाल और कांस्टेबल समीर कांत शासकीय यान से घटनास्थल पर पहुंचे । मृतक दिल बहादुर नाजुक हालत में पड़ा हुआ था । उसे बंदूक की गोली से क्षति हुई थी और रक्त के तालाब में पड़ा हुआ था । ग्रामवासी उस समय घटनास्थल पर भी एकत्र हुए थे । यद्यपि मृतक को अस्पताल में भेजा जा रहा था, तथापि, उसकी उन क्षतियों से मृत्यु हो गई जो उसे अस्पताल के रास्ते पर हुई थी । सतीश कुमार का कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन अभिलिखित किया गया था । रुक्का, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11क तैयार किया गया था और मामले के रजिस्ट्रीकरण करने के लिए पुलिस थाने ले जाने के लिए कांस्टेबल, समीर कांत को सौंप दिया । कांस्टेबल समीर कांत ने एल. एच. सी. शमीम को रुक्का सौंप दिया था जो पुलिस थाना, नेरवा में मुहर्रिर हेड कांस्टेबल था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 16/क का रजिस्ट्रीकरण पर कांस्टेबल समीर कांत को फाइल सौंपी गई थी जो उसे अन्वेषक अधिकारी को पास ले गया । अन्वेषक अधिकारी अभि. सा. 23 उप निरीक्षक जसवीर सिंह ने घटना के स्थान का घटनास्थल नक्शा, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23क तैयार किया । फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-24 खींचे गए थे । घटना के स्थान से रक्तरंजित मिट्टी और घास सतीश कुमार और संजीव कुमार की मौजूदगी में ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ग के माध्यम से कब्जे में

ली गई थी । मुहर प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख का नमूना अलग-अलग लिया गया था । शव को सी. एच. सी. नेरवा पर लगाया गया था । मृत्यु समीक्षा कागजात, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/ख को भरा गया था । अभियुक्त सं. 1 को गिरफ्तार किया गया था और शव को शवगृह में रखा गया था । तारीख 19 मई, 2014 को सहायक उप निरीक्षक कल्याण सिंह और एल. एच. सी. सुरेश को शव के शवपरीक्षण करने के पश्चात् प्राप्त करने के लिए इंदिरा गांधी चिकित्सा महाविद्यालय, शिमला पर तैनात किया गया था । सहायक उप निरीक्षक कल्याण सिंह ने अपने सेल फोन से फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-3 और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-4 खींची गई थी । शव का शवपरीक्षण प्राप्त करने के पश्चात् देखिए शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ग, उसे अंतिम संस्कार करने के लिए वीरेन्द्र को सौंपा गया था । तारीख 20 मई, 2014 को हिकमत बहादुर के बारे में प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/ख किए जाने का अभिकथन किया गया है कि उसने घटनास्थल के नजदीक खेत में बंदूक और दरांत अपने डेरे के अंदर छुपाई है और कि वह अकेला ऐसा व्यक्ति है जो उसे प्राप्त कर सकता था, यह वस्तु एल. एच. सी. शमीम और एच. एच. सी. वीरेन्द्र शर्मा की मौजूदगी में बरामद की गई थी । अन्वेषक अधिकारी, उप निरीक्षक जसबीर सिंह एच. एच. सी. वीरेन्द्र शर्मा, कांस्टेबल सुनील और ड्राइवर मदन साक्षियों के साथ घटनास्थल पर गया । अभियुक्त द्वारा दी गई शनाख्त पर बंदूक खेत के "बाड़े/सीमा" से बरामद हुई थी जिसे घास के अंदर रखा गया था । शनाख्त ज्ञापन, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/घ रघुवीर सिंह और वीर सिंह की मौजूदगी में तैयार किया गया था । बंदूक का खाका, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क भी तैयार किया गया था । फोटो, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/जे. से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/एल भी खींचे गए थे । बरामदगी के स्थान का घटनास्थल नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/ग तैयार किया गया था । इसके पश्चात्, बंदूक को मोहरबंद किया गया और अभिग्रहण ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ख के माध्यम से कब्जे में लिया गया था । अभियुक्त द्वारा छुपाई गई "दरांत" उसके "डेरा" के पास तकिए के नीचे पाई गई थी, उसके "दरांत" को बरामदगी ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/च के माध्यम से कब्जे में भी लिया गया था । शनाख्त ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/जी को रघुवीर सिंह और वीर सिंह की मौजूदगी में पुनः तैयार किया गया था । "दरांत" प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ड़ का खाका अलग तैयार किया गया था । वाद संपत्ति पुलिस मालखाने में मुहर्रिर हेड कांस्टेबल की सुरक्षित अभिरक्षा में जमा की गई थी । अपराध में फंसाने

वाली सभी वस्तुएं रसायनिक विश्लेषण के लिए आर. सी. 24/2014 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/ड़ के अनुसार कांस्टेबल रजनीश के माध्यम से न्यायालयिक प्रयोगशाला जुंगा भेजी गई थी । घटना के स्थान का सीमांकन करने के लिए नायब तहसीलदार, नेरवा को आवेदन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 19/क किया गया था । सीमांकन किया गया था और जमाबंदी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ख और आकाश साजरा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ग की प्रति के साथ रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/क प्राप्त की गई थी । रसायन परीक्षक, न्यायालयिक प्रयोगशाला, जुंगा की रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/च और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/जी प्राप्त करने पर उसे, पुलिस फाइल में भी जोड़ दिया गया था । अन्वेषण पूरा करने पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन रिपोर्ट विद्वान् निचले न्यायालय में फाइल की गई थी । विद्वान् विचारण न्यायालय ने उस पर विचार करते हुए और विद्वान् लोक अभियोजक तथा विद्वान् प्रतिरक्षा काउंसेल की सुनवाई करने के पश्चात् भी तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने पर मामले का निष्कर्ष, जो अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर के विरुद्ध निष्कर्ष निकाला, जबकि अभियुक्त सं. 2 नारायण सिंह चौहान के विरुद्ध भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 और 27 के अधीन दंडनीय अपराध कारित किए जाने पर मामला बनता है, तद्नुसार उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए, तथापि, दोनों अभियुक्त ने दोषी न होने का अभिवाक् किया तथा विचारण किए जाने का दावा किया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया गया । अभियुक्तों द्वारा अपनी-अपनी दोषसिद्धि के विरुद्ध उच्च न्यायाल में अपील फाइल की गई । अपीलों का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामला इस प्रकार है कि जहां अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध बल देने वाली परिस्थितियां अभिलेख पर समाधानप्रद रूप से सिद्ध नहीं हुई है और न अभियुक्त की दोषिता के कल्पना के ही संगत है और न प्रकृति में निश्चायक है । साक्ष्य की शृंखला भी पूरी नहीं है जिससे कि अभियुक्त की निर्दोषिता असंगत निष्कर्ष निकालने के लिए कोई युक्तियुक्त आधार न बचे और न्यायालय के अंतःकरण का समाधान होना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में वह अभियुक्त सं. 1 है जिसने मृतक दिल बहादुर को बंदूक प्रदर्श पी. 5 की गोली से मारा था और कि उक्त बंदूक अभियुक्त सं. 2 की थी जिसने अभियुक्त सं. 1 को उद्यान में ड्यूटी करते समय जंगली जानवरों से अपनी रक्षा करने के लिए गोला-

बारूद सहित उक्त बंदूक दी थी । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने आक्षेपित निर्णय में यह उल्लेख किया है कि आपराधिक विचारण परी की कहानी की भांति नहीं है और अभियोजन पक्ष को विधिक रूप से ग्राह्य साक्ष्य की बुनियाद पर अपने पक्षकथन का निर्माण करना चाहिए । यह भी प्रकट है कि अपराध वीभत्स हो सकता है और मानवीय संवेदना में विद्रोह हो सकता है परंतु अभियुक्त को विधिक साक्ष्य पर ही दोषसिद्ध किया जा सकता है न कि अटकलबाजियों पर । तथापि, विचारण न्यायाधीश ने ऐसे सिद्धांतों पर टिप्पण किया है जिसका अवलंब नहीं लिया गया और इसके विपरीत अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध दोषसिद्धि के निष्कर्ष तकनीकी रूप से अभिलिखित किए गए हैं जिसमें विवेक का प्रयोग नहीं किया गया है । यह भी कथन किया गया है कि मृतक दिल बहादुर की बुलेट क्षति के कारण मृत्यु हुई थी जो उसे उसके शरीर पर लगी । तथापि, सभी युक्तियुक्त संदेह के परे इसे साबित नहीं किया गया है कि वह केवल अभियुक्त हिकमत बहादुर था जिसने बंदूक से गोली चलाई और दिल बहादुर की क्षति के कारण मृत्यु हो गई जो उसे उक्त अभियुक्त के हाथों लगी । शवपरीक्षण रिपोर्ट के अनुसार मृतक शराब पिया हुआ पाया गया था । इसलिए, यह यथोचित रूप से संभव है कि उसने किसी अन्य स्थान पर शराब पी थी । यह स्थान दूसरे गोरखों के डेरे का हो सकता है, जैसाकि अभियुक्त ने अपनी-अपनी प्रतिरक्षा में अभिवाक् किया है । अकाट्य और विश्वसनीय साक्ष्य के अभाव में, यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त सं. 1 द्वारा अकेले मृतक को घातक क्षति पहुंचाई थी । तथाकथित हेतु किए मृतक ने 25,000/- रुपए अभियुक्त सं. 1 से ऋण लिया था और जब वह उक्त अभियुक्त के पास उक्त पैसा को एकत्र कर गया था, यह बात तनिक भी स्पष्ट नहीं है कि पुलिस द्वारा मामले के इस पहलू पर अन्वेषण के दौरान पूछताछ क्यों नहीं की गई । अभियोजन पक्षकथन यह है कि मृतक का भाई भीम बहादुर ने अभियुक्त सं. 1 की पत्नी का व्यपहरण किया था, सत्याभाषी नहीं है और न अन्वेषण के दौरान विचार किया गया । इसलिए, अभियुक्त का मृतक की हत्या करके भाग गया हेतु तनिक भी साबित नहीं किया गया है । इस प्रकार, विचारण न्यायालय ने अभियुक्त के विरुद्ध दोषसिद्धि के निष्कर्ष अभिलिखित करके न्यायसंगत कार्य नहीं किया था । वर्तमान मामला यह है कि जहां साक्ष्य के मूल्यांकन से अभिलेख पर दो संभव मत प्रकट होते हैं और ऐसी प्रकृति में अभियुक्त के अनुकूल मत प्रकट होता है, तो उसका पालन किया जाना चाहिए और संदेह का फायदा उसे दिया जाना चाहिए । इसलिए, अभियुक्त संदेह का फायदा पाने का

हकदार है और परिणामस्वरूप आरोप से दोषमुक्त किया जाता है । इसमें ऊपर जो कुछ भी कहा गया है, उस बात को ध्यान में रखते हुए, ये अपीलें सफल हैं और तद्नुसार, उन्हें मंजूर किया जाता है । परिणामस्वरूप, अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर को उसके विरुद्ध विरचित दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोप से दोषमुक्त किया जाता है, जबकि अभियुक्त सं. 2 नारायण सिंह चौहान के विरुद्ध आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन आरोप विरचित किया गया । अभियुक्त हिकमत बहादुर दंड भोग रहा है । उक्त अभियुक्त को तत्काल मुक्त किया जाएगा, यदि वह किसी अन्य मामले में वांछित नहीं है । तद्नुसार, कार्यालय निर्मुक्ति वारंट तैयार करें । तथापि, अभियुक्त नारायण सिंह चौहान द्वारा दिए गए वैयक्तिक बंध-पत्र रद्द किए जाते हैं और प्रतिभू को उन्मोचित किया जाता है । अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा यदि पहले जुर्माने की रकम जमा की गई है तो उनसे उचित प्राप्ति–रसीद की पुष्टि करके वापस किया जाएगा । (पैरा 39, 40, 41, 42, 43 और 44)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	आई. एल. आर. 2016 (5) हि. प्र. 213 : **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **रेया उरव** उर्फ **अजय** ;	21
[2014]	नवीनतम एच. एल. जे. 2014 (हि. प्र.) 550 : **सुलेन्द्र** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ;	20
[2011]	(2011) 6 एस. सी. सी. 343 : **राजस्थान राज्य** बनाम **इस्लाम और अन्य** ;	43
[2009]	ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2869 : **जागृति देवी** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ।	17

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2016 की दांडिक अपील सं. 242, 215.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री एस. एस. राठौर, अधिवक्ता और सुरेन्द्र शर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री डी. एस. नैनता और वीरेन्द्र वर्मा, अपर महाधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति धरम चंद चौधरी ने दिया ।

न्या. चौधरी – वर्तमान अपील और उससे संबंधित एक और अपील 2016 की दांडिक अपील सं. 215 का भी जो अपीलें इस निर्णय से निपटारा किया जाएगा, विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश - II, शिमला द्वारा 2017 के विचारण सं. 38-एस./7 में तारीख 2 मई, 2016 को पारित निर्णय से उद्भूत हुई है, जिसके द्वारा दोनों सिद्धदोष अपीलार्थी अर्थात् हिकमत बहादुर और नारायण सिंह चौहान (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 कहा गया है) को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया था । वर्तमान अपील में हिकमत बहादुर (अभियुक्त सं. 1) को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध किए जाने के लिए सिद्धदोष किया गया और आजीवन कठोर कारावास भोगने और 1,00,000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर तीन वर्ष का साधारण कारावस भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया जबकि नारायण सिंह चौहान (अभियुक्त सं. 2) को संबंधित अपील में भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध किए जाने के लिए दोषसिद्ध किया गया और तीन वर्ष का कठोर कारावास भोगने और जुर्माने के रूप में 25,000/- रुपए का संदाय करने के लिए भी तथा जुर्माने का संदाय का अतिक्रमण करने पर छह मास का साधारण कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया ।

2. मस्त राम (अभि. सा. 12) ग्राम धवानदली, तहसील चौपाल, जिला शिमला का निवासी है । उसके पास दो सेब के बगीचे अर्थात् एक ग्राम धवानदली और दूसरा पोरान पर थे । ग्राम पोरान पर अपने बगीचे की देख-रेख करने के लिए मृतक दिल बहादुर, नेपाली राष्ट्रिक को 2,500/- रुपए प्रति माह के संदाय पर चौकीदार के पद पर नियोजित किया गया था ।

3. तारीख 18 मई, 2014 को मस्त राम जब अपने पुत्र की चिकित्सा जांच के लिए चंडीगढ़ के रास्ते पर था, लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न उसने अपने पड़ोसी नारायण सिंह चौहान (संबंधित अपील में सिद्धदोष-अपीलार्थी) से दूरभाष कॉल प्राप्त की जिसने यह सूचना दी कि मृतक दिल बहादुर तथा हिकमत बहादुर (अभियुक्त सं. 1) एक दूसरे से झगड़ रहे थे । इस पर, उसने मृतक दिल बहादुर को बुलाया जिसने यह बताया कि अभियुक्त सं. 1 ने उस पर बंदूक से गोली चलाई और तदुपरि, उससे गोली की क्षति कारित हुई । ऐसा सुनकर मस्त राम अभि. सा. 12 ने तत्काल सतीश

कुमार अपने साले को सूचित किया था और उससे घटनास्थल पर पहुंचने के लिए कहा गया । सतीश कुमार (अभि. सा. 1) घटनास्थल पर गया और अभि. सा. 12 को यह बताया कि मृतक दिल बहादुर की कारित हुई क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई थी । मस्त राम (अभि. सा. 12) के बारे में दूरभाष से लगभग 12.30 बजे अपराह्न पुलिस थाना, नेरवा के पुलिस को सूचना दिया जाना अभिकथित है । घटनास्थल पर भी संजीव नामक व्यक्ति के साथ सतीश कुमार (अभि. सा. 1) के पहुंचने के पश्चात् पुलिस दल जिसका उप निरीक्षक/थाना भारसाधक अधिकारी जसवीर सिंह मुखिया था, उस दल में हेड कांस्टेबल संतराम एवं एच. एच. सी. वीरेन्द्र चंद एच. एच. सी./ड्राइवर मदन लाल और कांस्टेबल समीर कांत (अभि. सा. 11) शासकीय यान से घटनास्थल पर पहुंचे । मृतक दिल बहादुर नाजुक हालत में पड़ा हुआ था । उसे बंदूक की गोली से क्षति हुई थी और रक्त के तालाब में पड़ा हुआ था । ग्रामवासी उस समय घटनास्थल पर भी एकत्र हुए थे । यद्यपि मृतक को अस्पताल में भेजा जा रहा था, तथापि, उसकी उन क्षतियों से मृत्यु हो गई जो उसे अस्पताल के रास्ते पर हुई थी । सतीश कुमार (अभि. सा. 1) का कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन अभिलिखित किया गया था । रुक्का, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11क तैयार किया गया था और मामले के रजिस्ट्रीकरण करने के लिए पुलिस थाने ले जाने के लिए कांस्टेबल, समीर कांत (अभि. सा. 11) को सौंप दिया । कांस्टेबल समीर कांत (अभि. सा. 11) ने एल. एच. सी. शमीम (अभि. सा. 18) को रुक्का सौंप दिया था जो पुलिस थाना, नेरवा में मुहर्रिर हेड कांस्टेबल था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 16/क का रजिस्ट्रीकरण पर कांस्टेबल समीर कांत (अभि. सा. 11) को फाइल सौंपी गई थी जो उसे अन्वेषक अधिकारी को पास ले गया । अन्वेषक अधिकारी अभि. सा. 23 उप निरीक्षक जसवीर सिंह ने घटना के स्थान का घटनास्थल नक्शा, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23क तैयार किया । फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-24 खींचे गए थे । घटना के स्थान से रक्तरंजित मिट्टी और घास सतीश कुमार (अभि. सा. 1) और संजीव कुमार की मौजूदगी में ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ग के माध्यम से कब्जे में ली गई थी । मुहर प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख का नमूना अलग-अलग लिया गया था । शव को सी. एच. सी. नेरवा पर लगाया गया था । मृत्यु समीक्षा कागजात, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/ख को भरा गया था । अभियुक्त सं. 1 को गिरफ्तार किया गया था और शव को शवगृह में रखा गया था ।

4. अगले दिन अर्थात् तारीख 19 मई, 2014 को सहायक उप निरीक्षक कल्याण सिंह (अभि. सा. 16) और एल. एच. सी. सुरेश (अभि. सा. 6) को शव के शवपरीक्षण करने के पश्चात् प्राप्त करने के लिए इंदिरा गांधी चिकित्सा महाविद्यालय, शिमला पर तैनात किया गया था । सहायक उप निरीक्षक कल्याण सिंह (अभि. सा. 16) ने अपने सेल फोन से फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-3 और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-4 खींची गई थी । शव का शवपरीक्षण प्राप्त करने के पश्चात् देखिए शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ग, उसे अंतिम संस्कार करने के लिए वीरेन्द्र को सौंपा गया था ।

5. तारीख 20 मई, 2014 को हिकमत बहादुर (अभियुक्त सं. 1) के बारे में प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/ख किए जाने का अभिकथन किया गया है कि उसने घटनास्थल के नजदीक खेत में बंदूक और दरांत अपने डेरे अंदर छुपाई है और कि वह अकेला ऐसा व्यक्ति है जो उसे प्राप्त कर सकता था, यह वस्तु एल. एच. सी. शमीम (अभि. सा. 18) और एच. एच. सी. वीरेन्द्र शर्मा (अभि. सा. 20) की मौजूदगी में बरामद की गई थी । अन्वेषक अधिकारी, उप निरीक्षक जसबीर सिंह (अभि. सा. 23) एच. एच. सी. वीरेन्द्र शर्मा, कांस्टेबल सुनील और ड्राइवर मदन साक्षियों के साथ घटनास्थल पर गया । अभियुक्त द्वारा दी गई शनाख्त पर बंदूक खेत के "बाड़े/सीमा" से बरामद हुई थी जिसे घास के अंदर रखा गया था । शनाख्त ज्ञापन, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/घ रघुवीर सिंह (अभि. सा. 2) और वीर सिंह की मौजूदगी में तैयार किया गया था । बंदूक का खाका, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क भी तैयार किया गया था । फोटो, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/जे. से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/एल. भी खींचे गए थे । बरामदगी के स्थान का घटनास्थल नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/ग तैयार किया गया था । इसके पश्चात्, बंदूक को मोहरबंद किया गया और अभिग्रहण ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ख के माध्यम से कब्जे में लिया गया था । अभियुक्त द्वारा छुपाई गई "दरांत" उसके "डेरा" के पास तकीये के नीचे पाई गई थी, उसके "दरांत" को बरामदगी ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/च के माध्यम से कब्जे में भी लिया गया था । शनाख्त ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/जी को रघुवीर सिंह (अभि. सा. 2) और वीर सिंह की मौजूदगी में पुनः तैयार किया गया था । "दरांत" प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ड़ का खाका अलग तैयार किया गया था ।

6. वाद संपत्ति पुलिस मालखाने में मुहर्रिर हेड कांस्टेबल की सुरक्षित

अभिरक्षा में जमा की गई थी । अपराध में फंसाने वाली सभी वस्तुएं रसायनिक विश्लेषण के लिए आर. सी. 24/2014 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/ड़ के माध्यम से कांस्टेबल रजनीश (अभि. सा. 17) के माध्यम से न्यायालयिक प्रयोगशाला जुंगा भेजी गई थी । घटना के स्थान का सीमांकन करने के लिए नायब तहसीलदार, नेरवा को आवेदन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 19/क किया गया था । सीमांकन किया गया था और जमाबंदी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ख और आकाश साजरा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ग की प्रति के साथ रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/क प्राप्त की गई थी । रसायन परीक्षक, न्यायालयिक प्रयोगशाला, जुंगा की रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/च और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 23/जी प्राप्त करने पर उसे, पुलिस फाइल में भी जोड़ दिया गया था ।

7. अन्वेषण पूरा करने पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन रिपोर्ट विद्वान् निचले न्यायालय में फाइल की गई थी । विद्वान् विचारण न्यायालय ने उस पर विचार करते हुए और विद्वान् लोक अभियोजक तथा विद्वान् प्रतिरक्षा काउंसेल की सुनवाई करने के पश्चात् भी तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने पर मामले का निष्कर्ष, जो अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर के विरुद्ध निष्कर्ष निकाला, जबकि अभियुक्त सं. 2 नारायण सिंह चौहान के विरुद्ध भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 और 27 के अधीन दंडनीय अपराध कारित किए जाने पर मामला बनता है, तद्नुसार उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए, तथापि, दोनों अभियुक्त ने दोषी न होने का अभिवाक् किया तथा विचारण किए जाने का दावा किया ।

8. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप कायम रखे जाने के लिए कुल मिलाकर 23 साक्षियों की परीक्षा की ।

9. मुख्य अभियोजन साक्षी जैसाकि इसमें ऊपर उल्लिखित है, सतीश कुमार (अभि. सा. 1) जिसके कहने पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 16/क अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत की गई । रघुवीर सिंह (अभि. सा. 2) बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ख और "दरांत" प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/च के बरामदगी के साक्षी हैं । महावीर कश्यप (अभि. सा. 3) जो कनिष्ठ इंजीनियर, पी. आई. यू. 54 खंड, एच. पी. पी. डब्ल्यू. डी. नेरवा में है जिन्होंने पुलिस के अनुरोध पर प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/क पर माप नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ख तैयार किया । राज कुमार (अभि. सा. 4) मालिक

राज फोटो स्टूडियो, नेरवा ने अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं किया और बल्कि पक्षद्रोही हो गया । डा. ध्रुव गुप्ता (अभि. सा. 5) रजिस्ट्रार, औषधि विभाग, आई. जी. एम. सी., शिमला ने शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ग साबित की । एल. एच. सी. सुरेश कुमार (अभि. सा. 6) ने सहायक उप निरीक्षक कल्याण सिंह (अभि.सा. 16) के साथ आई. जी. एम. सी., शिमला में शव का शवपरीक्षण कराया गया । राकेश कुमार (अभि. सा. 7) ने यह दावा किया है कि वह सतीश कुमार (अभि. सा. 1) के साथ घटनास्थल पर गया, जहां मृतक से इस बारे में पूछताछ की गई कि उसके साथ क्या घटित हुआ, उसने यह बताया कि अभियुक्त सं. 1 ने बंदूक से गोली चलाई और उसके शरीर पर क्षति पहुंचाई । कांस्टेबल समीर कांत (अभि. सा. 11) अन्वेषक अधिकारी, उप निरीक्षक जसबीर सिंह (अभि. सा. 23) के साथ घटनास्थल पर गया और मामले के रजिस्ट्रीकरण के लिए पुलिस थाने पर रुक्का प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11/क ले गया था । उद्यान के स्वामी मस्त राम (अभि. सा. 12) जहां मृतक दिल बहादुर चौकीदार के रूप में कार्य कर रहा था, उसे अपने साले सतीश कुमार (अभि. सा. 1) से अपने चौकीदार मृत्यु के बारे में पता चला । राज कुमारी (अभि. सा. 13) मृतक दिल बहादुर की विधवा है । उप निरीक्षक जसवीर सिंह (अभि. सा. 23) अन्वेषक अधिकारी है । जय राम (अभि. सा. 8) उपखंड मजिस्ट्रेट, चौपाल के कार्यालय में वरिष्ठ सहायक है, जिसने सीमांकन रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/क, जमाबंदी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ख और आकाश सजरा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ग साबित की है । भजन दास (अभि. सा. 9) क्षेत्र कानूनगो ने सीमांकन रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/क तैयार की । मेला राम (अभि. सा. 10) पटवारी है जिन्होंने सीमांकन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/क तैयार करने में भजन दास (अभि. सा. 9) के सहायता की । डा. संगीत ढिल्लन (अभि. सा. 14) ने मृतक दिल बहादुर के शव का शवपरीक्षण किया था और रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ग साबित की । विवेक **उर्फ** विक्की (अभि. सा. 15) से फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/क-24 के चित्र उभारे थे और सी. डी. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/ख-1 और प्रदर्श पी. डब्ल्यू.15/ख-2 भी तैयार किए थे । कांस्टेबल रजनीश (अभि. सा. 17) और एल. एच. सी. शमीम प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/ख के साक्षी हैं । सहायक उप निरीक्षक, कल्याण सिंह (अभि. सा. 16) ने सीमांकन प्राप्त किया था और भागतः अन्वेषण किया था । एच. एच. सी. वीरेन्द्र शर्मा (अभि. सा. 20) सूचना प्राप्त करने पर अन्वेषक

अधिकारी, उप निरीक्षक जसवीर सिंह (अभि. सा. 23) के साथ साक्षी के रूप में पुनः घटनास्थल पर पहुंचा । नसीब सिंह पाटिल (अभि. सा. 21) वैज्ञानिक अधिकारी राज्य न्यायालयिक प्रयोगशाला, जुंगा तथा उप निरीक्षक नरेन्द्र सिंह (अभि. सा. 22) ने डी. एन. ए. विश्लेषण की प्राप्ति पर पूरक चालान तैयार किया था जो प्रकृति में औपचारिक है ।

10. विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने मौखिक तथा दस्तावेजी साक्ष्य का मूल्यांकन किया जैसाकि इसमें ऊपर चर्चा की गई, यह निष्कर्ष निकाला है कि अभियोजन पक्ष ने सभी युक्तियुक्त संदेहों के परे दोनों अभियुक्त के विरुद्ध अपने पक्षकथन को साबित किया है और इस प्रकार, अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर को ठीक ही दोषसिद्ध किया है तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित किए जाने पर दंडादिष्ट किया गया जबकि भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन अभियुक्त सं. 2 नारायण सिंह पूर्वोक्त रीति में दंडादिष्ट किया गया ।

11. विचारण न्यायालय के अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश के निष्कर्षों पर दोनों अभियुक्तों ने व्यथित होकर अन्य बातों के साथ इन आधारों पर उसकी वैधता और विधिमान्यता को प्रश्नगत किया है कि विचारण न्यायालय ने अपराधों के लिए अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करके गलत किया है, उनके बारे में दंड संहिता की धारा 302 और भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन अपराध किया जाना अभिकथित है । वर्तमान मामले में कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध नहीं है । पारिस्थितिक साक्ष्य पर इस कारण से तनिक भी निर्भर नहीं हुआ जाता है कि परिस्थितियों में बदलाव तनिक भी पूरे नहीं हैं न इस तरह पेश किया गया साक्ष्य अभियुक्त की दोषिता के ही संगत है, अर्थात् इस पहलू पर कोई अन्य स्पष्टीकरण नहीं है कि अभियुक्त दोषी है । विचारण न्यायालय ने सभी सुस्थापित सिद्धांतों की उपेक्षा की है और अपीलार्थियों को मात्र अटकलबाजियों और अत्यधिक अग्राह्य तथा अविश्वसनीय साक्ष्य पर दोषसिद्ध किया गया है । अभियोजन पक्षकथन यह है कि दोषसिद्ध-अपीलार्थी हिकमत बहादुर, अभियुक्त सं. 1 ने तारीख 20 मई, 2014 को प्रकटीकरण कथन किया है और जिसके अनुसरण में बरामद की गई बंदूक की प्राप्ति अभियोजन साक्षियों के कथनों में मिथ्या प्रकट हुई है जिन्होंने साक्षी कठघरे में यह कथन किया है कि बंदूक घटना के दिन, अर्थात् 18 मई, 2014 को बरामद हुई थी । इसलिए यह तनिक भी साबित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी नारायण सिंह चौहान बंदूक का स्वामी था और यह

उसके सचेत और शारीरिक कब्जे से बरामद हुई थी । यह तनिक भी साबित नहीं हुआ है कि उक्त दोषसिद्ध व्यक्ति बंदूक का स्वामी था । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए पुनः ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि उक्त दोषसिद्ध व्यक्ति ने यह बात कही थी कि बंदूक उसके सह-अभियुक्त हिकमत बहादुर, अभियुक्त सं. 1 के पास उद्यान की रक्षा करने के लिए थी । बंदूक और दरांती की बरामदगी किए गए प्रकटीकरण, कथन को तनिक भी साबित नहीं किया गया है । यह भी दलील दी गई है कि अभियोजन पक्ष ने प्रथमतः मिथ्या कहानी गढ़ी और इसके पश्चात्, उक्त कहानी को समर्थन देने के लिए मिथ्या साक्ष्य सृजित करना तात्पर्यित है । चिकित्सा साक्ष्य से यह इंगित होता है कि मृतक की क्षति कारित होने के पश्चात् तत्काल मृत्यु हुई थी । कहानी में यह भी प्रकट है कि शव के शवपरीक्षण करने के दौरान मृतक के मुंह में एक सिक्का पाया गया था जिससे यह संकेत मिलता है कि किसी व्यक्ति द्वारा मृतक को घटनास्थल से मृत लाया गया था और वहां फेंक दिया गया । इस प्रकार, मृतक ऐसी स्थिति में नहीं था कि सतीश कुमार (अभि. सा. 1) और राकेश कुमार (अभि. सा. 7) को यह प्रकट करें कि वह अभियुक्त सं. 1 है जिसने उस पर बंदूक से गोली चलाई और तदुपरि उसके शरीर पर क्षति कारित हुई । मात्र यह परिस्थिति कि शव अभियुक्त सं. 1 के डेरे के नजदीक स्थान से बरामद हुआ था क्योंकि उसकी दोषिता साबित होना पर्याप्त नहीं है । अतः दोनों अपीलें मंजूर की जानी चाहिए और अभियुक्तों को उन आरोप से दोषमुक्त किया जाना चाहिए जो उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध विरचित किए गए ।

12. अभियुक्त व्यक्तियों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए परिस्थितियों पर बल दिया गया जो निम्न प्रकार है :–

(i) मस्त राम (अभि. सा. 12) और नारायण सिंह चौहान (अभि. सा. 2) दोनों फलोधानी हैं और ग्राम पोरान, तहसील चोपाल, जिला शिमला में एक दूसरे के समीप उनके उद्यान थे और कि जब मस्त राम (अभि. सा. 2) ने मृतक दिल बहादुर की सेवाएं चौकीदार के रूप में किराए पर ली थीं, नारायण सिंह चौहान, अभियुक्त सं. 2 और हिकमत बहादुर अभियुक्त सं. 1 अपने-अपने उद्यान की देखरेख करते थे ।

(ii) नारायण सिंह चौहान (अभि. सा. 2) बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क गोला-बारूद के बिना लाइसेंस रखा था और उद्यानों में ड्यूटी करते समय जंगली जानवरों से अपनी सुरक्षा करने के लिए उक्त

बंदूक अपने सह-अभियुक्त हिकमत बहादुर, चौकीदार को दी थी ।

(iii) तारीख 18 मई, 2014 को अभियुक्त सं. 1 और मृतक दिल बहादुर के बीच इस मुद्दे पर एक दूसरे से झगड़ा हुआ था कि मृतक अभियुक्त के पैसों का देनदार था और यह भी प्रकट है कि भीम बहादुर मृतक दिल बहादुर के भाई ने हिकमत बहादुर अभियुक्त सं. 1 की पत्नी का व्यपहरण किया था और उक्त अभियुक्त ने बंदूक, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क से मृतक पर गोली चलाई थी और तदुपरि, उसके शरीर पर क्षति कारित हुई । जब मृतक को घटना के स्थान से अस्पताल ले जाया जा रहा था तब क्षतियों के कारण दिल बहादुर की मृत्यु हो गई ।

(iv) तारीख 18 मई, 2014 को मस्त राम अभि. सा. 12 अपने पुत्र के चिकित्सा उपचार के संबंध में चंडीगढ़ रास्ते पर था तब 11.30 बजे के आसपास नारायण सिंह चौहान अभियुक्त सं. 2 से कॉल प्राप्त की जिन्होंने पहले अपने चौकीदार (अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर) तथा उक्त साक्षी के चौकीदार (मृतक दिल बहादुर) के बीच झगड़े होने के बारे में बताया था ।

(v) अभि. सा. 12 ने अपने मोबाइल फोन से दोनों के बीच झगड़े का कारण पता लगाने के लिए दिल बहादुर को फोन किया और बाद में यह बताया गया कि अभियुक्त हिकमत बहादुर द्वारा बंदूक से गोली चलाई गई थी ।

(vi) इस पर अभि. सा. 12 ने अपने साले अभि. सा. 1 सतीश कुमार से अपने मोबाइल फोन से घटनास्थल पर जाने के लिए कहा जो वहां गया और इस साक्षी को यह बताया कि दिल बहादुर की पहुंची हुई क्षति के कारण मृत्यु हो गई ।

(vii) अभि. सा. 12 ने पुलिस थाना, नेरवा के पुलिस को इस बारे में सूचना दी कि जिस पर अन्वेषक अधिकारी (अभि. सा. 23) उप निरीक्षक/थाना भारसाधक अधिकारी जसवीर सिंह अन्य पुलिस कर्मचारिवृंद के साथ गया और मृतक दिल बहादुर को रक्त के तालाब में मृत पाया जो स्थान अभियुक्त हिकमत बहादुर के डेरा के नजदीक था ।

(viii) पुलिस ने वहां पर एकत्र स्थानीय लोगों की सहायता से उसे उपचार के लिए सी. एच. सी. नेरवा ले जाने हेतु सड़क पर खड़े

यान में मृतक को अंतरित किया जिसकी क्षति के कारण जो उसे पहुंची थी, अस्पताल के रास्ते नेरवा पर मृत्यु हो गई ।

(ix) अभियुक्त तारीख 18 मई, 2014 को गिरफ्तार किया गया था और अभिरक्षा में रहते हुए उसने तारीख 20 मई, 2014 को प्रकटीकरण कथन प्रदर्श 18/ख किया और बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क और दरांत प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ड़ बरामद हुई थी ।

13. विद्वान् प्रतिरक्षा काउंसेल एस. एस. राठौर ने अति सफाई से यह दलील दी कि निचले न्यायालय ने पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर को दोषसिद्ध करके गलत किया है जो न तो निश्चायक है और न विश्वसनीय है तथा बल्कि प्रकृति में विभेदकारी है और न यह साबित करना पर्याप्त है कि साक्ष्य की शृंखला इतनी पूरी है, इसलिए, यह विश्वास करना पर्याप्त है कि वह अभियुक्त है जिसने अकेले अपराध किया है तथा इस निष्कर्ष से किसी तरह छुटकारा नहीं मिलता है कि सभी मानवीय संभाव्यताएं के अंतर्गत यह प्रकट है कि केवल अभियुक्त द्वारा अपराध किया गया था और न कि किसी और द्वारा/पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में मृतक की हत्या करने का हेतु की पर्याप्त महत्व की धारणा की जाती है और क्योंकि हेतु यदि कोई है जिस पर अभियुक्त सं. 1 ने मृतक दिल बहादुर की हत्या कर दी, साबित नहीं की गई है, दोषसिद्धि का कोई निष्कर्ष उसके विरुद्ध अभिलिखित नहीं किया जा सकता है । पुलिस को कभी भी यह शिकायत नहीं की गई थी कि मृतक ने अभियुक्त सं. 1 से 20,000/- रुपए उधार लिए थे और उक्त अभियुक्त की पत्नी का मृतक के भाई भीम बहादुर द्वारा व्यपहरण किया गया था । श्री राठौर के अनुसार इस कहानी का यह प्रभाव है कि वाद में यह पता चला है कि अपराध किए जाने के लिए मिथ्या रूप से अभियुक्त सं. 1 को संबंधित किया गया । श्री राठौर ने यह भी दलील दी है कि अभियुक्त सं. 1 के कहने पर बंदूक और दरांत की बरामदगी की बात पूर्णतया स्थापित की गई क्योंकि तथाकथित प्रकटीकरण कथन और उसके अनुसरण में बरामदगी के अभिलेखन को तनिक भी अभिलेख पर स्थापित नहीं किया गया है ।

14. अभियुक्त सं. 2 की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री सुरेन्द्र शर्मा ने यह दलील दी है कि ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क को उक्त अभियुक्त द्वारा स्वामित्व में लिया गया था । पुनः यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि यह कहा गया है कि उक्त अभियुक्त जिसने गोला-बारूद को क्रय किया और अपने सहअभियुक्त हिकमत बहादुर

को उसे मुहैया कराया था । इसलिए अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध पारित किए गए दोषसिद्धि के निष्कर्ष अटकलबाजियों के परिणाम हैं ।

15. दूसरी ओर, श्री डी. एस. नैनता, अपर महाधिवक्ता जिनके श्री वीरेन्द्र वर्मा, अपर महाधिवक्ता द्वारा सहायता की गई, अभियुक्त की ओर से संबोधित दलीलों को अस्वीकार करते हुए आक्षेपित निर्णय के समर्थन में यह दलील दी है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य अकाट्य और विश्वसनीय है, इसलिए, अपराधों के कारित किए जाने के लिए दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध करना पर्याप्त था जो उनके द्वारा किया जाना अभिकथित है । अतः, विद्वान् निचले न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 तथा भारतीय गोला-बारूद अधिनियम की धारा 25 के अधीन दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध करते समय कोई अवैधानिकता और अनियमितता नहीं बरती गई है ।

16. वर्तमान मामला प्रत्यक्ष साक्ष्य का मामला नहीं है बल्कि पारिस्थितिक साक्ष्य की ओर इंगित करता है जो इस न्यायालय पर दूभर कर्तव्य थोपता है कि भूसी से दाने अलग करके सच्चाई का निष्कर्ष निकाले । दूसरे शब्दों में, यह अवधारित किया जाना चाहिए कि मामले के तथ्यों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य जिनसे अभियुक्त के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित किया जाना गठित होता है या नहीं । तथापि, इन कठिन प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व यह वांछनीय है कि दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध गठित करने के लिए विधिक उपबंध का उल्लेख करें । इस बारे में किसी निर्देश या दंड संहिता की धारा 300 के अधीन उपबंधों को दिया जा सकता है । धारा आई. बी. आई. डी. के अनुसार आपराधिक मानव वध हत्या है प्रथमतः यदि अपराधी ने मृत्यु कारित करने के आशय के साथ कार्य किया है या दूसरी ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के पूरी जानकारी आशय के साथ होनी चाहिए कि इससे किसी व्यक्ति को मृत्यु कारित करने की संभावना है या तृतीय किसी व्यक्ति की शारीरिक क्षति कारित करने का आशय और ऐसी शारीरिक क्षति जिसके कारित करने का आशय हो, प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो या यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वह कार्य इतना आसन्न संकट है कि पूरी अधिसंभाव्यता है कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा जिसने मृत्यु कारित होना संभाव्य है ।

17. आपराधिक मानव वध को दंड संहिता की धारा 299 के अधीन

पारिभाषित किया गया है जो कोई मृत्यु कारित करने के आशय से, या ऐसी शारीरिक क्षति कारित हो जाना संभाव्य हो, या यह ज्ञान रखते हुए कि यह संभाव्य है कि यदि वह उस कार्य से मृत्यु कारित कर दे, कोई कार्य करके मृत्यु कारित कर देता है, वह अपराधिक मानव वध का अपराध करता है । आपराधिक मानव वध हत्या है यदि जिस कार्य से मृत्यु कारित होती है, जो मृत्यु कारित करने के आशय से किया जाता है । "आशय" और "जानकारी" में सकारात्मक मानसिक दृष्टिकोण की विद्यमानता आधार तत्व होते हैं जो भिन्न डिग्री हैं । **जागृति देवी** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय का इस बारे में समर्थन मिला है ।

18. हत्या की कोटि में आने वाले आपराधिक मानव वध के संघटक इस प्रकार है : (i) साआशय मृत्यु कारित करना और (ii) शारीरिक क्षति कारित होना जिससे संभवतः मृत्यु कारित हो जाए । क्या वर्तमान मामला यह है जहां कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह इंगित होता है कि अभियुक्त सं. 1 जिससे मृतक दिल बहादुर की मृत्यु कारित करने के लिए साआशय बंदूक से गोली चलाई और उसकी ओर से किया गया ऐसा कार्य हत्या की कोटि में आने वाला आपराधिक मानव वध की कोटि में आता है या नहीं, अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की पुनः मूल्यांकन करने की जरूरत है । तथापि, इससे पूर्व यह इंगित करना समुचित समझा गया है कि यदि अभियुक्त सं. 1 का मृतक की हत्या करने का हेतु था घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी की अपेक्षा नहीं की जा सकती, तथापि, जब हेतु गायब है वहां पर अभियोजन पक्ष के लिए यह अपेक्षित है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य की सहायता से अपने पक्षकथन को साबित करें ।

19. भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध किए जाने के निष्कर्ष पर पहुंचते हैं तो अभियुक्त सं. 2 नारायण सिंह चौहान के विरुद्ध यह अभिकथन किए गए थे कि बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क बिना किसी लाइसेंस के उसके कब्जे में थी तथा उसके पास गोला-बारूद भी बिना लाइसेंस का था । उसके बारे में अपराध भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25(1)(ख)(क) के अधीन कारित किया जाना अभिकथित है । इस प्रकार, ऐसा उल्लंघन अधिनियम की धारा 3 की रिष्टि के अंतर्गत आता है । इसलिए, अधिनियम की धारा 25 के अधीन अभियुक्त सं. 2 द्वारा दंडनीय अपराध किए जाने का निष्कर्ष निकालने के लिए

---

[1] ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2869.

आवश्यक संघटक इस प्रकार है कि वह बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क का स्वामी था और बिना लाइसेंस के भी गोला-बारूद रखता था । इस मामले में अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए साक्ष्य से पूर्व यह प्रतिपादित होता है ।

20. वर्तमान मामला पारिस्थितिक साक्ष्य का है, न्यायालय ने मामले को इसलिए रखा है कि उसे ऐसे साक्ष्य की विधिक अपेक्षा की रीति में मूल्यांकन किया जाना है । हम इस संबंध में **सुलेन्द्र** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय से समर्थन ले सकते हैं । इस निर्णय का सुसंगत सार को पुनः पेश किया गया है जो यहां पर इस प्रकार है :–

> "21. यह सुस्थापित है कि ऐसे किसी मामले में जो पारिस्थितिक साक्ष्य की ओर इंगित करता है, अभिलेख पर प्रकट परिस्थितियों से एकमात्र अभियुक्त की दोषिता सिद्ध होनी चाहिए और उसकी निर्दोषिता की उपधारणा की संभावना बाहर होनी चाहिए । विधि अनिर्णीत विषय नहीं है । क्योंकि हनुमंत गोबिन्द नरगुंदवार **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य, ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित सिद्धांत अधिकथित किया है –
>
> > 'यह सुस्मरणीय है कि ऐसे मामलों में जहां साक्ष्य पारिस्थितिक प्रकृति का है, परिस्थितियां जहां से दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाता है, प्रथमदृष्ट्या, पूर्ण रूप से सिद्ध होनी चाहिए और सभी तथ्य इस तरह सिद्ध होने चाहिए जो अभियुक्त की दोषिता के कल्पना के ही संगत होना चाहिए । पुनः परिस्थितियों को निश्चायक प्रकृति और प्रवृति का होना चाहिए और उन्हें ऐसा होना चाहिए जिससे कि प्रत्येक कल्पना अपवर्जित हो जाए परंतु एक प्रस्ताव साबित होना चाहिए । दूसरे शब्दों में साक्ष्य की शृंखला इतनी पूरी होनी चाहिए, अभियुक्त की निर्दोषिता के संगत निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार न छूटे और इस बारे में ऐसा होना चाहिए जिससे यह दर्शित हो कि सभी मानवीय संभाव्यताओं के भीतर कार्य अभियुक्त द्वारा किया जाना चाहिए (ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343) ।'

---

[1] नवीनतम एच. एल. जे. 2014 (हि. प्र.) 550.

22. पांच स्वर्णिम सिद्धांत जो पुनः शरद विरधी चंद शरद **बनाम** महाराष्ट्र राज्य, [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई है जो निम्न प्रकार है –

(i) वे परिस्थितियां जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, सिद्ध करनी होगी या की जानी चाहिए न केवल पूरी तरह सिद्ध हो जानी चाहिए ।

(ii) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिए अर्थात् इस बात के सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिए ;

(iii) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिए ;

(iv) उन्हें साबित की जाने वाली हर उपकल्पना के सिवाय हम संभावित उस कल्पना को अपवर्जित करनी चाहिए, और

(v) साक्ष्य की शृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त को निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधर न बचे और उससे यह दर्शित हो कि संपूर्ण मानवीय संभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा"..... ।

21. **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **रेया उरव** उर्फ **अजय**[1], वाले मामले में इस पीठ द्वारा पुनः दिए गए निर्णय में उसी तरह के मामले की तर्कणा दी है । इस निर्णय का परिशीलन करने पर इस प्रकार है :–

"10. जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है और इस प्रकार, वर्तमान मामला पारिस्थितिक साक्ष्य की ओर इंगित करता है । इस भांति के मामलों में विधि की सुस्थिर प्रतिपादना के अनुसार, अभिलेख पर प्रकट परिस्थितियों की शृंखला सभी तरह से पूरी होनी चाहिए जिससे केवल यह निष्कर्ष निकालना चाहिए कि वह अकेले अभियुक्त है जिसने अपराध किया है ।

---

[1] आई. एल. आर. 2016 (5) हि. प्र. 213.

पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर अपराधी के विरुद्ध दोषसिद्धि के निष्कर्षों अभिलिखित करने के लिए न्यायालय को समर्थ बनाने के लिए आवश्यक शर्तें, देवेन्द्र सिंह **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य, 1990 (1) शिमला एल. सी. 82, वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय इस प्रकार है –

> 1. परिस्थितियां जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाता है, उन्हें पूरी तरह सिद्ध होना चाहिए ।
>
> 2. इस तरह सिद्ध किए गए तथ्य, अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के ही संगत होनी चाहिए अर्थात्, उन्हें अभियुक्त की दोषिता के सिवाय कोई अन्य कल्पना का स्पष्टीकरण नहीं दिया जाना चाहिए ।
>
> 3. परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृति की होनी चाहिए।
>
> 4. उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाय हम संभावित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए ।
>
> 5. साक्ष्य की शृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि संपूर्ण मानवीय संभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा ।

11. अखिलेश हलाम **बनाम** बिहार राज्य, (1995) (सप्ली.) 3 एस. सी. सी. 357 वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया है कि अभियोजन के लिए केवल यह अपेक्षित नहीं है कि अलग-अलग और प्रत्येक परिस्थिति साबित करें जैसाकि अभियुक्त के विरुद्ध अवलंब लिया गया, परंतु यह भी है कि इन परिस्थितियों में दिए गए साक्ष्य की शृंखला इतनी पूरी होनी चाहिए जिससे अभियुक्त की निर्दोषिता के संगत निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार नहीं छोड़ता है । इस निर्णय का सुसंगत भाग निम्न प्रकार है –

> '..... यह कहा जा सकता है कि पारिस्थितिक साक्ष्य पर किसी व्यक्ति की दोषसिद्धि के लिए सबूत के मानक अपेक्षित

है, अब इस न्यायालय के गंभीर प्रामाणिक निर्णय तय किए जाते हैं । इस न्यायालय द्वारा निरुपति मानक के अनुसार अभियोजन पक्ष मामले के समर्थन द्वारा अवलंबित परिस्थितियों को न केवल पूर्ण रूप से सिद्ध किया जाना चाहिए बल्कि उन परिस्थितियों से प्रकट साक्ष्य इतनी पूरी होनी चाहिए जिससे कि अभियुक्त की निर्दोषिता के संगत निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार नहीं छोड़ता है, परिस्थितियां जिनसे अभियुक्त की दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाता है, अभियुक्त की दोषिता के कल्पना के ही निश्चायक प्रकृति और संगत होनी चाहिए और उसे अभियुक्त की दोषिता के सिवाय किसी अन्य कल्पना द्वारा स्पष्टीकरण दिए जाने में समर्थ नहीं होना चाहिए और जब सभी संचयी परिस्थितियों को केवल यह अप्रतिरोध्य निष्कर्ष के लिए एक साथ लिया जाता है कि अभियुक्त ही अपराध का कर्ता है ।'".....

22. अभियुक्त व्यक्तियों की दोषिता या निर्दोषिता का ऊपर उद्धृत निर्णय में अधिकथित परिधियों तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के प्रकाश में अवधारित किया जाना है । हमने पहले ही ब्यौरेवार परिस्थितियों का उल्लेख किया है जैसाकि अभियोजन पक्ष द्वारा दोनों अभियुक्त व्यक्तियों के संबंध में उनकी दोषिता को सिद्ध करने के लिए अवलंब लिया गया । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के प्रकाश में इस बारे में अब यह भी देखा जाना चाहिए कि क्या इन परिस्थितियों से प्रकट साक्ष्य की शृंखला इतनी पूरी है जिससे कि अभियुक्त की निर्दोषिता के संगत निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार न बचे और इससे यह दर्शित होगा कि सभी संभाव्यताएं यह है कि अकेले अभियुक्त सं. 1 जिसने बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क से मृतक दिल बहादुर की हत्या की जो अभियोजन पक्षकथन के अनुसार बंदूक का स्वामी है और उसे अभियुक्त सं. 2 द्वारा अप्राधिकृत रूप से कब्जे में रखा गया था और यह बंदूक जंगली जानवरों से रक्षा के लिए अभियुक्त सं. 1 को मुहैया कराई गई थी ।

23. इस पृष्ठभूमि में अब हम एक-एक करके इस मामले में प्रकट परिस्थितियों पर चर्चा करते हैं ।

परिस्थिति सं. 1

24. नारायण सिंह चौहान (अभियुक्त सं. 2) और मस्त राम (अभि.

सा. 12) के उद्यान के बारे में कोई संविवाद नहीं है जो उद्यान एक दूसरे के समीप ग्राम पौरान में स्थित हैं । अभियोजन पक्षकथन के इस आशय को अभि. सा. 12 के परिसाक्ष्य से समर्थन मिला है । चौकीदार के रूप में मृतक दिल बहादुर की सेवाओं के बारे में पुनः कोई विवाद नहीं है जिसे मस्त राम (अभि. सा. 12) द्वारा अपने उद्यान की देखभाल करने तथा पहरेदारी करने के लिए भाड़े पर रखा गया था जबकि अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर अपने सह-अभियुक्त नारायण सिंह चौहान के साथ था । उद्यान एक दूसरे के समीप थे । अभियोजन पक्षकथन के इस भाग को भी दिल बहादुर की विधवा श्रीमती राज कुमारी (अभि. सा. 13) के परिसाक्ष्य से भी समर्थन मिलता है । अतः, इस परिस्थिति पर अभियोजन पक्ष द्वारा बल दिया गया है जिसे अभिलेख पर सिद्ध किया गया है ।

परिस्थिति सं. 2

25. अभियोजन पक्षकथन के अनुसार अभियुक्त सं. 2 के पास बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क अप्राधिकृत रूप से कब्जे में रखी गई थी, क्योंकि उसके पास इस संबंध में कोई लाइसेंस नहीं था । उसके पास बिना लाइसेंस के गोला-बारूद भी था, इसलिए ऐसा करना विधि विरुद्ध है । अभियोजन पक्षकथन के अनुसार उद्यानों में ड्यूटी करते समय जंगली जानवरों से अपनी रक्षा करने के लिए अभियुक्त सं. 2 को बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क दी गई थी और हिकमत बहादुर अभियुक्त सं. 1 को भी गोला-बारूद मुहैया कराया गया था । तथापि, यह दर्शित करने के लिए कोई एकल साक्ष्य नहीं है कि बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क नारायण सिंह चौहान (अभियुक्त सं. 2) से संबंधित है । अपने पक्षकथन के इस पहलू को साबित करने के लिए तारीख 21 मई, 2014 को अन्वेषण के दौरान अभियुक्त नारायण सिंह चौहान से तथाकथित पूछताछ का अवलंब लिया गया जिसमें उसका यह प्रकट किया जाना अभिकथित है कि अपने से संबंधित बंदूक उसके द्वारा अपने चौकीदार हिकमत बहादुर को दी गई थी । अन्वेषक अधिकारी, उप निरीक्षक जसवीर सिंह (अभि. सा. 23) ने कठघरे में खड़े होकर यद्यपि अपने मुख्य प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया गया है कि अभियुक्त सं. 2 ने अपनी पूछताछ के दौरान यह बताया है कि बंदूक उससे संबंधित है और कि इसे जंगली जानवरों से अपनी रक्षा के लिए बुलेट सहित अभियुक्त सं. 2 के सुपुर्द किया गया था । यह भी प्रकट है कि अभियुक्त सं. 2 ने यह भी प्रकट किया है कि बंदूक उसके दादा रामिया राम की थी, तथापि, जब प्रतिपरीक्षा की गई तब यह स्वीकार किया गया है

कि अभियुक्त सं. 2 का कोई कथन अभिलिखित नहीं किया गया था जब उसे तारीख 21 मई, 2014 को गिरफ्तार किया गया था और उसने किसी भी व्यक्ति का भी कथन अभिलिखित नहीं किया कि बंदूक अभियुक्त सं. 2 से संबंधित है । यह बात आश्चर्यचकित करने वाला है कि क्या अभियुक्त सं. 2 द्वारा यह प्रकट किया गया है कि बंदूक उसके दादा की है जो वह व्यक्ति था जिसने अभियुक्त सं. 1 को अपनी सुरक्षा के लिए दी गई थी, अन्वेषक अधिकारी ने अभियोजन पक्षकथन के इस भाग का भी अन्वेषण किया होगा और यदि उसने ऐसा किया तो यह दर्शित करने के लिए साक्ष्य आसानी से एकत्र किया होगा कि बंदूक अभियुक्त सं. 2 की थी । उक्त अभियुक्त ने अपनी पूछताछ के दौरान यह कहानी बताई कि बंदूक उससे संबंधित है, यह बात अन्वेषक अधिकारी के विवेक से संबंधित है जिसने किसी भी तरह से भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध किए जाने में अभियुक्त सं. 2 को मिथ्या रूप से आलिप्त किया है ।

26. तथ्य को देखते हुए वर्तमान मामला ऐसा है जिसमें अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध कोई साक्ष्य नहीं है और उसे अधिनियम की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध किए जाने के लिए गलत रूप से दोषसिद्ध किया गया है । यद्यपि, आरोपित निर्णय में दुबारा यह मत व्यक्त किया है कि स्वर्णिय सिद्धांत जो आपराधिक मामलों में न्याय के प्रशासन को चलाने के माध्यम है, यह है कि अभियुक्त के बारे में तब तक निर्दोष होने की उपधारणा की जानी चाहिए जब तक कि अभियोजन सभी युक्तियुक्त संदेह के परे उसके विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में समर्थ न हों ।

27. तथापि, उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष वर्तमान मामले में विधि के ऐसे नियम को लागू करने में बुरी तरह से विफल हुआ है और अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध अभिलेख पर किसी साक्ष्य के उपलब्ध हुए बिना अभिलिखित निष्कर्षों के प्रतिकूल है ।

परिस्थिति सं. 3

28. वह अभि. सा. 12 मस्त राम है जिन्होंने वर्तमान मामले को गति दी क्योंकि उसके बारे में यह अभिकथित है कि उसने न केवल तारीख 18 मई, 2014 को हिकमत बहादुर (अभियुक्त सं. 1) और मृतक दिल बहादुर के बीच अभिकथित झगड़े (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क) के बारे में सतीश कुमार (अभि. सा. 1) को सूचना दी, तथापि, नामों का उल्लेख नहीं किया बल्कि

"गोरखा" शब्द का प्रयोग किया, परंतु पुलिस थाना नेरवा के पुलिस को भी सूचना दी थी । नारायण सिंह चौहान (अभियुक्त सं. 2) इस बारे में सूचना प्राप्त की गई, उस अभिकथित सूचना के परिणामस्वरूप ऐसा किया गया । अभियोजन पक्षकथन के इस भाग को साबित करने के लिए अन्वेषक अधिकारी के लिए यह अपेक्षित था कि नारायण सिंह चौहान (अभियुक्त सं. 2) से मस्त राम (अभि. सा. 12) द्वारा प्राप्त की गई तथाकथित फोन कॉल के ब्यौरे प्राप्त करता जिसके बारे में यह अभिकथित है कि उसने मृतक दिल बहादुर को मोबाइल फोन किया, उसके पश्चात् अपने साले सतीश कुमार (अभि. सा. 1) को कॉल की ।

29. तथ्य की दृष्टि से, क्या ऐसा वैज्ञानिक अन्वेषण किया गया, जिससे अच्छे परिणाम निकाले जाएंगे । ऐसे साक्ष्य के अभाव में जिसमें हमारी राय यह है कि अभियोजन पक्षकथन के इस पहलू के सभी संदेह को निकाल कर आसानी से उन बातों को एकत्र किया जा सकता है कि हम मस्त राम (अभि. सा. 12) और सतीश कुमार (अभि. सा. 1) के मौखिक परिसाक्ष्य के आधार पर अपने को सहमत करने में समर्थ नहीं है कि अभियुक्त सं. 1 और मृतक के बीच झगड़ा हुआ था और बाद में उसे जो क्षतियां हुईं, उनके कारण उसकी मृत्यु हो गई । अतः किसी भी कल्पना के आधार यह विश्वास नहीं किया जा सकता है कि अभियुक्त नारायण सिंह चौहान ने अभियुक्त सं. 1 और मृतक दिल बहादुर के बीच हुए झगड़े के बारे में अभि. सा. 12 को सूचना दी थी । हम इस बारे में यह समझने में असमर्थ हैं कि मृतक को की गई कॉल को उसके द्वारा कैसे सुना गया जबकि उसके शरीर पर बुलेट से क्षति हुई थी । अतः यह बात झूठी है कि मृतक ने मस्त राम (अभि. सा. 12) को अभियुक्त सं. 1 द्वारा बंदूक की गोली से क्षति पहुंचाने के बारे में सूचना दी । सतीश कुमार (अभि. सा. 1) का कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन लेखबद्ध किया गया, उसमें अभियुक्त हिकमत बहादुर और मृतक दिल बहादुर के बीच झगड़े होने का कोई उल्लेख नहीं है । वस्तुतः उससे यह प्रकट है कि मस्त राम (अभि. सा. 12) ने दो गौरखा के बीच झगड़ा होने के बारे में सतीश कुमार (अभि. सा. 1) को सूचित किया था । इसलिए, ऐसे साक्ष्य से यह विश्वास करना कठिन है कि अभियुक्त सं. 1 और मृतक के बीच झगड़ा हुआ था । यह सही है कि चिकित्सा साक्ष्य के अनुसार अर्थात् शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ग तथा डा. ध्रुव गुप्ता (अभि. सा. 5) के कथन के अनुसार बंदूक से की गई बूलेट क्षति हृदय के

नजदीक की जो भाग शरीर का महत्वपूर्ण भाग है, अभि. सा. 5 के अनुसार अभियुक्त रक्त बहाने के लिए जिम्मेदार था । तथापि, ऐसी क्षति प्राप्त करने के 1½ - 2 घंटे के भीतर चिकित्सा सहायता उपलब्ध न होने की दशा में आहत की मृत्यु की संभावना को अस्वीकार नहीं किया जाता है । डा. ध्रुव गुप्ता ने यह भी स्वीकार किया है कि आहत मध्यस्थता की अवधि में अपनी होश-हवास खो चुका होगा, इससे यह अभिप्रेत है कि मृतक के शरीर पर उक्त क्षति पहुंचने के 1½ - 2 घंटे के भीतर मृत्यु हो गई होगी और उस अवधि के दौरान अर्थात् क्षति प्राप्त करने के तत्काल पश्चात् अपनी मृत्यु तक वह बेहोश रहा होगा । अतः, ऐसी स्थिति में अभियोजन पक्षकथन यह है कि उसने मोबाइल फोन पर मस्त राम (अभि. सा. 12) को सूचना दी कि वह अभियुक्त सं. 1 है जिसने उसके शरीर पर बुलेट से क्षति कारित की, इस बात पर किसी प्रकार भी सत्य होने का विश्वास नहीं किया जा सकता है । दो गौरखा के बीच लड़ाई झगड़ा के समय का पुलिस द्वारा किए गए अन्वेषण में कही भी प्रकट नहीं किया गया है और हमें यह प्रतीत होता है कि इस बात को जानबूझकर छुपा दिया गया, डाक्टर का दल जिन्होंने उसके शव की शव-परीक्षा की, मृतक के मुंह में पहले से ही सिक्का घुसेड़ा हुआ पाया गया था । इसलिए, मृतक की क्षति प्राप्त करने से 1½ - 2 घंटे के भीतर मृत्यु हुई होगी, इसलिए, जब मस्त राम (अभि. सा. 12) के बारे में अपने मोबाइल फोन से घंटी देने का अभिकथन किया गया तब वह जिंदा नहीं था और सतीश कुमार (अभि. सा. 1) घटनास्थल पर पहुंचा । मृतक का मोबाइल नंबर क्या था और कॉल ब्यौरे का अभाव होने पर पुनः यह नहीं कहा जा सकता है कि अभि. सा. 12 ने मृतक को कॉल की थी जिसने उत्तर में यह बताया कि वह अभियुक्त है जिसने उस पर गोली चलाई । इस बारे में कहानी से यह प्रकट है कि उसे गढ़ा गया है ।

30. अभियुक्त सं. 1 के डेरा के नजदीक मात्र शव का पड़ा होना से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि वह अकेले अभियुक्त सं. 1 है न कि दूसरा जिसने मृतक की हत्या की थी । सतीश कुमार (अभि. सा.1) और सानीव (जिसकी परीक्षा नहीं की गई) के पास कोई ऐसा अवसर नहीं था कि उनकी मृतक से वार्तालाप हों और यह सूचित करें कि वह अभियुक्त सं. 1 है जिसने मृतक पर बंदूक से गोली चलाई थी । राकेश कुमार (अभि. सा. 7) ने हमें यह भी बताया कि वह घटनास्थल पर अभि. सा. 1 के साथ गया था । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन अभिलिखित सतीश कुमार (अभि. सा. 1) के कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू.

1/क में भी यह उल्लेख नहीं है और न इस साक्षी ने साक्षी कठघरे में इस बात का कथन किया है ।

31. तथाकथित हेतु को साबित करने कि मृतक दिल बहादुर ने अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर को 20,000/- रुपए ऋण दिया था और मृतक का भाई अर्थात् भीम बहादुर ने उक्त अभियुक्त की पत्नी का व्यपहरण किया था, इस बात पर मस्त राम (अभि. सा. 12) के परिसाक्ष्य का अवलंब लिया गया । इस साक्षी ने केवल हमें यह बताया कि वह अभियुक्त सं. 1 है जिसने मृतक दिल बहादुर से 20,000/- रुपए की राशि ऋण के रूप में ली थी और मृतक अपने पैसों को लेने के लिए अभियुक्त के पास गया था । मस्त राम (अभि. सा. 12) ने पहले ही यह मत व्यक्त किया कि सही अभिसाक्ष्य नहीं दिया है । अन्यथा भी, जबकि उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में इस बात पर अपनी अनभिज्ञता अभिव्यक्त की है कि अभियुक्त हिकमत बहादुर ने दिल बहादुर से अग्रिम पैसा दिया था या भीम बहादुर ने अभियुक्त सं. 1 की पत्नी का अपहरण किया था । उसने अभियुक्त सं. 1 और मृतक के बीच ईर्ष्यामूलक संबंधों के बारे में अपने अनभिज्ञता भी अभिव्यक्त की है । अतः, मस्त राम (अभि. सा. 12) के परिसाक्ष्य से वर्तमान मामले में कोई सहायता नहीं मिलती है । एक दूसरे साक्षी की अभियोजन पक्षकथन के इस भाग को सिद्ध करने के लिए परीक्षा की गई जो श्रीमती राजकुमारी (अभि. सा. 13) है, दिल बहादुर की विधवा है । यद्यपि, उसने साक्षी कठघरे में खड़ा होकर यह अभिसाक्ष्य दिया है कि अभियुक्त ने मृतक से 20,000/- रुपए की राशि ऋण ली थी और मृतक उक्त राशि को एकत्र करने के लिए अभियुक्त के पास गया था और यह भी प्रकट हुआ कि मृतक का भाई भीम बहादुर द्वारा अभियुक्त की पत्नी का अपहरण किया था । तथापि, जब वह जैसाकि उसका वृत्तांत है, नजदीक के जंगल से गुच्छी लेने के लिए डेरा से दूर गई थी, वह कैसे यह कह सकती है कि उसका मृतक पति हिकमत बहादुर से पैसे लेने के लिए गया था । अन्यथा भी, वह मृतक था जिसने अभियुक्त सं. 1 को पैसे ऋण के रूप में लिया था, तब पहले के पास ऐसा कोई अवसर नहीं था कि वह बाद में पैसा लेने गया था ।

32. उसे प्रतिपरीक्षा में यह सुझाव दिया गया था कि उसका पति दूसरे नेपाली के डेरे में बैठा हुआ था और शराब पी रहा था और कि वह शराबी किस्म का व्यक्ति था, गलत करने से इनकार करता था । तथापि, शवपरीक्षण रिपोर्ट में उसके रक्त में एल्कोहल की मात्रा 219 मिली ग्राम

पाई गई थी । इसलिए, श्रीमती राज कुमारी (अभि. सा. 13) भी विश्वसनीय साक्षी नहीं है । अन्यथा भी, वह मृतक की पत्नी रहते हुए हितबद्ध साक्षी है । इसलिए, उसके परिसाक्ष्य का अवलंब नहीं लिया जा सकता है ।

33. पूर्वोक्त रीति में साक्ष्य के पुनः मूल्यांकन को ध्यान में रखते हुए, यह पूर्णतया स्पष्ट है कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में बुरी तरह से विफल हुआ है कि अभियुक्त मृतक से ईर्ष्या रखता था और वह व्यक्ति था जिसने बाद में बंदूक की गोली चलाई थी और तदुपरि उसकी मृत्यु हुई ।

परिस्थिति सं. 4

34. जैसाकि पहले ही दूरभाष कॉल के ब्यौरे के अभाव में प्रश्न सं. 1 पर चर्चा करते हुए मत व्यक्त किया गया, उस पर यह विश्वास नहीं किया जा सकता है कि नारायण सिंह चौहान अभियुक्त सं. 2 ने मस्त राम अभि. सा. 12 को यह बताया था कि अभियुक्त सं. 1 और मृतक दोनों झगड़ रहे थे और अभियुक्त ने मृतक पर बंदूक से गोली चलाई थी । पुनः ऐसा कोई साक्ष्य प्रकट नहीं हुआ है कि अभि. सा. 12 अपने पुत्र के चिकित्सीय उपचार के संबंध में चंडीगढ़ रास्ते पर था । यदि ऐसा था तो अभियोजन पक्ष मस्त राम अभि. सा. 12 के पुत्र के उपचार के अभिलेख आसानी से साक्ष्य में पेश कर सकता । अतः, अभियोजन पक्षकथन का यह प्रभाव है कि उसने हिकमत बहादुर (अभियुक्त सं. 1) को मिथ्या रूप से आलिप्त करने के लिए दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मामला गढ़ा गया है ।

परिस्थिति सं. 5

35. परिस्थिति सं. 5 (उपरोक्त) पर चर्चा करते हुए, पहले ही अभिनिर्धारित किया गया है कि कॉल ब्यौरे के अभाव में किसी कल्पना के आधार पर यह विश्वास नहीं किया जा सकता है कि मस्त राम (अभि. सा. 12) को अभियुक्त और मृतक के बीच झगड़े के बारे में पता चलने पर अपने मोबाइल फोन से उक्त झगड़े का कारण का पता लगाने मृतक को कॉल की थी और कि मृतक ने यह सूचना दी कि वह अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर है जिसने उस पर गोली चलाई थी और उसे क्षति पहुंची । अभिलेख पर उपलब्ध चिकित्सा साक्ष्य के आधार पर हमारे द्वारा यह भी मत व्यक्त किया गया कि क्षति की प्रकृति को देखते हुए जो मृतक को पहुंची जिससे उसकी क्षति पहुंचने पर 1½ - 2 घंटे में मृत्यु हो सकती है और उसी बीच में, वह बेहोश रहा होगा । इसलिए, यह विश्वास करना कठिन है

कि मस्त राम (अभि. सा. 12) द्वारा मृतक दिल बहादुर को काल की गई थी जिस पर बाद में ध्यान दिया गया था, उसने पहले उस रीति में प्रकट किया जिसमें उसके द्वारा क्षति प्राप्त की गई । इस संबंध में अभियोजन पक्षकथन को तनिक भी साबित नहीं किया गया है ।

परिस्थिति सं. 6

36. पुनः यह संदेहास्पद है कि मस्त राम (अभि. सा. 12) ने शीघ्रातिशीघ्र घटनास्थल पर जाने के लिए सतीश कुमार (अभि. सा. 1) को कहा और दो गोरखों के बीच हुए झगड़े के बारे में पता लगाए । यद्यपि, इस बात के सत्य होने पर विश्वास किया गया कि सतीश कुमार (अभि. सा. 1) ने घटनास्थल पर पहुंचकर वहां पर प्रबल परिस्थितियों के प्रभाव को देखा, उसके पश्चात् मस्त राम (अभि. सा. 12) को यह बताया कि मृतक अपने शरीर पर पहुंची हुई क्षति के कारण मृत्यु के कगार पर पहुंच गया । इसलिए, अभियोजन पक्षकथन यह है कि दिल बहादुर ने सतीश कुमार अभि. सा. 1 को यह बताया कि अभियुक्त सं. 1 ने उस पर बंदूक से गोली चलाई, इस मामले में मिथ्या रूप से मात्र अभियुक्त को फंसाने के लिए झूठ गढ़ा गया । इस आधार पर अभियोजन पक्षकथन में गिरावट आई है ।

परिस्थिति सं. 7 और 8

37. काल के ब्यौरे से पुनः यह दर्शित होता है कि मस्त राम (अभि. सा. 12) ने पुलिस थाना, नेरवा पर यह काल की थी जिस बात को साक्ष्य में प्रकट नहीं किया गया, इसलिए अभियोजन पक्षकथन के इस भाग पर सही होने के परिप्रेक्ष्य में विश्वास करना कठिन है । इस संबंध में रपट रोजनामचा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/च पर बल दिया गया है । यद्यपि, अभियोजन पक्षकथन के इस भाग पर सही होने का विश्वास किया जाता है, इस बात में कोई भिन्नता प्रकट नहीं होती है क्योंकि घटनास्थल पर पुलिस के पहुंचने की संभावना को अस्वीकार नहीं किया जाता है क्योंकि दिल बहादुर को वहां पर गोली मारी गई थी । तथापि, वह एकमात्र अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर है जिसने मृतक दिल बहादुर की हत्या की जिस बात को तनिक भी अभिलेख पर साबित नहीं किया गया है । चूंकि मृतक का शवपरीक्षण करते समय उसके मुंह में एक सिक्का पाया गया था, इसलिए, मृतक की पहले ही मृत्यु होने की संभावना को अस्वीकार नहीं किया जा सकता और अभियोजन पक्षकथन यह है कि उसे पुलिस

द्वारा नेरवा अस्पताल पर भेजा गया था, यह बात सही प्रतीत होती है ।

परिस्थिति सं. 9

38. यह प्रकटीकरण कथन प्रदर्श 18/ख है जिसे अभियुक्त द्वारा एल. एच. सी./एम. एच. सी. शमीम (अभि. सा. 18) तथा एच. एच. सी. वीरेन्द्र कुमार शर्मा (अभि.सा. 20) की मौजूदगी में किया जाना अभिकथित है जिसमें अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर की ओर से इसके अनुसरण में बंदूक तथा दरांत की बरामदगी की बात प्रकट की है, इस बात का अभियुक्त सं. 1 के विरुद्ध अत्यधिक अवलंब लिया गया है । प्रकटीकरण कथन तारीख 20 मई, 2014 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/ख जिसे इस रीति में अभिलिखित किया गया जैसाकि अभियोजन पक्ष द्वारा दावा किया गया, तथापि, अत्यधिक संदेहपूर्ण है । इसी तरह, जिसके आधार पर बंदूक प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/क और दरांत प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ड़ की बरामदगी संदेहपूर्ण है क्योंकि उप निरीक्षक जसवीर सिंह (अभि. सा. 23) के वृतांत के अनुसार अभियुक्त को तारीख 18 मई, 2014 को गिरफ्तार किया गया था और बंदूक और दरांत की बरामदगी उसी दिन भी हुई थी । उक्त साक्षियों के परिसाक्ष्य से अभियुक्त सं. 1 के कहने पर अपराध के गोला-बारूद अर्थात् बंदूक और दरांत की बरामदगी पर संपूर्ण अभियोजन पक्षकथन नष्ट हो गया है । अन्यथा भी रघुवीर सिंह (अभि. सा. 2) के परिसाक्ष्य के फलस्वरूप अभिलेख पर आए हुए साक्ष्य के अनुसार, वह स्थान जहां से बंदूक बरामद हुई थी, रास्ते या आम रास्ते के समीप है, लोग मौसम में गुच्छी (जंगली मशरुम) लेने के लिए उस रास्ते गुजरा करते थे । इसलिए, यह विश्वास करना कठिन है कि अभियुक्त द्वारा अपराध किए जाने के पश्चात् बंदूक को छुपाया गया था । इसी तरह, अभिकथित दरांत अभियुक्त के चारपाई के तकिए के नीचे छुपाई हुई पाई गई थी । इस प्रकार, दरांत जैसे गोला-बारूद को देहाती क्षेत्रों में चारपाई पर तकिए के नीचे रखा करते हैं । इसलिए, यह भी विश्वास नहीं किया जा सकता है कि अभियुक्त सं. 1 द्वारा अपराध किए जाने के पश्चात् दरांत छुपाई गई थी । यह काफी रोचक है कि रघुवीर सिंह (अभि. सा. 2) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि प्रश्नगत बंदूक नारायण सिंह चौहान अभियुक्त सं. 2 के उद्यान में उसके द्वारा नहीं देखी गई थी । अतः यह निष्कर्ष निकालना अनुचित नहीं होगा कि न तो अभियुक्त सं. 1 का प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 18/ख पुलिस द्वारा अभिलिखित किया गया था और न उसके आधार पर बंदूक और दरांत की बरामदगी हुई । विद्वान् विचारण न्यायाधीश अभिलेख

पर उपलब्ध साक्ष्य के मुकाबले अभियोजन पक्षकथन के इस भाग का मूल्यांकन करने में विफल हुआ है ।

39. इसमें ऊपर चर्चा को ध्यान में रखते हुए वर्तमान मामला इस प्रकार है कि जहां अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध बल देने वाली परिस्थितियां अभिलेख पर समाधानप्रद रूप से सिद्ध नहीं हुई हैं और न अभियुक्त की दोषिता के कल्पना के ही संगत है और न प्रकृति में निश्चायक है/साक्ष्य की शृंखला भी पूरी नहीं है जिससे कि अभियुक्त की निर्दोषिता असंगत निष्कर्ष निकालने के लिए कोई युक्तियुक्त आधार न बचे और न्यायालय के अंतःकरण का समाधान होना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में वह अभियुक्त सं. 1 है जिसने मृतक दिल बहादुर को बंदूक प्रदर्श पी. 5 की गोली से मारा था और कि उक्त बंदूक अभियुक्त सं. 2 की थी जिसने अभियुक्त सं. 1 को उद्यान में ड्यूटी करते समय जंगली जानवरों से अपनी रक्षा करने के लिए गोला-बारूद सहित उक्त बंदूक दी थी ।

40. यद्यपि, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने आक्षेपित निर्णय में यह उल्लेख किया है कि आपराधिक विचारण परी की कहानी की भांति नहीं है और अभियोजन पक्ष को विधिक रूप से ग्राह्य साक्ष्य की बुनियाद पर अपने पक्षकथन का निर्माण करना चाहिए । यह भी प्रकट है कि अपराध वीभत्स हो सकता है और मानवीय संवेदना में विद्रोह हो सकता है परंतु अभियुक्त को विधिक साक्ष्य पर ही दोषसिद्ध किया जा सकता है न कि अटकलबाजियों पर । तथापि, विचारण न्यायाधीश ने ऐसे सिद्धांतों पर टिप्पण किया है जिसका अवलंब नहीं लिया गया और इसके विपरीत अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध दोषसिद्धि के निष्कर्ष तकनीकी रूप से अभिलिखित किए गए हैं जिसमें विवेक का प्रयोग नहीं किया गया है ।

41. यह भी कथन किया गया है कि मृतक दिल बहादुर की बुलेट क्षति के कारण मृत्यु हुई थी जो उसे उसके शरीर पर लगी । तथापि, सभी युक्तियुक्त संदेह के परे इसे साबित नहीं किया गया है कि वह केवल अभियुक्त हिकमत बहादुर था जिसने बंदूक से गोली चलाई और दिल बहादुर की क्षति के कारण मृत्यु हो गई जो उसे उक्त अभियुक्त के हाथों लगी । शवपरीक्षण रिपोर्ट के अनुसार मृतक शराब पीया हुआ पाया गया था । इसलिए, यह यथोचित रूप से संभव है कि उसने किसी अन्य स्थान पर शराब पी थी । यह स्थान दूसरे गोरखों के डेरे का हो सकता है, जैसाकि अभियुक्त ने अपनी-अपनी प्रतिरक्षा में अभिवाक् किया है ।

42. अकाट्य और विश्वसनीय साक्ष्य के अभाव में, यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त सं. 1 द्वारा अकेले मृतक को घातक क्षति पहुंचाई थी । तथाकथित हेतु किए मृतक ने 25,000/- रुपए अभियुक्त सं. 1 से ऋण लिया था और जब वह उक्त अभियुक्त के पास उक्त पैसा को एकत्र कर गया था, यह बात तनिक भी स्पष्ट नहीं है कि पुलिस द्वारा मामले के इस पहलू पर अन्वेषण के दौरान पूछताछ क्यों नहीं की गई । अभियोजन पक्षकथन यह है कि मृतक का भाई भीम बहादुर ने अभियुक्त सं. 1 की पत्नी का व्यपहरण किया था, सत्याभासी नहीं है और न अन्वेषण के दौरान विचार किया गया । इसलिए, अभियुक्त का मृतक की हत्या करके भाग गया हेतु तनिक भी साबित नहीं किया गया है । इस प्रकार, विचारण न्यायालय ने अभियुक्त के विरुद्ध दोषसिद्धि के निष्कर्ष अभिलिखित करके न्यायसंगत कार्य नहीं किया था ।

43. वस्तुतः, वर्तमान मामला यह है कि जहां साक्ष्य के मूल्यांकन से अभिलेख पर दो संभव मत प्रकट होते हैं और ऐसी प्रकृति में अभियुक्त के अनुकूल मत प्रकट होता है, तो उसका पालन किया जाना चाहिए और संदेह का फायदा उसे दिया जाना चाहिए । इस बारे में **राजस्थान राज्य** बनाम **इस्लाम और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय से निष्कर्ष निकाला जा सकता है, जिसके सुसंगत सार का परिशीलन करने पर :–

> "15. स्वार्णिभ सिद्धांत जो आपराधिक मामले में न्याय के प्रशासन को चलाते हैं, यह है कि यदि मामले में दो मत संभव हैं तो एक अभियुक्त की दोषिता को इंगित करता है और दूसरा उसकी निर्दोषिता दर्शाता है तो अभियुक्त के अनुकूल मत को अंगीकार किया जाना चाहिए । न्यायालय का मुख्य विचार यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि न्याय की अपहानि को रोका जाए । न्याय की अपहानि जिससे दोषिता से दोषमुक्ति हो सकती है, निर्दोष की दोषसिद्धि नहीं होनी चाहिए।"

इसलिए, अभियुक्त संदेह का फायदा पाने का हकदार है और परिणामस्वरूप आरोप से दोषमुक्त किया जाता है ।

44. इसमें ऊपर जो कुछ भी कहा गया है, उस बात को ध्यान में

---

[1] (2011) 6 एस. सी. सी. 343.

रखते हुए, ये अपीलें सफल हैं और तद्नुसार, उन्हें मंजूर किया जाता है । परिणामस्वरूप, अभियुक्त सं. 1 हिकमत बहादुर को उसके विरुद्ध विरचित दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोप से दोषमुक्त किया जाता है, जबकि अभियुक्त सं. 2 नारायण सिंह चौहान के विरुद्ध आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन आरोप विरचित किया गया । अभियुक्त हिकमत बहादुर दंड भोग रहा है । उक्त अभियुक्त को तत्काल मुक्त किया जाएगा, यदि वह किसी अन्य मामले में वांछित नहीं है । तद्नुसार, कार्यालय निर्मुक्ति वारंट तैयार करें । तथापि, अभियुक्त नारायण सिंह चौहान द्वारा दिए गए वैयक्तिक बंधपत्र रद्द किए जाते हैं और प्रतिभू को उन्मोचित किया जाता है । अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा यदि पहले जुर्माने की रकम जमा की गई है तो उनसे उचित प्राप्ति रसीद प्राप्त करके वापस किया जाएगा ।

इन दोनों अपीलों का निपटारा किया जाता है ।

अपीलों का निपटारा किया गया ।

आर्य

संसद् के अधिनियम

केन्द्रीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 2009

(2009 का अधिनियम संख्यांक 25)

[20 मार्च, 2009]

विभिन्न राज्यों में शिक्षण और अनुसंधान के लिए विश्वविद्यालयों की स्थापना और उनके निगमन तथा उनसे संबंधित या उनके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए

अधिनियम

भारत गणराज्य के साठवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

1. **संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ** – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम केन्द्रीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 2009 है ।

(2) यह 15 जनवरी, 2009 को प्रवृत्त हुआ समझा जाएगा ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, और इसके अधीन बनाए गए सभी परिनियमों में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "विद्या परिषद्" से विश्वविद्यालय की विद्या परिषद् अभिप्रेत है ;

(ख) "शैक्षणिक कर्मचारिवृंद" से ऐसे प्रवर्गों के कर्मचारिवृंद अभिप्रेत हैं जो अध्यादेशों द्वारा शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के रूप में अभिहित किए जाएं ;

(ग) "अध्ययन बोर्ड" से विश्वविद्यालय के किसी विभाग का अध्ययन बोर्ड अभिप्रेत है ;

(घ) "महाविद्यालय" से विश्वविद्यालय द्वारा पोषित महाविद्यालय अभिप्रेत है ;

(ङ) "कुलाधिपति", "कुलपति" और "प्रतिकुलपति" से क्रमशः विश्वविद्यालय के कुलाधिपति, कुलपति और प्रतिकुलपति अभिप्रेत हैं ;

(च) "सभा" से विश्वविद्यालय की सभा अभिप्रेत है ;

(छ) "विभाग" से कोई अध्ययन विभाग अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत अध्ययन केन्द्र भी है ;

(ज) "दूर शिक्षा पद्धति" से संचार के किसी माध्यम जैसे कि प्रसारण, टेलीविजन प्रसारण, इंटरनेट, पत्राचार पाठ्यक्रम, सेमिनार, संपर्क कार्यक्रम अथवा ऐसे किन्हीं दो या अधिक माध्यमों के संयोजन द्वारा शिक्षा देने की पद्धति अभिप्रेत है ;

(झ) "कर्मचारी" से विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त कोई व्यक्ति अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत विश्वविद्यालय के शिक्षक और अन्य कर्मचारिवृंद भी हैं ;

(ञ) "कार्य परिषद्" से विश्वविद्यालय की कार्य परिषद् अभिप्रेत है ;

(ट) "छात्र-निवास" से विश्वविद्यालय या विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे महाविद्यालय या संस्था के छात्रों के लिए निवास या सामूहिक जीवन की इकाई अभिप्रेत है ;

(ठ) "संस्था" से विश्वविद्यालय द्वारा चलाई जा रही ऐसी शिक्षा संस्था अभिप्रेत है, जो महाविद्यालय नहीं है ;

(ड) "प्राचार्य" से विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे किसी महाविद्यालय या किसी संस्था का प्रधान अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत, जहां कोई प्राचार्य नहीं है वहां प्राचार्य के रूप में कार्य करने के लिए तत्समय सम्यक् रूप से नियुक्त व्यक्ति और प्राचार्य या कार्यकारी प्राचार्य के न होने पर उपाचार्य के रूप में सम्यक् रूप से नियुक्त व्यक्ति है ;

(ढ) "विनियम" से इस अधिनियम के अधीन विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी द्वारा बनाए गए तत्समय प्रवृत्त विनियम अभिप्रेत हैं ;

(ण) "विद्यालय" से विश्वविद्यालय का अध्ययन विद्यालय अभिप्रेत है ;

(त) "परिनियम" और "अध्यादेश" से क्रमशः तत्समय प्रवृत्त विश्वविद्यालय के परिनियम और अध्यादेश अभिप्रेत है ;

(थ) "विश्वविद्यालय के अध्यापक" से आचार्य, सहबद्ध आचार्य, सहायक आचार्य और ऐसे अन्य व्यक्ति अभिप्रेत हैं, जो विश्वविद्यालय

में या विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे किसी महाविद्यालय या संस्था में शिक्षा देने या अनुसंधान का संचालन करने के लिए नियुक्त किए जाएं और अध्यादेशों द्वारा अध्यापक के रूप में अभिहित किए जाएं ; और

(द) "विश्वविद्यालय" से इस अधिनियम के अधीन विश्वविद्यालय के रूप में स्थापित और निगमित विश्वविद्यालय अभिप्रेत है ।

3. **विश्वविद्यालयों की स्थापना** – (1) मध्य प्रदेश विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का मध्य प्रदेश अधिनियम 22) के अधीन स्थापित छत्तीसगढ़ राज्य में गुरू घासी दास विश्वविद्यालय और मध्य प्रदेश राज्य में डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय तथा उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का राष्ट्रपति अधिनियम 10) के अधीन स्थापित उत्तराखंड राज्य में हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय इस अधिनियम के अधीन क्रमशः "गुरू घासी दास विश्वविद्यालय", "डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय" और "हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय" के नाम से निगमित निकाय के रूप में स्थापित होंगे ।

(2) गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के मुख्यालय क्रमशः बिलासपुर, सागर और श्रीनगर में होंगे ।

(3) गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय की अधिकारिता क्रमशः छत्तीसगढ़ राज्य के बिलासपुर, रायगढ़ और सरगुजा जिलों तक, मध्य प्रदेश राज्य के सागर, टीकमगढ़, छत्तरपुर, पन्ना, छिंदवाड़ा और दमोह जिलों तक तथा उत्तराखंड राज्य के चमोली, देहरादून, गढ़वाल, हरिद्वार, रुद्र प्रयाग, टिहरी गढ़वाल और उत्तर काशी जिलों तक विस्तारित होगी ।

(4) विभिन्न राज्यों में इस अधिनियम की पहली अनुसूची में यथा विनिर्दिष्ट नामों और क्षेत्रीय अधिकारिता के साथ निगमित निकायों के रूप में विश्वविद्यालय स्थापित किए जाएंगे ।

(5) उपधारा (4) में निर्दिष्ट प्रत्येक विश्वविद्यालय का मुख्यालय वह होगा जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

(6) प्रत्येक विश्वविद्यालय का प्रथम कुलाधिपति, प्रथम कुलपति तथा

सभा, कार्य परिषद् और विद्या परिषद् के प्रथम सदस्य और वे सभी व्यक्ति, जो उनके पश्चात् ऐसे अधिकारी या सदस्य बनें, जब तक वे ऐसा पद या सदस्यता धारण करते रहें, विश्वविद्यालय के नाम से निगमित निकाय का गठन करेंगे ।

(7) विश्वविद्यालय का शाश्वत् उत्तराधिकार होगा और उसकी सामान्य मुद्रा होगी तथा उक्त नाम से वह वाद लाएगा और उस पर वाद लाया जाएगा ।

[1][3क. **जम्मू-कश्मीर राज्य के संबंध में विशेष उपबंध** – (1) धारा 3 की उपधारा (4) के अधीन स्थापित जम्मू-कश्मीर केन्द्रीय विश्वविद्यालय कश्मीर केन्द्रीय विश्वविद्यालय के नाम से ज्ञात होगा और उसकी क्षेत्रीय अधिकारिता जम्मू-कश्मीर राज्य के कश्मीर खंड तक सीमित होगी ।

(2) जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय के नाम से ज्ञात एक विश्वविद्यालय स्थापित किया जाएगा, जो एक निगमित निकाय होगा, जिसकी क्षेत्रीय अधिकारिता जम्मू-कश्मीर राज्य के जम्मू खंड तक विस्तारित होगी ।

(3) जम्मू-कश्मीर राज्य के जम्मू खंड के क्षेत्र के संबंध में जम्मू-कश्मीर केन्द्रीय विश्वविद्यालय की समस्त आस्तियां और दायित्व, जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय की आस्तिओं और दायित्वों के रूप में अंतरित हो जाएंगी ।

(4) जम्मू-कश्मीर राज्य के जम्मू खंड के क्षेत्र के संबंध में जम्मू-कश्मीर विश्वविद्यालय द्वारा की गई कोई बात या कोई कार्रवाई जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय द्वारा की गई समझी जाएगी ।

(5) जम्मू-कश्मीर राज्य के जम्मू खंड के क्षेत्र के संबंध में जम्मू-कश्मीर केन्द्रीय विश्वविद्यालय द्वारा या उसके विरुद्ध संस्थित कोई वाद या जारी की गई विधिक कार्यवाही जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय द्वारा या उसके विरुद्ध संस्थित किया गया या जारी की गई समझी जाएगी ।]

[2][3ख. **बिहार राज्य के संबंध में विशेष उपबंध** – (1) धारा 3 की उपधारा (4) के अधीन स्थापित बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय, दक्षिण बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय के नाम से ज्ञात होगा, जिसकी क्षेत्रीय अधिकारिता, इस अधिनियम की पहली अनुसूची में यथा विनिर्दिष्ट बिहार राज्य में गंगा नदी के दक्षिण में राज्यक्षेत्र पर विस्तारित होगी ।

---

[1] 2009 के अधिनियम सं. 38 की धारा 2 द्वारा अंतःस्थापित ।

[2] 2014 के अधिनियम सं. 35 की धारा 2 द्वारा अंतःस्थापित ।

(2) इस अधिनियम की पहली अनुसूची में यथा विनिर्दिष्ट महात्मा गांधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय के नाम से ज्ञात एक विश्वविद्यालय स्थापित किया जाएगा, जो एक निगमित निकाय होगा, जिसकी क्षेत्रीय अधिकारिता बिहार राज्य में गंगा नदी के उत्तर में राज्यक्षेत्र पर विस्तारित होगी ।]

4. **विश्वविद्यालयों की स्थापना का प्रभाव** – इस अधिनियम के प्रारम्भ की तारीख से ही, –

(क) किसी संविदा या अन्य लिखत में गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय या हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के प्रति किसी निर्देश के बारे में यह समझा जाएगा कि वह इस अधिनियम के अधीन स्थापित क्रमशः गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के प्रति निर्देश हैं ;

(ख) गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय की सभी जंगम और स्थावर संपत्ति इस अधिनियम के अधीन स्थापित, यथास्थिति, गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय या हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय में निहित होंगी ;

(ग) गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के सभी अधिकार और दायित्व इस अधिनियम के अधीन स्थापित क्रमशः गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय को अंतरित हो जाएंगे और ये उस विश्वविद्यालय के अधिकार और दायित्व होंगे ;

(घ) इस अधिनियम के प्रारम्भ के ठीक पहले, गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय द्वारा नियोजित प्रत्येक व्यक्ति, इस अधिनियम के अधीन स्थापित क्रमशः गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय में अपना पद या सेवा, उसी अवधि तक, उसी पारिश्रमिक पर और उन्हीं निबंधनों और शर्तों पर और पेंशन, छुट्टी, उपदान, भविष्य निधि तथा अन्य मामलों के विषय में, उन्हीं अधिकारों

और विशेषाधिकारों सहित धारण करेगा जैसा वह उस समय धारण करता मानो यह अधिनियम अधिनियमित नहीं हुआ हो और ऐसा तब तक करता रहेगा जब तक कि उसका नियोजन समाप्त नहीं कर दिया जाता है या जब तक ऐसी अवधि, पारिश्रमिक और निबंधन और शर्तें, परिनियमों द्वारा सम्यक् रूप से परिवर्तित नहीं कर दी जाती हैं :

परन्तु यदि इस प्रकार किया गया परिवर्तन ऐसे कर्मचारी को स्वीकार नहीं है तो विश्वविद्यालय द्वारा उस कर्मचारी के साथ की गई संविदा के निबंधनों के अनुसार, या यदि इस निमित्त, उसमें कोई उपबंध नहीं किया गया है तो विश्वविद्यालय द्वारा उसको, स्थायी कर्मचारियों की दशा में, तीन महीने के पारिश्रमिक के समतुल्य और अन्य कर्मचारियों की दशा में, एक मास के पारिश्रमिक के समतुल्य प्रतिकर के, संदाय पर, उसका नियोजन समाप्त किया जा सकेगा :

परन्तु यह और कि इस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व नियुक्त प्रत्येक व्यक्ति, धारा 33 के अधीन किसी संविदा के निष्पादन के लंबित रहने के दौरान, इस अधिनियम और परिनियमों के उपबंधों से संगत किसी संविदा के उपबंधों के अनुसार नियुक्त किए गए समझे जाएंगे :

परन्तु यह भी कि गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय या हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के कुलपति और प्रतिकुलपति को, तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में या किसी लिखत या अन्य दस्तावेज में, किन्हीं शब्दों के रूप में, किए गए किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह इस अधिनियम के अधीन स्थापित, यथास्थिति, गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय या हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के कुलपति और प्रतिकुलपति के प्रति निर्देश हैं ;

(ङ) मध्य प्रदेश विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का मध्य प्रदेश अधिनियम 22) के उपबंधों के अधीन नियुक्त गुरू घासी दास विश्वविद्यालय और डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय का कुलपति और उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का राष्ट्रपति अधिनियम 10) के उपबंधों के अधीन नियुक्त हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय का कुलपति इस अधिनियम के अधीन कुलपतियों के रूप में नियुक्त किए गए समझे

जाएंगे और वे तीन मास की अवधि के लिए या इस अधिनियम की धारा 44 के अधीन, प्रथम कुलपति को नियुक्त किए जाने के समय तक, इसमें से जो भी पूर्वतर हो, पद धारण करेंगे ; और

(च) गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय से संबद्ध या उसके विशेषाधिकार प्राप्त या उसके द्वारा चलाए जा रहे सभी महाविद्यालय, संस्थाएं, विद्यालय या संकाय और विभाग, इस अधिनियम के अधीन स्थापित क्रमशः गुरू घासी दास विश्वविद्यालय, डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय से संबद्ध या उसके विशेषाधिकार प्राप्त होंगे या उसके द्वारा चलाए जाएंगे ।

5. **विश्वविद्यालय के उद्देश्य** – विश्वविद्यालय के उद्देश्य विद्या की ऐसी शाखाओं में, जो वह ठीक समझे, शिक्षा और अनुसंधान की सुविधाएं प्रदान करके ज्ञान का प्रसार और उसकी अभिवृद्धि करने ; विश्वविद्यालय के शिक्षा कार्यक्रमों में मानविकी, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के समेकित पाठ्यक्रमों के लिए विशेष उपबंध करने ; अध्यापन-विद्या की प्रक्रिया और अंतर विषयक अध्ययन और अनुसंधान में उत्तरोत्तर नवीनता लाने के लिए समुचित उपाय करना ; देश के विकास के लिए मानव-शक्ति को शिक्षित और प्रशिक्षित करने ; विज्ञान और प्रौद्योगिकी के संवर्धन के लिए उद्योगों से संपर्क स्थापित करने ; और जनता की सामाजिक और आर्थिक दशा को सुधारने तथा उनके कल्याण के लिए उनके बौद्धिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक विकास के लिए विशेष ध्यान देना होगा ।

6. **विश्वविद्यालय की शक्तियां** – (1) विश्वविद्यालय की निम्नलिखित शक्तियां होंगी, अर्थात् :–

(i) प्राकृतिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, मानविकी, इंजीनियरी, प्रौद्योगिकी और औषधि जैसी विद्या की ऐसी शाखाओं में, जो विश्वविद्यालय समय-समय पर, अवधारित करे, शिक्षण की व्यवस्था करना तथा अनुसंधान के लिए और ज्ञान की अभिवृद्धि और प्रसार के लिए व्यवस्था करना ;

(ii) ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो विश्वविद्यालय अवधारित करे, परीक्षाओं, मूल्यांकन या परीक्षण की किसी अन्य प्रणाली के आधार पर व्यक्तियों को डिप्लोमा या प्रमाणपत्र देना और उन्हें

उपाधियां या अन्य विद्या संबंधी विशिष्टताएं प्रदान करना तथा उचित और पर्याप्त कारण होने पर ऐसे डिप्लोमाओं, प्रमाणपत्रों, उपाधियों या अन्य विद्या संबंधी विशिष्टताओं को वापस लेना ;

(iii) निवेशबाह्य अध्ययन, प्रशिक्षण और विस्तार सेवाओं का आयोजन करना और उन्हें प्रारम्भ करना ;

(iv) परिनियमों द्वारा विहित रीति से सम्मानिक उपाधियां या अन्य विशिष्टताएं प्रदान करना ;

(v) उन व्यक्तियों को, जिन्हें वह अवधारित करे, दूर शिक्षा पद्धति के माध्यम से सुविधाएं प्रदान करना ;

(vi) विश्वविद्यालय द्वारा अपेक्षित प्राचार्य, आचार्य, सहबद्ध आचार्य, सहायक आचार्य और अन्य अध्यापन या शैक्षणिक पद संस्थित करना और ऐसे प्राचार्य, आचार्य, सहबद्ध आचार्य, सहायक आचार्य या अन्य अध्यापन या शैक्षणिक पदों पर व्यक्तियों की नियुक्ति करना ;

(vii) उच्चतर विद्या की किसी संस्था को ऐसे प्रयोजनों के लिए, जो विश्वविद्यालय अवधारित करे, मान्यता देना और ऐसी मान्यता को वापस लेना ;

(viii) किसी अन्य विश्वविद्यालय या शैक्षणिक संस्था में जिसके अंतर्गत देश के बाहर अवस्थित संस्थाएं भी हैं, कार्य करने वाले व्यक्तियों को विनिर्दिष्ट अवधि के लिए विश्वविद्यालय के शिक्षकों के रूप में नियुक्त करना ;

(ix) प्रशासनिक, अनुसचिवीय और अन्य पदों का सृजन करना और उन पर नियुक्तियां करना ;

(x) किसी अन्य विश्वविद्यालय या प्राधिकारी या उच्चतर शिक्षा संस्था के साथ, जिसके अंतर्गत देश के बाहर अवस्थित संस्थाएं भी हैं, ऐसी रीति से और ऐसे प्रयोजनों के लिए, जो विश्वविद्यालय अवधारित करे, सहकार या सहयोग करना या सहयुक्त होगा ;

(xi) अनुसंधान और शिक्षण के लिए ऐसे केन्द्र और विशेषित प्रयोगशालाएं या अन्य इकाइयां स्थापित करना जो विश्वविद्यालय की राय में, उसके उद्देश्यों को अग्रसर करने के लिए आवश्यक हों ;

(xii) अध्येतावृत्तियां, छात्रवृत्तियां, अध्ययन वृत्तियां, पदक और पुरस्कार संस्थित करना और प्रदान करना ;

(xiii) महाविद्यालय, संस्थाएं और छात्र-निवास स्थापित करना और उन्हें चलाना ;

(xiv) अनुसंधान और सलाहकार सेवाओं के लिए व्यवस्था करना और अन्य संस्थाओं, औद्योगिक या अन्य संगठनों से उस प्रयोजन के लिए ऐसे ठहराव करना जो विश्वविद्यालय आवश्यक समझे ;

(xv) अध्यापकों, मूल्यांककों और अन्य शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के लिए पुनश्चर्या पाठ्यक्रम, कार्यशालाएं, सेमिनार और अन्य कार्यक्रमों का आयोजन और संचालन करना ;

(xvi) अभ्यागत आचार्यों, प्रतिष्ठित आचार्यों, परामर्शदाताओं तथा ऐसे अन्य व्यक्तियों को संविदा पर या अन्यथा नियुक्त करना जो विश्वविद्यालय के उद्देश्यों की अभिवृद्धि में योगदान दे सकें ;

(xvii) परिनियमों के अनुसार, यथास्थिति, महाविद्यालय या संस्था या विभाग को स्वायत्त प्रास्थिति प्रदान करना ;

(xviii) विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए स्तरमान अवधारित करना, जिनके अंतर्गत परीक्षा, मूल्यांकन या परीक्षण की कोई अन्य पद्धति भी है ;

(xix) फीसों और अन्य प्रभारों की मांग करना और उन्हें प्राप्त करना ;

(xx) विश्वविद्यालय के छात्रों के आवासों का पर्यवेक्षण करना और उनके स्वास्थ्य और सामान्य कल्याण की अभिवृद्धि के लिए प्रबंध करना ;

(xxi) सभी प्रवर्गों के कर्मचारियों की सेवा की शर्तें, जिनके अंतर्गत उनकी आचार संहिता भी है, अधिकथित करना ;

(xxii) छात्रों और कर्मचारियों में अनुशासन का विनियमन करना और उनके द्वारा अनुशासन का पालन कराना तथा इस संबंध में ऐसे अनुशासन संबंधी उपाय करना जो विश्वविद्यालय आवश्यक समझे ;

(xxiii) कर्मचारियों के स्वास्थ्य और सामान्य कल्याण की अभिवृद्धि के लिए प्रबंध करना ;

(xxiv) विश्वविद्यालयों के प्रयोजनों के लिए, केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से, उपकृति, संदान और दान प्राप्त करना और किसी स्थावर या जंगम संपत्ति को, जिसके अंतर्गत न्यास और विन्यास संपत्ति है, अर्जित करना, धारण करना, उसका प्रबंध और व्ययन करना ;

(xxv) केन्द्रीय सरकार के अनुमोदन से, विश्वविद्यालय की संपत्ति की प्रतिभूति पर विश्वविद्यालय के प्रयोजनों के लिए धन उधार लेना ; और

(xxvi) ऐसे अन्य सभी कार्य और बातें करना जो उसके सभी या किन्हीं उद्देश्यों की प्राप्त के लिए आवश्यक, आनुषंगिक या सहायक हों ।

(2) विश्वविद्यालय का, उपधारा (1) में निर्दिष्ट अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय, यह प्रयास होगा कि वह अध्यापन और अनुसंधान के अखिल भारतीय स्वरूप और उच्च मानक बनाए रखे तथा विश्वविद्यालय ऐसे अन्य उपायों में, जो उक्त प्रयोजन के लिए आवश्यक हों, विशेषकर, निम्नलिखित उपाय करेगा :–

(i) छात्रों का प्रवेश और संकाय में भर्ती अखिल भारतीय स्तर पर की जाएगी ;

(ii) छात्रों का प्रवेश, या तो विश्वविद्यालय द्वारा व्यष्टिक रूप से या अन्य विश्वविद्यालयों के समन्वय से ली जाने वाली सामान्य प्रवेश परीक्षाओं के माध्यम से गुणागुण के आधार पर किए जाएंगे या ऐसे पाठ्यक्रमों में अर्हक परीक्षा में अभिप्राप्त किए गए अंकों के आधार पर किए जाएंगे जहां छात्रों की संख्या कम हो ;

(iii) संकाय की अंतरविश्वविद्यालय वहनीयता अंतरणीय पेंशन और ज्येष्ठता के संरक्षण के साथ प्रोत्साहित की जाएगी ;

(iv) सेमेस्टर प्रणाली, नियमित मूल्यांकन और इच्छा पर आधारित क्रेडिट प्रणाली शुरू की जाएगी तथा विश्वविद्यालय अन्य विश्वविद्यालयों और शैक्षणिक संस्थाओं के साथ क्रेडिट अंतरण और संयुक्त डिग्री कार्यक्रमों के लिए करार करेगा ;

(v) अध्ययन के विकासशील पाठ्यक्रम और कार्यक्रम इस उपबंध के साथ लागू किए जाएंगे कि उनका सावधिक पुनर्विलोकन

और पुनर्संरचना की जाएगी ;

(vi) विश्वविद्यालय के सभी शैक्षणिक कार्यकलापों में, जिनके अंतर्गत अध्यापकों का मूल्यांकन भी होगा, छात्रों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाएगी ;

(vii) राष्ट्रीय निर्धारण और प्रत्यायन परिषद् या राष्ट्रीय स्तर के किसी अन्य प्रत्यायन अभिकरण से प्रत्यायन प्राप्त किया जाएगा ; और

(viii) एक प्रभावी प्रबंधन सूचना प्रणाली के साथ ई-गवर्नेंस आरम्भ किया जाएगा ।

7. **विश्वविद्यालय का सभी जातियों, पंथों, मूलवंशों और वर्गों के लिए खुला होना** – विश्वविद्यालय सभी स्त्रियों और पुरुषों के लिए, चाहे वे किसी भी जाति, पंथ, मूलवंश या वर्ग के हों, खुला होगा और विश्वविद्यालय के लिए यह विधिपूर्ण नहीं होगा कि वह किसी व्यक्ति को विश्वविद्यालय के शिक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने या उसमें कोई अन्य पद धारण करने या विश्वविद्यालय में छात्र के रूप में प्रवेश पाने या उसमें स्नातक होने या उसके किसी विशेष अधिकार का उपभोग या प्रयोग करने का हकदार बनाने के लिए उस पर कोई धार्मिक विश्वास या मान्यता संबंधी मानदंड अपनाए या उस पर अधिरोपित करे :

परन्तु इस धारा की कोई बात विश्वविद्यालय को महिलाओं, निःशक्त व्यक्तियों या समाज के दुर्बल वर्गों और विशिष्टतया अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों और अन्य सामाजिक रूप से तथा शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के नागरिकों के नियोजन या प्रवेश के लिए विशेष उपबंध करने से निवारित करने वाली नहीं समझी जाएगी :

परन्तु यह और कि ऐसा कोई विशेष उपबंध निवास के आधार पर नहीं किया जाएगा ।

8. **विश्वविद्यालय का कुलाध्यक्ष** – (1) भारत का राष्ट्रपति विश्वविद्यालय का कुलाध्यक्ष होगा ।

(2) कुलाध्यक्ष, विश्वविद्यालय के, जिसके अंतर्गत उसके द्वारा चलाए जा रहे महाविद्यालय और संस्थाएं भी हैं, कार्य और प्रगति का पुनर्विलोकन करने के लिए और उस पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए, समय-समय पर, एक या अधिक व्यक्तियों को नियुक्त कर सकेगा ; और उस

रिपोर्ट की प्राप्ति पर कुलाध्यक्ष, उस पर कुलपति के माध्यम से कार्य परिषद् का विचार अभिप्राप्त करने के पश्चात् ऐसी कार्रवाई कर सकेगा और ऐसे निदेश दे सकेगा जो वह रिपोर्ट में चर्चित विषयों में से किसी के बारे में आवश्यक समझे और विश्वविद्यालय ऐसे कार्य से आबद्ध होगा तथा ऐसे निदेशों का पालन करने के लिए आबद्ध होगा ।

(3) कुलाध्यक्ष को ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा, जिन्हें वह निदेश दे, विश्वविद्यालय, उसके भवनों, पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओं तथा उपस्कर का और विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे किसी महाविद्यालय या संस्था का ; और विश्वविद्यालय द्वारा संचालित की गई परीक्षा, दिए गए शिक्षण और अन्य कार्य का भी निरीक्षण कराने का और विश्वविद्यालय, महाविद्यालयों या संस्थाओं के प्रशासन या वित्त से संबंधित किसी मामले की बाबत उसी रीति से जांच कराने का अधिकार होगा ।

(4) कुलाध्यक्ष, उपधारा (3) में निर्दिष्ट प्रत्येक मामले में, निरीक्षण या जांच कराने के अपने आय की सूचना विश्वविद्यालय को देगा और विश्वविद्यालय को ऐसे अभ्यावेदन कुलाध्यक्ष को करने का अधिकार होगा, जो वह आवश्यक समझे ।

(5) कुलाध्यक्ष, विश्वविद्यालय द्वारा किए गए अभ्यावेदनों पर, यदि कोई हों, विचार करने के पश्चात्, ऐसा निरीक्षण या जांच करा सकेगा, जो उपधारा (3) में निर्दिष्ट है ।

(6) जहां कुलाध्यक्ष द्वारा कोई निरीक्षण या जांच कराई जाती है वहां, विश्वविद्यालय एक प्रतिनिधि नियुक्त करने का हकदार होगा जिसे ऐसे निरीक्षण या जांच में उपस्थित होने और सुने जाने का अधिकार होगा ।

(7) कुलाध्यक्ष, यदि निरीक्षण या जांच विश्वविद्यालय या उसके द्वारा चलाए जा रहे किसी महाविद्यालय या संस्था के संबंध में की जाती है, ऐसे निरीक्षण या जांच के परिणाम के संदर्भ में कुलपति को संबोधित कर सकेगा और उस पर कार्रवाई करने के संबंध में ऐसे विचार और ऐसी सलाह दे सकेगा जो कुलाध्यक्ष देना चाहे, और कुलाध्यक्ष से संबोधन की प्राप्ति पर कुलपति कार्य परिषद् को कुलाध्यक्ष के विचार तथा ऐसी सलाह संसूचित करेगा जो कुलाध्यक्ष द्वारा उस पर की जाने वाली कार्रवाई के संबंध में दी गई हो ।

(8) कार्य परिषद् कुलपति के माध्यम से कुलाध्यक्ष को वह कार्रवाई,

यदि कोई हो, संसूचित करेगा जो वह ऐसे निरीक्षण या जांच के परिणामस्वरूप करने की प्रस्थापना करता है या की गई है ।

(9) जहां कार्य परिषद् कुलाध्यक्ष के समाधानप्रद रूप में कोई कार्रवाई उचित समय के भीतर नहीं करता है वहां कुलाध्यक्ष कार्य परिषद् द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण या किए गए अभ्यावेदन पर विचार करने के पश्चात् ऐसे निदेश जारी कर सकेगा जो वह ठीक समझे और कार्य परिषद् ऐसे निदेशों का पालन करेगी ।

(10) इस आधार के पूर्वगामी उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, कुलाध्यक्ष विश्वविद्यालय की किसी ऐसी कार्यवाही को, जो इस अधिनियम, परिनियमों या अध्यादेशों के अनुरूप नहीं है, लिखित आदेश द्वारा, निष्प्रभाव कर सकेगा :

परन्तु ऐसा कोई आदेश करने से पहले, वह कुलसचिव से इस बात का कारण दर्शित करने की अपेक्षा करेगा कि ऐसा आदेश क्यों न किया जाए और यदि उचित समय के भीतर कोई कारण बताया जाता है तो वह उस पर विचार करेगा ।

(11) कुलाध्यक्ष को ऐसी अन्य शक्तियां होंगी जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं ।

9. **विश्वविद्यालय के अधिकारी** – विश्वविद्यालय के निम्नलिखित अधिकारी होंगे, अर्थात् :–

(1) कुलाधिपति ;

(2) कुलपति ;

(3) प्रतिकुलपति ;

(4) संकायाध्यक्ष ;

(5) कुलसचिव ;

(6) वित्त अधिकारी ;

(7) परीक्षा नियंत्रक ;

(8) पुस्तकालयाध्यक्ष ; और

(9) ऐसे अन्य अधिकारी जो परिनियमों द्वारा विश्वविद्यालय के

अधिकारी घोषित किए जाएं ।

10. **कुलाधिपति** – (1) कुलाधिपति की नियुक्ति कुलाध्यक्ष द्वारा, ऐसी रीति से की जाएगी जो परिनियमों द्वारा विहित की जाए ।

(2) कुलाधिपति, अपने पदाभिधान से, विश्वविद्यालय का प्रधान होगा और यदि वह उपस्थित है तो उपाधियां प्रदान करने के लिए आयोजित विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोहों और सभा के अधिवेशनों में पीठासीन होगा ।

11. **कुलपति** – (1) कुलपति की नियुक्ति कुलाध्यक्ष द्वारा ऐसी रीति से की जाएगी, जो परिनियमों द्वारा विहित की जाए ।

(2) कुलपति, विश्वविद्यालय का प्रधान कार्यपालक और शैक्षणिक अधिकारी होगा और विश्वविद्यालय के कार्यकलापों पर साधारण पर्यवेक्षण और नियंत्रण रखेगा और विश्वविद्यालय के सभी प्राधिकारियों के विनिश्चयों को कार्यान्वित करेगा ।

(3) यदि कुलपति की यह राय है कि किसी मामले में तुरन्त कार्रवाई आवश्यक है तो वह किसी ऐसी शक्ति का प्रयोग कर सकेगा जो विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी को इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन प्रदत्त है और अपने द्वारा उस मामले में की गई कार्रवाई की रिपोर्ट उस प्राधिकारी को उसके अगले अधिवेशन में देगा :

परन्तु यदि संबंधित प्राधिकारी की यह राय है कि ऐसी कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए थी तो वह ऐसा मामला कुलाध्यक्ष को निर्देशित कर सकेगा जिसका उस पर विनिश्चय अंतिम होगा :

परन्तु यह और कि विश्वविद्यालय की सेवा में के किसी ऐसे व्यक्ति को, जो इस उपधारा के अधीन कुलपति द्वारा की गई कार्रवाई से व्यथित है, यह अधिकार होगा कि जिस तारीख को ऐसी कार्रवाई का विनिश्चय उसे संसूचित किया जाता है, उससे तीन मास के भीतर वह उस कार्रवाई के विरुद्ध अभ्यावेदन, कार्य परिषद् को करे और तब कार्य परिषद् कुलपति द्वारा की गई कार्रवाई को पुष्ट कर सकेगी, उपांतरित कर सकेगी या उसे उलट सकेगी ।

(4) यदि कुलपति की यह राय है कि विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी का कोई विनिश्चय इस अधिनियम, परिनियमों या अध्यादेशों के

उपबंधों द्वारा प्रदत्त प्राधिकारी की शक्तियों के बाहर है या किया गया विनिश्चय विश्वविद्यालय के हित में नहीं है तो वह संबंधित प्राधिकारी से अपने विनिश्चय का ऐसे विनिश्चय के साठ दिन के भीतर पुनर्विलोकन करने के लिए कह सकेगा और यदि वह प्राधिकारी उस विनिश्चय का पूर्णतः या भागतः पुनर्विलोकन करने से इनकार करता है या उसके द्वारा उक्त साठ दिन की अवधि के भीतर कोई विनिश्चय नहीं किया जाता है तो वह मामला कुलाध्यक्ष को निर्दिष्ट किया जाएगा जिसका उस पर विनिश्चय अंतिम होगा ।

(5) कुलपति ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों या अध्यादेशों द्वारा विहित किए जाएं ।

12. **प्रतिकुलपति** – प्रतिकुलपति की नियुक्ति ऐसी रीति से और सेवा के ऐसे निबंधनों और शर्तों पर की जाएगी और वह ऐसी शक्तियों का प्रयोग तथा ऐसे कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं ।

13. **विद्यालय का संकायाध्यक्ष** – प्रत्येक विद्यालय के संकायाध्यक्ष की नियुक्ति ऐसी रीति से की जाएगी और वह ऐसी शक्तियों का प्रयोग तथा ऐसे कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं ।

14. **कुलसचिव** – (1) कुलसचिव की नियुक्ति ऐसी रीति से और सेवा के ऐसे निबंधनों और शर्तों पर की जाएगी जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं ।

(2) कुलसचिव को विश्वविद्यालय की ओर से करार करने, दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने और अभिलेखों को अधिप्रमाणित करने की शक्ति होगी और वह ऐसी शक्तियों का प्रयोग तथा ऐसे कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं ।

15. **वित्त अधिकारी** – वित्त अधिकारी की नियुक्ति ऐसी रीति से की जाएगी और वह ऐसी शक्तियों का प्रयोग तथा ऐसे कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं ।

16. **परीक्षा नियंत्रक** – परीक्षा नियंत्रक की नियुक्ति ऐसी रीति से की जाएगी और वह ऐसी शक्तियों का प्रयोग तथा ऐसे कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं ।

17. **पुस्तकालयाध्यक्ष** – पुस्तकालयाध्यक्ष की नियुक्ति ऐसी रीति और

सेवा के ऐसे निबंधनों और शर्तों पर की जाएगी और वह ऐसी शक्तियों का प्रयोग तथा ऐसे कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं ।

18. **अन्य अधिकारी** – विश्वविद्यालय के अन्य अधिकारियों की नियुक्ति की रीति और उनकी शक्तियां तथा कर्तव्य परिनियमों द्वारा विहित किए जाएंगे ।

19. **विश्वविद्यालय के प्राधिकारी** – विश्वविद्यालय के निम्नलिखित प्राधिकारी होंगे –

(1) सभा ;

(2) कार्य परिषद् ;

(3) विद्या परिषद् ;

(4) अध्ययन बोर्ड ;

(5) वित्त समिति ; और

(6) ऐसे अन्य प्राधिकारी जो परिनियमों द्वारा विश्वविद्यालय के प्राधिकारी घोषित किए जाएं ।

20. **सभा** – (1) सभा का गठन तथा उसके सदस्यों की पदावधि परिनियमों द्वारा विहित की जाएगी :

परन्तु उतने सदस्य जितने परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं विश्वविद्यालय के अध्यापकों, कर्मचारियों और छात्रों में से निर्वाचित किए जाएंगे ।

(2) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, सभा की निम्नलिखित शक्तियां और कृत्य होंगे, अर्थात् :–

(क) विश्वविद्यालय की व्यापक नीतियों और कार्यक्रमों का समय-समय पर पुनर्विलोकन करना तथा विश्वविद्यालय के सुधार और विकास के लिए उपाय सुझाना ;

(ख) विश्वविद्यालय की वार्षिक रिपोर्ट और वार्षिक लेखाओं पर तथा ऐसे लेखाओं की लेखापरीक्षा रिपोर्ट पर विचार करना और संकल्प पारित करना ;

(ग) कुलाध्यक्ष को किसी ऐसे मामले की बाबत सलाह देना जो उसे सलाह के लिए निर्देशित किया जाए ; और

(घ) ऐसे अन्य कृत्यों का निर्वहन करना जो परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं ।

21. **कार्य परिषद्** – (1) कार्य परिषद्, विश्वविद्यालय की प्रधान कार्यपालक निकाय होगी ।

(2) कार्य परिषद् का गठन, उसके सदस्यों की पदावधि तथा उसकी शक्तियां और कृत्य परिनियमों द्वारा विहित किए जाएंगे :

परन्तु उतने सदस्य जितने परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं, सभा के निर्वाचित सदस्यों में से होंगे ।

22. **विद्या परिषद्** – (1) विद्या परिषद्, विश्वविद्यालय की प्रधान शैक्षणिक निकाय होगी और इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, विश्वविद्यालय की शैक्षणिक नीतियों का समन्वय करेगी और उस पर साधारण पर्यवेक्षण रखेगी ।

(2) विद्या परिषद् का गठन, उसके सदस्यों की पदावधि तथा उसकी शक्तियां और कृत्य परिनियमों द्वारा विहित किए जाएंगे :

परन्तु उतने सदस्य जितने परिनियमों द्वारा विहित किए जाएं, सभा के निर्वाचित सदस्यों में से होंगे ।

23. **अध्ययन बोर्ड** – अध्ययन बोर्ड का गठन, उनकी शक्तियां और कृत्य परिनियमों द्वारा विहित किए जाएंगे ।

24. **वित्त समिति** – वित्त समिति का गठन, उसकी शक्तियां और कृत्य परिनियमों द्वारा विहित किए जाएंगे ।

25. **विश्वविद्यालय के अन्य प्राधिकारी** – ऐसे अन्य प्राधिकारियों का जो परिनियमों द्वारा विश्वविद्यालय के प्राधिकारियों के रूप में घोषित किए जाएं, गठन, उनकी शक्तियां और कृत्य, परिनियमों द्वारा विहित किए जाएंगे ।

26. **परिनियम बनाने की शक्ति** – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, परिनियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) विश्वविद्यालय के प्राधिकारियों और अन्य निकायों का, जो समय-समय पर गठित किए जाएं, गठन, उनकी शक्तियां और कृत्य ;

(ख) उक्त प्राधिकारियों और निकायों के सदस्यों की नियुक्ति और उनका पदों पर बने रहना, सदस्यों के पदों की रिक्तियों का भरा जाना तथा उन प्राधिकारियों और अन्य निकायों से संबंधित अन्य सभी विषय जिनके लिए उपबंध करना आवश्यक या वांछनीय हो ;

(ग) विश्वविद्यालय के अधिकारियों की नियुक्ति, उनकी शक्तियां और कर्तव्य तथा उनकी उपलब्धियां ;

(घ) विश्वविद्यालय के अध्यापकों, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद तथा अन्य कर्मचारियों की नियुक्ति, उनकी उपलब्धियां और सेवा की शर्तें ;

(ङ) किसी संयुक्त परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय या संगठन में काम करने वाले अध्यापकों और शैक्षणिक कर्मचारिवृंद की विनिर्दिष्ट अवधि के लिए नियुक्ति ;

(च) कर्मचारियों की सेवा की शर्तें जिनके अंतर्गत पेंशन, बीमा, भविष्य निधि, सेवा समाप्ति और अनुशासनिक कार्रवाई की रीति भी हैं ;

(छ) विश्वविद्यालय के कर्मचारियों की सेवा में ज्येष्ठता को शासित करने वाले सिद्धांत ;

(ज) कर्मचारियों या छात्रों और विश्वविद्यालय के बीच विवाद के मामलों में माध्यस्थम् की प्रक्रिया ;

(झ) विश्वविद्यालय के किसी अधिकारी या प्राधिकारी की कार्रवाई के विरुद्ध किसी कर्मचारी या छात्र द्वारा कार्य परिषद् को अपील करने की प्रक्रिया ;

(ञ) किसी महाविद्यालय या किसी संस्था या किसी विभाग को स्वायत्त प्रास्थिति प्रदान करना ;

(ट) संकायों, विभागों, केन्द्रों, छात्र-निवासों, महाविद्यालयों और संस्थाओं की स्थापना और उत्सादन ;

(ठ) मानद उपाधियों का प्रदान किया जाना ;

(ड) उपाधियों, डिप्लोमाओं, प्रमाणपत्रों और अन्य विद्या संबंधी विशिष्टताओं का वापस लिया जाना ;

(ढ) विश्वविद्यालय द्वारा स्थापित महाविद्यालयों और संस्थाओं का प्रबंध ;

(ण) विश्वविद्यालय के प्राधिकारियों या अधिकारियों में निहित शक्तियों का प्रत्यायोजन ;

(त) कर्मचारियों और छात्रों में अनुशासन बनाए रखना ;

(थ) ऐसे सभी अन्य विषय जो इस अधिनियम के अनुसार परिनियमों द्वारा उपबंधित किए जाने हैं या किए जाएं ।

27. **परिनियम किस प्रकार बनाए जाएंगे** – (1) प्रथम परिनियम वे हैं जो इस अधिनियम की दूसरी अनुसूची में उपवर्णित हैं ।

(2) कार्य परिषद्, समय-समय पर, नए या अतिरिक्त परिनियम बना सकेगी या उपधारा (1) में निर्दिष्ट परिनियमों का संशोधन या निरसन कर सकेगी :

परन्तु कार्य परिषद् विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी की प्रास्थिति, शक्तियों या गठन पर प्रभाव डालने वाले कोई परिनियम तब तक नहीं बनाएगी, उनका संशोधन नहीं करेगी या उनका निरसन नहीं करेगी जब तक उस प्राधिकारी को प्रस्थापित परिवर्तनों पर अपनी राय लिखित रूप में अभिव्यक्त करने का अवसर नहीं दे दिया गया है और इस प्रकार अभिव्यक्त किसी राय पर कार्य परिषद् विचार करेगी ।

(3) प्रत्येक नए परिनियम या किसी परिनियम के परिवर्धन या उसके किसी संशोधन या निरसन के लिए कुलाध्यक्ष की अनुमति अपेक्षित होगी जो उस पर अनुमति दे सकेगा या अनुमति विधारित कर सकेगा या उसे कार्य परिषद् को उसके विचार के लिए वापस भेज सकेगा ।

(4) किसी नए परिनियम या विद्यमान परिनियम का संशोधन या निरसन करने वाला कोई परिनियम तब तक विधिमान्य नहीं होगा जब तक कुलाध्यक्ष द्वारा उसकी अनुमति न दे दी गई हो ।

(5) पूर्वगामी उपधाराओं में किसी बात के होते हुए भी, कुलाध्यक्ष इस अधिनियम के प्रारम्भ से ठीक बाद की तीन वर्ष की अवधि के दौरान नए या अतिरिक्त परिनियम बना सकेगा या उपधारा (1) में निर्दिष्ट परिनियमों का संशोधन या निरसन कर सकेगा :

परन्तु कुलाध्यक्ष, तीन वर्ष की उक्त अवधि की समाप्ति पर, ऐसे

विस्तृत परिनियम, जो वह आवश्यक समझे, ऐसी समाप्ति की तारीख से एक वर्ष के भीतर बना सकेगा और ऐसे विस्तृत परिनियम संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखे जाएंगे ।

(6) इस धारा में किसी बात के होते हुए भी, कुलाध्यक्ष अपने द्वारा विनिर्दिष्ट किसी विषय के संबंध में परिनियमों में उपबंध करने के लिए विश्वविद्यालय को निदेश दे सकेगा और यदि कार्य परिषद् किसी ऐसे निदेश को उसकी प्राप्ति के साठ दिन के भीतर कार्यान्वित करने में असमर्थ रहती है तो कुलाध्यक्ष कार्य परिषद् द्वारा ऐसे निदेश का अनुपालन करने में उसकी असमर्थता के लिए संसूचित कारणों पर, यदि कोई हों, विचार करने के पश्चात्, यथोचित रूप से परिनियमों को बना या संशोधित कर सकेगा ।

28. **अध्यादेश बनाने की शक्ति** – (1) इस अधिनियम और परिनियमों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अध्यादेशों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किए जा सकेंगे, अर्थात् :–

(क) विश्वविद्यालय में छात्रों का प्रवेश और उस रूप में उनका नाम दर्ज किया जाना ;

(ख) विश्वविद्यालय की सभी उपाधियों, डिप्लोमाओं और प्रमाणपत्रों के लिए अधिकथित किए जाने वाले पाठ्यक्रम ;

(ग) शिक्षण और परीक्षा का माध्यम ;

(घ) उपाधियों, डिप्लोमाओं, प्रमाणपत्रों और अन्य विद्या संबंधी विशेष उपाधियों का प्रदान किया जाना, उनके लिए अर्हताएं और उन्हें प्रदान करने और अभिप्राप्त करने के बारे में किए जाने वाले उपाय ;

(ङ) विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के लिए और विश्वविद्यालय की परीक्षाओं, उपाधियों और डिप्लोमाओं में प्रवेश के लिए ली जाने वाली फीस ;

(च) अध्येतावृत्तियां, छात्रवृत्तियां, अध्ययनवृत्तियां, पदक और पुरस्कार प्रदान किए जाने की शर्तें ;

(छ) परीक्षाओं का संचालन, जिसके अंतर्गत परीक्षा निकायों, परीक्षकों और अनुसीमकों की पदावधि और नियुक्ति की रीति और उनके कर्तव्य हैं ;

(ज) विश्वविद्यालय के छात्रों के निवास की शर्तें ;

(झ) छात्राओं के निवास, अनुशासन और अध्यापन के लिए किए जाने वाले विशेष प्रबंध, यदि कोई हों, और उनके लिए विशेष पाठ्यक्रम विहित करना ;

(ञ) अध्ययन केन्द्रों, अध्ययन बोर्डों, विशेषित प्रयोगशालाओं और अन्य समितियों की स्थापना ;

(ट) अन्य विश्वविद्यालयों, संस्थाओं और अन्य अभिकरणों के साथ, जिनके अंतर्गत विद्वत् निकाय या संगम भी है, सहकार और सहयोग करने की रीति ;

(ठ) किसी अन्य ऐसे निकाय का, जो विश्वविद्यालय के शैक्षणिक जीवन में सुधार के लिए आवश्यक समझा जाए, सृजन, उसकी संरचना और उसके कृत्य ;

(ड) अध्येतावृत्तियों, अध्ययनवृत्तियों, पदकों और पुरस्कारों के संस्थापन ;

(ढ) कर्मचारियों तथा छात्रों की शिकायतों को दूर करने के लिए किसी तंत्र की स्थापना ; और

(ण) ऐसे सभी अन्य विषय जो इस अधिनियम या परिनियमों के अनुसार अध्यादेशों द्वारा उपबंधित किए जाने हैं या किए जाएं ।

(2) प्रथम अध्यादेश, कार्य परिषद् के पूर्व अनुमोदन से, कुलपति द्वारा बनाए जाएंगे और इस प्रकार बनाए गए अध्यादेश, परिनियमों द्वारा विहित रीति से कार्य परिषद् द्वारा किसी भी समय संशोधित, निरसित या जोड़े जा सकेंगे :

परन्तु गुरू घासी दास विश्वविद्यालय तथा डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय और हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय की दशा में, उस समय तक जब तक कि उन मामलों के संबंध में जो इस अधिनियम और परिनियमों के अधीन अध्यादेशों द्वारा उपबंधित किए जाने हैं कुलपति द्वारा इस प्रकार प्रथम अध्यादेश नहीं किए जाते हैं तो इस अधिनियम के प्रारम्भ से ठीक पहले क्रमशः मध्य प्रदेश विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का मध्य प्रदेश अधिनियम 22) और उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का राष्ट्रपति अधिनियम 10)

के उपबंधों के अधीन बनाए गए परिनियमों और अध्यादेशों से सुसंगत उपबंध वहां तक लागू होंगे जहां तक वे इस अधिनियम और परिनियमों के उपबंधों से असंगत नहीं हैं ।

29. **विनियम** – विश्वविद्यालय के प्राधिकारी, स्वयं अपने और अपने द्वारा नियुक्त की गई समितियों के, यदि कोई हों, कार्य संचालन के लिए जिसका इस अधिनियम, परिनियमों या अध्यादेशों द्वारा उपबंध नहीं किया गया है, परिनियमों द्वारा विहित रीति से ऐसे विनियम बना सकेंगे, जो इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों से संगत हों ।

30. **वार्षिक रिपोर्ट** – (1) विश्वविद्यालय की वार्षिक रिपोर्ट, कार्य परिषद् के निदेश के अधीन तैयार की जाएगी जिसमें, अन्य विषयों के साथ-साथ, विश्वविद्यालय द्वारा अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किए गए उपाय होंगे और वह सभा को उस तारीख को या उसके पहले प्रस्तुत की जाएगी, जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं और सभा अपने वार्षिक अधिवेशन में उस रिपोर्ट पर विचार करेगी ।

(2) सभा, अपनी टीका-टिप्पणी सहित, यदि कोई हो, वार्षिक रिपोर्ट कुलाध्यक्ष को प्रस्तुत करेगी ।

(3) उपधारा (1) के अधीन तैयार की गई वार्षिक रिपोर्ट की एक प्रति, केन्द्रीय सरकार को भी प्रस्तुत की जाएगी, जो यथाशीघ्र उसे संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखवाएगी ।

31. **वार्षिक लेखे** – (1) विश्वविद्यालय के वार्षिक लेखे और तुलनपत्र, कार्य परिषद् के निदेश के अधीन तैयार किए जाएंगे और भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा या ऐसे व्यक्तियों द्वारा जिन्हें वह इस निमित्त प्राधिकृत करे, प्रत्येक वर्ष कम से कम एक बार और पन्द्रह मास से अनधिक के अंतरालों पर उनकी लेखापरीक्षा की जाएगी ।

(2) वार्षिक लेखाओं की एक प्रति तथा उस पर लेखापरीक्षा की रिपोर्ट कार्य परिषद् के संप्रेक्षणों के साथ, सभा और कुलाध्यक्ष को, प्रस्तुत की जाएंगी ।

(3) वार्षिक लेखाओं पर कुलाध्यक्ष द्वारा किए गए संप्रेक्षण सभा की जानकारी में लाए जाएंगे और सभा के संप्रेक्षण, यदि कोई हों, कार्य परिषद् द्वारा विचार किए जाने के पश्चात् कुलाध्यक्ष को प्रस्तुत किए जाएंगे ।

(4) वार्षिक लेखाओं की एक प्रति, कुलाध्यक्ष को प्रस्तुत की गई

लेखापरीक्षा रिपोर्ट के साथ केन्द्रीय सरकार को भी प्रस्तुत की जाएगी जो यथाशीघ्र उसे संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखवाएगी ।

(5) संपरीक्षित वार्षिक लेखे संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखे जाने के पश्चात् राजपत्र में प्रकाशित किए जाएंगे ।

32. **विवरणियां और जानकारी** – विश्वविद्यालय, केन्द्रीय सरकार को, अपनी संपत्ति या क्रियाकलापों की बाबत ऐसी विवरणियां या अन्य जानकारी केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट की जाने वाली अवधि के भीतर देगा जो केन्द्रीय सरकार, समय-समय पर, अपेक्षा करे ।

33. **कर्मचारियों की सेवा की शर्तें** – (1) विश्वविद्यालय का प्रत्येक कर्मचारी, लिखित संविदा के अधीन नियुक्त किया जाएगा, जो विश्वविद्यालय के पास रखी जाएगी और उसकी एक प्रति संबंधित कर्मचारी को दी जाएगी ।

(2) विश्वविद्यालय और किसी कर्मचारी के बीच संविदा से उत्पन्न होने वाला कोई विवाद, कर्मचारी के अनुरोध पर, माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट किया जाएगा, जिसमें कार्य परिषद् द्वारा नियुक्त एक सदस्य, संबंधित कर्मचारी द्वारा नामनिर्दिष्ट एक सदस्य और कुलाध्यक्ष द्वारा नियुक्त एक अधिनिर्णायक होगा ।

(3) अधिकरण का विनिश्चय अंतिम होगा और अधिकरण द्वारा विनिश्चित मामलों के संबंध में किसी सिविल न्यायालय में कोई वाद नहीं होगा :

परन्तु इस धारा की कोई बात कर्मचारी को संविधान के अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 226 के अधीन उपलब्ध न्यायिक उपचार प्राप्त करने से निवारित नहीं करेगी ।

(4) उपधारा (2) के अधीन कर्मचारी द्वारा किया गया प्रत्येक ऐसा अनुरोध माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) के अर्थ में इस धारा के निबंधनों पर माध्यस्थम् के लिए निवेदन समझा जाएगा ।

(5) अधिकरण के कार्य को विनियमित करने की प्रक्रिया परिनियमों द्वारा विहित की जाएगी ।

34. **छात्रों के विरुद्ध अनुशासनिक मामलों में अपील और माध्यस्थम् की प्रक्रिया** – (1) कोई छात्र या परीक्षार्थी, जिसका नाम विश्वविद्यालय की

नामावली से, यथास्थिति, कुलपति, अनुशासन समिति या परीक्षा समिति के आदेशों या संकल्प द्वारा हटाया गया है और जिसे विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में बैठने से एक वर्ष से अधिक के लिए विवर्जित किया गया है, उसको ऐसे आदेशों की या ऐसे संकल्प की प्रति की प्राप्ति की तारीख से दस दिन के भीतर कार्य परिषद् को अपील कर सकेगा और कार्य परिषद्, यथास्थिति, कुलपति या समिति के विनिश्चय को पुष्ट या उपांतरित कर सकेगी या उलट सकेगी ।

(2) विश्वविद्यालय द्वारा किसी छात्र के विरुद्ध की गई अनुशासनिक कार्रवाई से उत्पन्न होने वाला कोई विवाद उस छात्र के अनुरोध पर, माध्यस्थम् अधिकरण को निर्देशित किया जाएगा और धारा 33 की उपधारा (2), उपधारा (3), उपधारा (4) और उपधारा (5) के उपबंध, इस उपधारा के अधीन किए गए निर्देश को यथाशक्य लागू होंगे ।

35. **अपील करने का अधिकार** – इस अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, विश्वविद्यालय या विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे महाविद्यालय या संस्था के प्रत्येक कर्मचारी या छात्र को, यथास्थिति, विश्वविद्यालय के किसी अधिकारी या प्राधिकारी अथवा किसी महाविद्यालय या संस्था के प्राचार्य या प्रबंधतंत्र के विनिश्चय के विरुद्ध ऐसे समय के भीतर, जो परिनियमों द्वारा विहित किया जाए, कार्य परिषद् को अपील करने का अधिकार होगा और तब कार्य परिषद् उस विनिश्चय को, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, पुष्ट या उपांतरित कर सकेगी या उलट सकेगी ।

36. **भविष्य निधि और पेंशन निधियां** – (1) विश्वविद्यालय अपने कर्मचारियों के फायदे के लिए ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं, ऐसी भविष्य निधि या पेंशन निधि का गठन करेगा या ऐसी बीमा स्कीमों की व्यवस्था करेगा जो वह ठीक समझे ।

(2) जहां ऐसी भविष्य निधि या पेंशन निधि का इस प्रकार गठन किया गया है वहां केन्द्रीय सरकार यह घोषित कर सकेगी कि भविष्य निधि अधिनियम, 1925 (1925 का 19) के उपबंध ऐसी निधि को इस प्रकार लागू होंगे मानो वह सरकारी भविष्य निधि हो ।

37. **प्राधिकारियों और निकायों के गठन के बारे में विवाद** – यदि यह प्रश्न उठता है कि क्या कोई व्यक्ति विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी या अन्य निकाय के सदस्य के रूप में सम्यक् रूप से निर्वाचित या नियुक्त किया गया है या उसका सदस्य होने का हकदार है तो वह मामला

कुलाध्यक्ष को निर्देशित किया जाएगा, जिसका उस पर विनिश्चय अंतिम होगा ।

38. **आकस्मिक रिक्तियों का भरा जाना** – विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी या अन्य निकाय के (पदेन सदस्यों से भिन्न) सदस्यों में सभी आकस्मिक रिक्तियां, यथाशीघ्र, ऐसे व्यक्ति या निकाय द्वारा भरी जाएंगी जो उस सदस्य को, जिसका स्थान रिक्त हुआ है, नियुक्त, निर्वाचित या सहयोजित करती है और आकस्मिक रिक्ति में नियुक्त, निर्वाचित या सहयोजित व्यक्ति, ऐसे प्राधिकारी या निकाय का सदस्य उस शेष अवधि के लिए होगा, जिस तक वह व्यक्ति, जिसका स्थान वह भरता है, सदस्य रहता ।

39. **प्राधिकारियों या निकायों की कार्यवाहियों का रिक्तियों के कारण अविधिमान्य न होना** – विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी या अन्य निकाय का कोई कार्य या कार्यवाही केवल इस कारण अविधिमान्य नहीं होगी कि उसके सदस्यों के बीच कोई रिक्ति या रिक्तियां हैं ।

40. **सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण** – इस अधिनियम या परिनियमों या अध्यादेशों के उपबंधों में से किसी उपबंध के अनुसरण में सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई वाद या अन्य विधिक कार्यवाहियां विश्वविद्यालय के किसी अधिकारी या अन्य कर्मचारी के विरुद्ध नहीं होगी ।

41. **विश्वविद्यालय के अभिलेख को साबित करने का ढंग** – भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकारी या अन्य निकाय की किसी रसीद, आवेदन, सूचना, आदेश, कार्यवाही, संकल्प या अन्य दस्तावेज की, जो विश्वविद्यालय के कब्जे में है, या विश्वविद्यालय द्वारा सम्यक् रूप से रखे गए किसी रजिस्टर की किसी प्रविष्टि की प्रतिलिपि, कुलसचिव द्वारा प्रमाणित कर दिए जाने पर, उस दशा में, जिसमें उसकी मूल प्रति पेश किए जाने पर साक्ष्य में ग्राह्य होती, उस रसीद, आवेदन, सूचना, आदेश, कार्यवाही, संकल्प या दस्तावेज के या रजिस्टर की प्रविष्टि के अस्तित्व के प्रथमदृष्ट्या साक्ष्य के रूप में ली जाएगी और उससे संबंधित मामलों और संव्यवहारों के साक्ष्य के रूप में ग्रहण की जाएगी ।

42. **कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति** – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, ऐसे उपबंध कर सकेगी जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों, और जो उस कठिनाई को दूर करने के लिए उसे आवश्यक या समीचीन प्रतीत हों :

परन्तु इस धारा के अधीन ऐसा कोई आदेश इस अधिनियम के प्रारम्भ से तीन वर्ष के अवसान के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस आदेश में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह आदेश नहीं किया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु आदेश के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

43. **परिनियमों, अध्यादेशों और विनियमों का राजपत्र में प्रकाशित किया जाना और संसद् के समक्ष रखा जाना** – (1) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक परिनियम, अध्यादेश या विनियम राजपत्र में प्रकाशित किया जाएगा ।

(2) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक परिनियम, अध्यादेश या विनियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस परिनियम, अध्यादेश या विनियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं, तो तत्पश्चात् वह परिनियम, अध्यादेश या विनियम ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह परिनियम, अध्यादेश या विनियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह परिनियम,

अध्यादेश या विनियम निष्प्रभाव हो जाएगा । तथापि, परिनियम, अध्यादेश या विनियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

(3) परिनियम, अध्यादेश या विनियम बनाने की शक्ति के अंतर्गत परिनियमों, अध्यादेशों या विनियमों या उनमें से किसी को उस तारीख से, जो इस अधिनियम के प्रारम्भ की तारीख से पूर्वतर न हों, भूतलक्षी प्रभाव देने की शक्ति भी होगी किन्तु किसी परिनियम, अध्यादेश या विनियम को भूतलक्षी प्रभाव इस प्रकार नहीं दिया जाएगा जिससे कि किसी ऐसे व्यक्ति के, जिसको ऐसा परिनियम, अध्यादेश या विनियम लागू हो, हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े ।

44. **संक्रमणकालीन उपबंध** – इस अधिनियम और परिनियमों में किसी बात के होते हुए भी, –

(क) प्रथम कुलाधिपति और प्रथम कुलपति, कुलाध्यक्ष द्वारा ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों पर, जो ठीक समझी जाएं, नियुक्त किए जाएंगे और उक्त प्रत्येक अधिकारी पांच वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि तक, जो कुलाध्यक्ष द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, पद धारण करेगा ;

(ख) प्रथम कुलसचिव और प्रथम वित्त अधिकारी, कुलाध्यक्ष द्वारा नियुक्त किए जाएंगे और उक्त प्रत्येक अधिकारी तीन वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा ;

(ग) प्रथम सभा और प्रथम कार्य परिषद् में क्रमशः इकतीस और ग्यारह से अनधिक सदस्य होंगे जो केन्द्रीय सरकार द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाएंगे और तीन वर्ष की अवधि तक पद धारण करेंगे ; और

(घ) प्रथम विद्या परिषद् में इक्कीस से अनधिक सदस्य होंगे जो केन्द्रीय सरकार द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाएंगे और वे तीन वर्ष की अवधि तक पद धारण करेंगे :

परन्तु यदि उपरोक्त पदों या प्राधिकारियों में कोई रिक्ति होती है तो वह, यथास्थिति, कुलाध्यक्ष द्वारा नियुक्ति या केन्द्रीय सरकार द्वारा नामनिर्देशन द्वारा भरी जाएगी और इस प्रकार नियुक्त या नामनिर्दिष्ट व्यक्ति तब तक पद धारण करेगा जब तक वह अधिकारी या सदस्य, जिसके स्थान पर उसकी नियुक्ति या नामनिर्देशन किया गया है, यदि ऐसी रिक्ति नहीं हुई होती तो, पद धारण करता ।

45. **1973 के मध्य प्रदेश अधिनियम 22 का संशोधन** – (1) मध्य प्रदेश विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 के मध्य प्रदेश अधिनियम 22 का संशोधन) की दूसरी अनुसूची में गुरू घासी दास विश्वविद्यालय और डा. हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय से संबंधित प्रविष्टियों का लोप किया जाएगा ।

(2) ऐसे लोप के होते हुए भी, –

(क) मध्य प्रदेश विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का मध्य प्रदेश अधिनियम 22) के अधीन की गई सभी नियुक्तियां, जारी किए गए आदेश, प्रदत्त की गईं उपाधियां और अन्य विद्या संबंधी विशेष उपाधियां, प्रदान किए गए डिप्लोमा और प्रमाणपत्र, स्वीकृत किए गए विशेषाधिकार या की गई अन्य बातें इस अधिनियम के तत्स्थानी उपबंधों के अधीन क्रमशः की गई, जारी किए गए, प्रदत्त की गई, प्रदान किए गए, स्वीकृत किए गए या की गई समझी जाएंगी और जैसा इस अधिनियम या परिनियम के अधीन अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे, जब तक कि वे इस अधिनियम या परिनियमों के अधीन किए गए किसी आदेश द्वारा अधिक्रांत नहीं कर दिए जाते हैं ; और

(ख) शिक्षकों की नियुक्ति या प्रोन्नति के लिए चयन समितियों की सभी कार्यवाहियां, जो इस अधिनियम के प्रारम्भ से पहले हो चुकी थीं और ऐसी चयन समितियों की सिफारिशों के संबंध में, कार्य परिषद् की सभी कार्रवाइयां, जहां इस अधिनियम के प्रारम्भ से पहले, उनके आधार पर नियुक्ति के कोई आदेश पारित नहीं किए गए थे, इस बात के होते हुए भी कि चयन के लिए प्रक्रिया का, इस अधिनियम द्वारा उपांतरण किया जा चुका है, विधिमान्य की गई समझी जाएंगी किन्तु ऐसे लंबित चयन के संबंध में आगे की कार्यवाही इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार होगी और उस प्रक्रम से जारी होगी जहां पर ऐसे प्रारम्भ होने के ठीक पहले थीं सिवाय तब के जब संबद्ध प्राधिकारी, कुलाध्यक्ष के अनुमोदन से तत्प्रतिकूल विनिश्चय लेते हैं ।

46. **1973 के राष्ट्रपति अधिनियम 10 का संशोधन** – (1) उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 में, –

(क) धारा 4 की उपधारा (1) में, "और गढ़वाल विश्वविद्यालय

का नाम, 25 अप्रैल, 1989 से हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर (जिला गढ़वाल) होगा," शब्दों, अंकों और कोष्ठकों का लोप किया जाएगा ;

(ख) धारा 20 की उपधारा (1) के खंड (घ) में, "हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय" शब्दों का लोप किया जाएगा ;

(ग) धारा 52 की उपधारा (2) में, "कुमायूं और गढ़वाल विश्वविद्यालय" शब्दों के स्थान पर, "कुमायूं विश्वविद्यालय" शब्द रखे जाएंगे ;

(घ) धारा 72ख का लोप किया जाएगा ;

(ङ) अनुसूची में क्रम सं. 8 और उससे संबंधित प्रविष्टियों का लोप किया जाएगा ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट ऐसे लोप और प्रतिस्थापन के होते हुए भी, –

(क) उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1973 (1973 का राष्ट्रपति अधिनियम 10) के अधीन की गई सभी नियुक्तियां, जारी किए गए आदेश, प्रदत्त की गई उपाधियां और अन्य विद्या संबंधी विशेष उपाधियां, प्रदान किए गए डिप्लोमा और प्रमाणपत्र, स्वीकृत किए गए विशेषाधिकार या की गई अन्य बातें इस अधिनियम के तत्स्थानी उपबंधों के अधीन क्रमशः की गई, जारी किए गए, प्रदत्त की गई, प्रदान किए गए, स्वीकृत किए गए या की गई समझी जाएंगी और जैसा इस अधिनियम या परिनियम के अधीन अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे, जब तक कि वे इस अधिनियम या परिनियमों के अधीन किए गए किसी आदेश द्वारा अधिक्रांत नहीं कर दिए जाते है ; और

(ख) शिक्षकों की नियुक्ति या प्रोन्नति के लिए चयन समितियों की सभी कार्यवाहियां, जो इस अधिनियम के प्रारम्भ से पहले हो चुकी थीं और ऐसी चयन समितियों की सिफारिशों के संबंध में, कार्य परिषद् की सभी कार्रवाइयां, जहां इस अधिनियम के प्रारम्भ से पहले, उनके आधार पर नियुक्ति के कोई आदेश पारित नहीं किए गए थे, इस बात के होते हुए भी कि चयन के लिए प्रक्रिया का, इस अधिनियम द्वारा उपांतरण किया जा चुका है, विधिमान्य की गई

समझी जाएंगी किन्तु ऐसे लम्बित चयन के संबंध में आगे की कार्यवाही इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार होगी और उस प्रक्रम से जारी होगी जहां पर ऐसे प्रारम्भ होने के ठीक पहले थीं सिवाय तब के जब संबद्ध प्राधिकारी, कुलाध्यक्ष के अनुमोदन से तत्प्रतिकूल विनिश्चय लेते हैं ।

47. **निरसन और व्यावृति** – (1) केन्द्रीय विश्वविद्यालय अध्यादेश, 2009 (2009 का अध्यादेश 3) इसके द्वारा निरसित किया जाता है ।

(2) ऐसे निरसन के होते हुए भी, उक्त अध्यादेश के अधीन की गई कोई बात या कोई कार्रवाई इस अधिनियम के तत्स्थानी उपबंध के अधीन की गई समझी जाएगी और, –

(क) केन्द्रीय विश्वविद्यालय अध्यादेश, 2009 (2009 का अध्यादेश 3) के अधीन की गई सभी नियुक्तियां, जारी किए गए आदेश, प्रदत्त की गई उपाधियां और अन्य विद्या संबंधी विशेष उपाधियां, प्रदान किए गए डिप्लोमा और प्रमाणपत्र, स्वीकृत किए गए विशेषाधिकार या की गई अन्य बातें इस अधिनियम के तत्स्थानी उपबंधों के अधीन क्रमशः की गई, जारी किए गए, प्रदत्त की गई, प्रदान किए गए, स्वीकृत किए गए या की गई समझी जाएंगी और जैसा इस अधिनियम या परिनियम के अधीन अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे, जब तक कि वे इस अधिनियम या परिनियमों के अधीन किए गए किसी आदेश द्वारा अधिक्रांत नहीं कर दिए जाते हैं ; और

(ख) शिक्षकों की नियुक्ति या प्रोन्नति के लिए, चयन समितियों की सभी कार्यवाहियां, जो इस अधिनियम के प्रारम्भ से पहले हो चुकी थीं और ऐसी चयन समितियों की सिफारिशों के संबंध में, कार्य परिषद् की सभी कार्रवाइयां, जहां इस अधिनियम के प्रारम्भ से पहले, उनके आधार पर नियुक्ति के कोई आदेश पारित नहीं किए गए थे, इस बात के होते हुए भी कि चयन के लिए प्रक्रिया का, इस अधिनियम द्वारा उपांतरण किया जा चुका है, विधिमान्य की गई समझी जाएंगी किन्तु ऐसे लम्बित चयन के संबंध में, आगे की कार्यवाही इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार होगी और उस प्रक्रम से जारी होगी जहां पर ऐसे प्रारम्भ होने के ठीक पहले थीं, सिवाय तब के जब संबद्ध प्राधिकारी, कुलाध्यक्ष के अनुमोदन से तत्प्रतिकूल विनिश्चय लेते हैं ।

पहली अनुसूची
[धारा 3(4) देखिए]

क्रम सं.	राज्य का नाम	विश्वविद्यालय का नाम	क्षेत्रीय अधिकारिता
(1)	(2)	(3)	(4)
[1][1.	बिहार	दक्षिण बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय	बिहार राज्य में गंगा नदी का दक्षिण राज्यक्षेत्र
1क.	बिहार	महात्मा गांधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय	बिहार राज्य में गंगा नदी का उत्तर राज्यक्षेत्र]
2.	गुजरात	गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण गुजरात राज्य
3.	हरियाणा	हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण हरियाणा राज्य
4.	हिमाचल प्रदेश	हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण हिमाचल प्रदेश राज्य
[2][5.	जम्मू-कश्मीर	कश्मीर केन्द्रीय विश्वविद्यालय	जम्मू-कश्मीर राज्य का कश्मीर खंड
5क.	जम्मू-कश्मीर	जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय	जम्मू-कश्मीर राज्य का जम्मू खंड]
6.	झारखंड	झारखंड केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण झारखंड राज्य
7.	कर्नाटक	कर्नाटक केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण कर्नाटक राज्य
8.	केरल	केरल केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण केरल राज्य
9.	उड़ीसा	उड़ीसा केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण उड़ीसा राज्य
10.	पंजाब	पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण पंजाब राज्य
11.	राजस्थान	राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण राजस्थान राज्य

[1] 2009 के अधिनियम सं. 38 की धारा 3 द्वारा प्रतिस्थापित ।
[2] 2014 के अधिनियम सं. 35 की धारा 3 द्वारा प्रतिस्थापित ।

12.	तमिलनाडु	तमिलनाडु केन्द्रीय विश्वविद्यालय	संपूर्ण तमिलनाडु राज्य

शेष अगले अंक में जारी.....

कार्यालय आदेश तारीख 13 फरवरी, 2017 के अनुसार विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों पर छूट देने की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम व प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पुस्तक की मुद्रित कीमत (रुपयों में)	7 वर्ष से पुराने संस्करण पर 35% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	8 से 15 वर्ष पुराने संस्करण पर 50% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	15 वर्ष से अधिक पुराने संस्करण पर 75% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)
1.	भारत का विधिक इतिहास - श्री सुरेन्द्र मधुकर - 1989	30	—	—	8
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि - डा. एन. वी. परांजपे - 1990	40	—	—	10
3.	वाणिज्य विधि - डा. आर. एल. भट्ट - 1993	108	—	—	27
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धांत - श्री शर्मन लाल अग्रवाल - 1993	40	—	—	10
5.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय - डा. एस. सी. खरे - 1996	115	—	—	29
6.	श्रम विधि - श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा - 1996	452	—	—	113
7.	संविदा विधि - डा. रामगोपाल चतुर्वेदी - 1998	275	—	—	69
8.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान - डा. सी. के. पारिख - 1999	293	—	—	74
9.	आधुनिक पारिवारिक विधि - श्री राम शरण माथुर - 2000	429	—	—	108
10.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) - विधि साहित्य प्रकाशन - 2000	225	—	—	57
11.	हिन्दू विधि - डा. रवीन्द्र नाथ - 2001	425	—	—	106
12.	भारतीय भागीदारी अधिनियम - श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ - 2001	165	—	—	41
13.	प्रशासनिक विधि - डा. कैलाश चन्द्र जोशी - 2001	200	—	—	50
14.	भारतीय दंड संहिता - डा. रवीन्द्र नाथ - 2002	741	—	—	185
15.	विधिक उपचार - डा. एस. के. कपूर - 2002	311	—	—	78
16.	विधि शास्त्र - डा. शिवदत्त शर्मा - 2005	580	—	290	—
17.	मानव अधिकार - डा. शिवदत्त शर्मा - 2006	120	—	60	—

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 47259/88

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की मासिक कीमत ₹ 195/- उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की मासिक कीमत ₹ 125/- और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की मासिक कीमत ₹ 125/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105